

प्रकाशक

विश्वम्भरनाथ

१४२ साउथ मलाका, इलाहाबाद

नवम्बर १९४१

मूल्य डेढ़ रुपया

मुद्रक

विश्वम्भरनाथ

विश्ववाणी प्रेस

साउथ मलाका, इलाहाबाद

अम्र लिखता है मैंने पैगम्बर से पूछा—“इस्लाम क्या है ?” उन्होंने जवाब दिया—“जवान को पाक रखना और मेहमान की खातिर करना ।” मैंने पूछा—“ईमान क्या है ?” उन्होंने जवाब दिया—“सत्र करना और दूसरों की भलाई करना ।”—अहमद

ज़रूरी बात

परिचित सुन्दरलाल जी कई साल से दुनिया के धर्म, मज़हब और कलचर पर एक बड़ी किताब लिख रहे हैं जो कई वजहों से अभी पूरी नहीं हो सकी। “हज़रत मुहम्मद और इस्लाम” उसी का एक छोटा सा हिस्सा है। कुछ दोस्तों के कहने पर और इसकी ज़रूरत को देखते हुए इसे अलग छापकर निकाला जा रहा है। इसकी बोली आसान रखी गई है कि सब समझ सकें। नागरी और उर्दू दोनों लिखावटों में यह एक ही बोली में छपी गई है।

यह किताब दोनों लिखावटों में हमारे यहाँ से मिल सकती है।

१४२ साउथ मलाका

इलाहाबाद

१५ नवम्बर, १९४१

विश्वम्भरनाथ

हज़रत मुहम्मद और इसलाम

| | | | |
|-------------------------------------|-----|-----|-----|
| १—अरबों का देश ... | ... | ... | १ |
| २—अरबों का रहन सहन ... | ... | ... | ४ |
| ३—अरबों का धर्म ... | ... | ... | १३ |
| ४—ग़ैरों की हकूमत ... | ... | ... | २७ |
| ५—मुहम्मद साहब का जन्म .. | ... | ... | ३० |
| ६—पहले २५ साल ... | ... | ... | ३२ |
| ७—गृहस्थी ... | ... | ... | ४० |
| ८—अल-अमीन ... | ... | ... | ४१ |
| ९—एकान्त में रहना ... | ... | ... | ४६ |
| १०—ईश्वर की आवाज़ .. | ... | ... | ५० |
| ११—मिशन शुरू ... | ... | ... | ५६ |
| १२—मुसीबतों के तेरह साल ... | ... | ... | ५७ |
| १३—मदीने में राजा की हैसियत से ... | ... | ... | ८३ |
| १४—इसलाम फैलाने का तरीका ... | ... | ... | ९१ |
| १५—मदीने पर कुरैश के हमले ... | ... | ... | ९८ |
| १६—इसलाम के कुछ उपदेश देने वाले ... | ... | ... | १०७ |

| | | | |
|----------------------------------|-----|-----|---------|
| १७—देश-दगा की सज़ा | ... | ... | ११६ |
| १८—हुदैबियाह की सुलह | ... | ... | १२५ |
| १९—मक्के की दूसरी यात्रा | ... | ... | १२८ |
| २०—यहूदियों और मुसलमानों में मेल | ... | ... | १३१ |
| २१—रोम वालों से लड़ाई और जीत | ... | ... | १३३ |
| २२—मक्के की जीत | ... | ... | १४१ |
| २३—‘तई’ क़बीले का मुसलमान होना | ... | ... | १५२ |
| २४—मक्के की आख़री यात्रा | ... | ... | १५५ |
| २५—इसलामी हकूमत | ... | ... | १६० |
| २६—पैग़म्बर की शादियां | ... | ... | १६३ |
| २७—आख़री दिन | ... | ... | १७३ |
| २८—पैग़म्बर का रहन सहन | ... | ... | १८४ |
| २९—इसलाम धर्म का निचोड़ | ... | ... | १९१ |
| ३०—उपदेश और प्रार्थनाएं (दुआएं) | ... | ... | २०० |
| ३१—यूरोप वालों की कुछ रायें | ... | | २१९-२२४ |

1 6 2 1



अरब के रेगिस्तान में शाम की नमाज़

अरबों का देश

हज़रत मोहम्मद का जन्म अरब देश में हुआ था ।

यह देश हिन्दुस्तान से पच्छिम में एशिया के दक्खिन-पच्छिम के कोने में है । उसके तीन तरफ पानी है । पूरव में फिरात नदी और उसके बाद ईरान की खाड़ी, दक्खिन में हिन्द महासागर और पच्छिम में लाल समुद्र । उत्तर में कुछ दूर तक रूम सागर है और फिर शाम (सीरिया) का देश जो तुर्की से मिला हुआ है । लाल समुद्र अरब को अफ्रीका के पुराने देशों मिस्र और इथियोपिया से अलग करता है और ईरान की खाड़ी अरब को ईरान से अलग करती है । बम्बई और कराची के बन्दरगाहों से अरब एक हजार मील से कम है । अरब का मशहूर बन्दरगाह अदन, जिसे यूरोप से आने वालों के लिये हिन्द महासागर का मोहाना कहा जा सकता है, (१६४० में) अंगरेजों के कब्जे में है ।

अरब की लम्बाई उत्तर से दक्खिन तक करीब १५०० मील और चौड़ाई पूरव से पच्छिम तक इसकी लगभग आधी है । फैलाव हिन्दुस्तान के आधे से कुछ ज्यादा है लेकिन आवादी मुशकिल से हिन्दुस्तान का पचासवां हिस्सा ।

वात यह है कि अरब का बड़ा हिस्सा, खास कर बीच का, एक बहुत बड़ा रेगिस्तान है जिसमें कहीं कहीं सैकड़ों मील तक पानी या हरियाली का निशान तक नहीं मिलता। कहीं कहीं बीच बीच में और खास कर किनारों के आस पास ऊंची पहाड़ियाँ और हरी भरी घाटियाँ हैं जिनमें किसी किसी जगह तरह तरह के नाज और क़ह्वे के अलावा सेब और नाशपाती, अंजीर और बादाम, अनार और अंगूर जैसे फल भी बढ़िया और बहुतायत के साथ होते हैं। लेकिन अरब का खास मेवा खजूर है जिसकी दुनिया में कहीं इतनी क़िस्में नहीं होतीं जितनी अरब में। वहाँ के खास जानवर ऊँट, घोड़े और गधे हैं। अरब के बराबर तेज़ और उम्दा घोड़े दुनिया में और कहीं नहीं होते और वहाँ के गधे भी खूबसूरत, ऊँचे और तेज़ चलने वाले होते हैं।

यूरोप और दूसरे मुल्कों से आने वाले लोग अरब की आवोहवा की खुले दिल से तारीफ़ करते हैं। यहां तक कि श्रेङ्गर नामी एक विद्वान, जो यूरोप के सब से ऊँचे पहाड़ अल्प्स का रहने वाला था, लिखता है कि अल्प्स या हिमालय दोनों में से किसी की आवोहवा इतनी ज़्यादा ताक़त और जीवन देने वाली नहीं है जितनी अरब के रेगिस्तान की।¹ कहा जाता है कि सिकन्दर ने अरब की आवोहवा से खुश होकर हिन्दुस्तान से

1 "Mohammad and Mohammadanism" by R. Bosworth Smith, P. 87.

लौटने पर अरब को जीतने और वहीं अपनी राजधानी कायम करने का इरादा किया था लेकिन मौत ने उसे वहां तक पहुँचने न दिया । २

अरबों का रहन सहन



मोहम्मद साहब के जीवन और उनके कामों को बयान करने से पहले यह ज़रूरी है कि हम उनसे ठीक पहले के अरबों की हालत और उनके चलन पर भी एक निगाह डाल लें।

मोहम्मद साहब से पहले इस बात का पता नहीं चलता कि उस सारे देश पर कभी भी किसी एक राजा की हुकूमत रही हो।

कई छोटी छोटी बादशाहतें देश के अलग अलग हिस्सों में कभी कभी कायम हुईं और छठी सदी में भी मौजूद थीं। इनमें से कई बादशाहतें कई कई सदी तक रहीं। इनमें कोई कोई विल्कुल आज़ाद होती थीं और कोई पास के किसी विदेशी राज के मातहत होती थीं। लेकिन सारा अरब छठी सदी से पहले कभी किसी एक देशी या विदेशी ताक़त के क़ब्ज़े में नहीं रहा। इसी लिये राजकाज के ख़याल से उस से पहले अरब को एक राज या एक क़ौम नहीं कहा जा सकता था।

अरब और खास कर अरब का वह बीच का हिस्सा जिसे हेजाज़ कहते हैं, जिसमें मक्का और मदीना के मशहूर शहर हैं

और जो सदियों से किसी एक राजा या हाकिम के मातहत न रहा था, मोहम्मद साहब के वक्त तक सैकड़ों क़बीलों में बंटा हुआ था, जिसमें से एक एक कबीले की कई कई शाखें और उनमें कभी कभी सैकड़ों घराने और कई कई हजार मर्द, औरत और बच्चे मिलकर एक बहुत बड़े कुनवे की तरह रहते थे। हर कुनवे के सब नर नारी आपस में प्रेम और भाईचारे की डोरी में बंधे रहते थे। सब एक दूसरे का बचाव करना अपना फर्ज समझते थे। एक दूसरे के लिये बड़ी से बड़ी कुरबानी करने में अपना बड़प्पन मानते थे। क़बीले के अन्दर सब की चीज़ें खुली पड़ी रहती थीं और कभी चोरी न होती थी। क़बीले के लोगों में से किसी एक की बेइज्जती सारे क़बीले की बेइज्जती समझी जाती थी, और कबीले की आन का खयाल इन लोगों में इतना बड़ा हुआ था कि इनकी सब आपस की लड़ाइयों या उनकी सुलह की वही जड़ बुनियाद होती थी।

हर कबीले का एक सरदार होता था जिसे 'शेख' कहते थे। क़बीले के सब कुटुम्बों के मुखियों की राय से शेख का चुनाव होता था। शेख ही अपने क़बीले का हाकिम, कबीले के नौजवानों का जरनैल और धर्म के मामलों में सारे क़बीले का गुरु और पुरोहित होता था।

हर कबीले में आपस का प्रेम, क़बीले की आन का खयाल, सरदार का कहना मानना, ये सब भलाइयाँ इन लोगों में मौजूद थीं। बाहर वालों या दूसरे कबीले वालों के साथ में भी अपने दबन

को पूरा करने, मेहमान की खातिर करने और जिस की बांह पकड़ली उस के साथ टेक निवाहने में अरब हमेशा से मशहूर थे। अलग अलग कबीलों के लोगों के रहन सहन, उनके रस्म रिवाज, उनकी बोली और उनके मज़हबी खयाल भी काफी मिलते जुलते थे। लेकिन ये सब कबीले न किसी एक डोरी में बंधे हुए थे और न इन सब का कोई एक राजा था।

इतना ही नहीं, बल्कि सारे हेजाज़ में और एक दरजे तक सारे अरब में इन अनगिनत कबीलों की एक दूसरे के साथ आए दिन लड़ाइयां होती रहती थीं। इन लड़ाइयों का एक सबब यह था कि हर कबीले को अपनी नसल के बढ़प्पन का बेहद घमण्ड था और अगर किसी कबीले के एक आदमी ने दूसरे कबीले के किसी आदमी के सामने अपनी नसल की बढ़ाई का बखान कर दिया और दूसरे से न सहा गया तो दोनों तरफ से तलवारें खिंच जाती थीं। दूसरा सबब इससे मिलता जुलता यह था कि अगर एक कबीले के किसी आदमी ने दूसरे कबीले के किसी आदमी की बेइज़्जती कर दी या उसे मार डाला—और ये आए दिन की बातें थीं—तो फिर सारे कबीले की तरफ से बदला और फिर बदले का बदला कई कई पीढ़ियों और कभी कभी कई कई सदियों तक जारी रहता था, जिसमें दोनों तरफ से सैकड़ों जानें जाती थीं।

उस ज़माने के अरब यह मानते थे कि जब कोई आदमी मार डाला जाता है तो उसकी आत्मा एक चिड़िया बन कर

बरसों उसकी क़त्त के आस पास मंडराती रहती है, और “औस्कूनी ! औस्कूनी !” चिल्लाती रहती है, जिसका मतलब है—“मुझे पीने को दो ! मुझे पीने को दो ! और जब तक मारने वाले का न उसे पीने को खून मिले और हत्या का बदला न लिया जावे, तब तक वह इसी तरह चिल्लाती रहती है। इसी लिये अपने क़बीले के किसी आदमी या किसी पुरखे की हत्या का बदला लेना हर अरब अपना धर्म समझता था।

इन घरेलू लड़ाइयों में जो मर्द औरत या बच्चे क़ैद कर लिये जाते थे वे गुलामों की तरह रखे जाते थे। गुलामों के साथ इन लोगों का सलूक बहुत ही बुरा था। जानवरों की तरह बाज़ारों में वह बेचे जाते थे। किसी गुलाम को मार डालने की कहीं कोई सज़ा न थी। गुलाम औरतों को अक्सर नाचना गाना सिखाया जाता था और फिर उनके साथ बाज़ारी औरतों जैसा बर्ताव होता था और कभी कभी इनका मालिक उनसे पेशा करा कर पैसा कमाता था।

ऐसी हालत में अलग अलग क़बीलों में प्रेम, मेल या एके की आस करना और भी कठिन था।

औरतों के साथ तब के अरबों का बर्ताव बहुत ख़राब था। पुराने राजपूतों की तरह उस ज़माने के अरब किसी को अपना दामाद मानना, या लड़की का बाप होना अपने लिये बहुत बड़ी शर्म की बात समझते थे। लड़कियों को ज़िन्दा गाढ़ देने का

रिवाज आम था। कहीं कहीं तो जब किसी औरत के वच्चा होने को होता था तो वहीं उसके पास एक गढ़ा खोद दिया जाता था। अगर लड़का पैदा हुआ तो उस गढ़े को योंही पूर दिया जाता था, और अगर लड़की हुई तो उसे उसी गढ़े में डालकर ऊपर से मिट्टी भर दी जाती थी। कहीं कहीं जब लड़की पांच छै वरस की हो जाती थी तो एक दिन उसका बाप उसकी माँ से आकर कहता था,—“अपनी बेटी को नए नए कपड़े पहना कर उसे खुशबू लगा दो तो मैं उसे उसकी माँओं के पास पहुँचा आऊँ।” इसके बाद वह लड़की को आवादी से बाहर एक गढ़े तक लेजाता था। लड़की को गढ़े के सिरेपर खड़ा कर नीचे झाँकने को कहता था और फिर अचानक उसे धक्का देकर गढ़े में ढकेल देता था और अपने हाथ से मिट्टी पूर देता था। अरबों में उन दिनों एक कहावत मशहूर थी कि—“सबसे अच्छा दामाद कज़्र है।”

मालूम होता है कि इस रिवाज का तीखापन कभी कभी अरबों के दिलों में भी चुभन पैदा कर देता था। कहा जाता है कि एक अरब उसमान नामी की आँखों से ज़िन्दगी भर में सिर्फ़ एक बार आंसू टपकते हुए दिखाई दिये, जब कि उसकी उस भोली भाली लड़की ने जिसे वह ज़िन्दा गाड़ने के लिये ले गया था अपने बाप की दाढ़ी पर गढ़े की गर्द लगी देखकर उसे अपने नन्हे हाथों से पोछना चाहा था।

मां बाप की जायदाद में लड़कियों का कोई हिस्सा न रहता था। बल्कि जब कोई आदमी मरता था तो उसकी और सब मिलकीयत के साथ साथ उसकी वीवियां भी उसके वारिस की मिलकीयत मानी जाती थीं। इस घुरे रिवाज के सबब सौतेली माँओं के साथ शादी का उन दिनों अरबों में रिवाज मौजूद था। एक आदमी की एक साथ कई कई वीवियां और एक औरत के एक साथ कई कई मर्द ये दोनों रिवाज भी थे। और इनकी तादाद की कोई रोक थाम न थी। शादी के तरह तरह के रिवाज थे। व्याह का बन्धन धर्म का बन्धन न माना जाता था। आदमी जब चाहे अपनी औरत को तलाक दे सकता था छोड़ सकता था। इस तरह छोड़ी हुई औरत किसी दूसरे के साथ व्याह कर सकती थी। एक औरत उम्म ख़र्रिजा का जिक्र इन दिनों मिलता है जिसने एक दूसरे के बाद चालीस आदमियों के साथ व्याह किया। आम बदचलनी को ये लोग अपने लिये एक घमण्ड की चीज़ समझते थे और अपनी बदचलनियों का बेशर्मी के साथ खुले बखान करते थे।

खजूर के दरख्तों की अरब में कमी न थी। इस लिये शराब का रिवाज इतना बढ़ा हुआ था कि बहुत शराब पीने से लोगों की अकसर मौतें हो जाती थीं। जुए और शराब का जोड़ है ही। कोई कोई अरब जुए में अपना सब कुछ हारने के बाद अपने जिस्म तक की बाज़ी लगा देते थे और अगर हार जाते थे तो हमेशा के लिये जीतने वाले के गुलाम हो जाते थे।

मक्का और उसके आस पास के कुछ क़बीले सैकड़ों वरस से तिजारत करते आते थे और इसी से अपना पेट पालते थे। मदीना और कुछ दूसरी जगह के लोग थोड़ी बहुत खेती बाड़ी भी करते थे। हेजाज़ से बाहर के कुछ हिस्सों में भी कहीं कहीं तिजारत या खेती बाड़ी होती थी। लेकिन अरबों का आम धन्धा सिर्फ़ ऊंट, बकरियाँ और घोड़े बग़ैर चराना था। दूसरे क़बीले वालों को या रेगिस्तान से जाते हुए तिजारती क़ाफ़लों को लूट लेना ये लोग अपना हक़ समझते थे। दो चार शहरों को छोड़ कर बाकी क़रीब क़रीब सारे अरब के लोग उठाऊ चल्हों की तरह खेमों में रहते थे। मौसम बदलने के साथ साथ या पानी का आराम देख कर ये लोग अपनी जगह बदलते रहते थे। खेती करके एक जगह जम कर रहने या तिजारत करने को ये बुरा समझते थे। इस तरह के जीवन में किसी तरह की कारीगरी या धन्धे तरक्की कर ही नहीं सकते। लेकिन इस तरह के जीवन और आए दिन की लड़ाइयों ही के सबब ये लोग आम तौर पर बड़े बहादुर और अपने घोड़ों की तरह फुरतीले होते थे और इनका रहन सहन बेहद सादा होता था।

मालूम होता है शुरू से ही इन्हें यह बात भी खटक गई थी कि आए दिन की लड़ाइयों और लूट मार में कुछ दिन ऐसे भी होने चाहियें जब वे अपनी घरेलू लड़ाइयों को कुछ अरसे के लिये बन्द कर उतने अरसे तक निडर और बेफ़िकर होकर एक दूसरे के साथ मिल बैठ सकें। मोहम्मद साहब के बहुत पहले से

साल में चार महीने इस बात के लिये छुटे हुए थे कि उन चार महीनों में सब क़बीलों के आपस के झगड़े, हत्या के बदले और लूट मार विलकुल बन्द रहा करें। आमतौर पर सब क़बीलों के लोग इस बात को ईमानदारी के साथ मानते और निवाहते थे।

इन चार महीनों के अन्दर ही अरब के सब लोग मक्का आकर काबे की यात्रा करते थे, जो मोहम्मद साहब से हजारों साल पहले से तमाम अरबों का सब से बड़ा मन्दिर और सब से बड़ा तीर्थ माना जाता था। इन चार महीनों के अन्दर ही उक्काज़ और मुजन्ना के दो मशहूर मेले होते थे जिनमें तमाम क़बीलों के लोग जमा होकर, कहीं अपने अपने लड़ाई के कैदियों का बदलाव करते थे, कहीं माल खरीदते बेचते थे, कहीं अपने देवताओं की पूजा करते थे और कहीं छोटे मोटे मुशाघरे (कवि सम्मेलन) करते थे। लिखने का रिवाज अरबों में मोहम्मद साहब के पहले बहुत कम था, फिर भी शायरी करने का उन्हें शुरू से बड़ा चाव था। हर क़बीले में ऐसे शायर या तुरत कवि होते थे जिनकी छोटी छोटी कविताएं या तुक बन्धियां सैकड़ों साल तक एक से दूसरे को ज़्यादा पहुँचनी रहती थीं। इस तरह के आज़ाद और लड़ाका लोगों के लिये चार महीने तक अपने दुश्मनों, अपने दाप, बेटे या भाई के हत्यारों, को सामने से निकलते देखते रहना और अपने गुन्मे को कायू में रखना, जबकि कोई दूसरा उन्हें रोकने दवाने या सज़ा देने वाला

नहीं था, यह बताता है कि अरबों में अपने आपको रोकने और वचन निवाहने की ताक़त मौजूद थी। लेकिन साथ ही चार महीने की रोक थाम इस बात को भी ज़ाहिर करती है कि वाक़ी आठ महीनों में क्या हालत रहती होगी, और इसमें शक नहीं कि इन चार महीनों की रोक थाम के सबब आठ महीने तक लड़ाइयों और बदले की आग और भी ज़ोरों के साथ भड़कती होगी।

अरबों का धर्म

धर्म के मामले में भी उन दिनों अरबों के दिल बहुत छोटे और उनके खयाल बहुत तंग थे। जो धर्म देश में जारी थे उन्होने देश की हालत को और भी बिगाड़ रखा था। इनमें तीन खास थे—पुराना अरब धर्म, यहूदी धर्म और ईसाई धर्म। ईरान और वहां के ज़रथुस्त्री धर्म के साथ भी अरबों का सन्धियों से लगाव था, उनकी जिन्दगी पर उसका तरह तरह से असर भी था। लेकिन अरबों ने बहुत ज्यादा तादाद में कभी उस धर्म को नहीं माना। कुछ लोग 'सावी' धर्म के भी मानने वाले थे जो एक परमेश्वर को मानते हुए भी सितारों वगैरह की पूजा करते थे।

थोड़े से कबीलों को छोड़कर जिन्होंने यहूदी या ईसाई वगैरह धर्म अपना लिये थे बाक़ी सब अरब अपने पुराने धर्म को ही मानते थे। दुनिया के और पुराने लोगों की तरह वे बहुत से देवी देवताओं को मानते और उन्हीं की पूजा करते थे।

हर कबीले का अपना एक अलग देवता होता था, कोई लकड़ी का, कोई पत्थर का, कोई पीतल का, कोई ताम्र का और

कोई गुंदे हुए आटे का । किसी देवता की शक्ल आदमी की होती थी, किसी की औरत की, किसी की किसी जानवर की, किसी की पेड़ की, और कोई बिल्कुल अनगढ़ था । जब दो क़बीलों में लड़ाई होती थी तो वह उनके देवताओं की भी लड़ाई समझी जाती थी और कभी कभी ये लोग आदमियों की तरह दूसरों के देवता को भी कैद करके ले आते थे । देश भर में इन अनगिनत देवी देवताओं की पूजा ठीक उसी तरह होती थी जिस तरह दुनिया की दूसरी पुरानी क़ौमों में । इन देवताओं के सामने जानवरों की बलि (कुरवानी) भी दी जाती थी । किसी किसी देवता के सामने आदमी की भी बलि दी जाती थी । और कोई कोई तो अपने हाथ से अपने बेटों को काट कर अपने देवताओं के सामने चढ़ा देते थे । बहुत से ऐसे देवता भी थे जिन्हें कई कई क़बीले या क़रीब क़रीब सब अरब मानते और पूजते थे । इनमें सबसे मशहूर तीन देवियाँ थीं जिनके नाम 'लात' 'उज़्ज़ा' और 'मनात' थे । इनके अलग अलग मन्दिर थे । इसी तरह के और भी कई देवी देवताओं के नाम उस ज़माने की किताबों में मिलते हैं । कावे के अन्दर भी साल के ३६० दिन के ३६० देवता थे जिनमें सब से बड़ा 'होवल' नाम का एक देवता था । इन देवताओं के अलावा हज़ारों अरब सूरज, चांद और कई खास खास तारों की भी पूजा करते थे, जिनसे उन्हें दिनमें गरमी मिलती थी और रात को रास्ते का पता चलता था ।

इन हज़ारों देवी देवताओं के अलावा सब के मालिक एक परमात्मा के मन्दिर का कहीं जिक्र नहीं आता। ज्यादातर अरबों का खयाल इन देवी देवताओं से ऊपर न उठ सकता था। लेकिन इस बात का भी पता चलता है कि उनमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो सब देवताओं से ऊपर सब के मालिक एक परमात्मा को भी मानते थे, जिसे वे 'अल्लाह ताला' कहते थे और यह मानते थे कि उनके अपने देवी देवता उसी 'अल्लाह ताला' के नीचे दुनिया का सारा काम चलाते हैं और परलोक (दूसरी दुनिया) में अपने पूजने वालों की अल्लाह ताला से सिफारिश कर सकते हैं।

कुछ अरबों में एक रिवाज यह भी था कि जब कोई आदमी मरता था तो एक ऊंटनी उसकी कब्र के पास बांध दी जाती थी। उस वहाँ बिना दाना पानी मरने दिया जाता था, जिससे मरने वाले को परलोक में सवारी की दिक्कत न हो। इस ऊंटनी को वे 'बलियह' कहते थे।

थोड़े से मे यही अरबों का पुराना धर्म था।

अब रहे यहूदी और ईसाई धर्म। ये दोनों भी मोहम्मद साहब से सदियों पहले अरब पहुँच चुके थे।

ईसा की पहली सदी में रोम के सम्राट (शहंशाह) टाइटस ने यहूदियों को फिलस्तीन से निकाल दिया था। इन्हीं तरह तीसरी सदी में बहुत से ईसाई आपसी झगड़ों की वजह से शाम (सीरिया) और दूसरे मुल्कों से निकाले जा चुके थे।

अरब के लोग इस मामले में बड़े दिल वाले थे। वे अपने यहां सब धर्म वालों को खुशी से आने देते थे। हज़ारों यहूदी और ईसाई अरब में आकर बस गए। एशिया के इन दोनों धर्मों का जन्म भी अरब की उत्तर की सरहद पर हुआ था। ये दोनों धर्म भी थोड़े बहुत अरब में फैले। कुछ क़बीलों ने इस धर्म को और कुछ ने उस धर्म को अपना लिया।

मालूम होता है दूसरे धर्मों के देवी देवताओं को अपने देवी देवताओं में शामिल कर लेने का भी अरबों में रिवाज था। जिन अरबों ने इन नए धर्मों में से किसी एक को पूरी तरह नहीं अपनाया वे भी इन दोनों के साथ काफ़ी अपनापन जताते थे। बहुत से अरब हज़रत इबराहीम को जिन्हें यहूदी और ईसाई दोनों पैग़म्बर मानते थे, अपना ही पुरखा बताते थे और इबराहीम के बेटे इसमाईल से अपना निकास बताते थे। कावे में दूसरी मूर्तियों के साथ साथ इबराहीम और इसमाईल के भी बुत मौजूद थे, और उनकी भी पूजा होती थी। ईसाइयों के पहुंचने के बाद हज़रत ईसा की माँ मरियम की एक मूर्ति भी कावे में रख ली गई और उसकी भी पूजा होने लगी। लेकिन यहूदी लोग उन दिनों इतने घमण्डी और तंग ख़याल होते थे और ईसाई धर्म इतनी गिरी हुई हालत को पहुंच चुका था और साथ ही इन दोनों धर्मों में आपसी लाग डाट इतनी बढ़ी हुई थी कि इनका असर अरबों के जीवन पर अच्छा न पड़ सका।

इन दोनों में से कोई इस बात को मानने के लिये तय्यार न था कि उसके अपने मत या जत्थे से बाहर किसी भी आदमी की, चाहे वह कितना ही नेक क्यों न हो, मरने के बाद अच्छी हालत हो सकती है।

यहूदी एक ईश्वर और बहुत से पैगम्बरों के अलावा एज़रा को खुदा का बेटा मानते थे। छुआछूत, खानेपीने के फरक और निराले कायदों में अगर दुनिया के किसी मज़हब के रिवाज आजकल के हिन्दू रिवाजों से मिलते हैं तो वह पुराने यहूदी धर्म के। दूसरे सब धर्मों के लोगों को वे अपने से नीचा और नापाक मानते थे, उनकी छुई हुई कोई चीज़ न खाते थे, न उनका छुआ पानी पीते थे, और न उन्हें अपने यहां खिना-पिला या इज़्ज़त से बैठा सकते थे। यही यहूदियों की सब से खास बात थी। उनके रस्म रिवाज और पूजा के तरीके बड़े पेचीदा थे। इन बातों को छोड़ कर अगर उनमें कोई और खास बात थी तो वह साहूकारे और सूदखोरी ने पैसा कमाना, पैसा जमा करना और इस तरह की कंज़ूसी बरतना जो वेपैने-वाले पर दिलवाले रेगिस्तानी अरबों को कभी पसन्द न आ सकती थी।

ईसाई धर्म यहूदी धर्म के बाद का था, और उन दिनों के लिए ज्यादा ठीक था। यह ईसाई धर्म इसीलिए दुनिया में आया था कि यहूदियों से जो निकम्मे और बेनाइने रस्म रिवाज चल पड़े थे, और लकीर की फकीरी बढ़ती जा रही थी, उन्हें रत्न

करके लोगों के दिलों को धर्म की फ़िज़ूल रस्मों से हटाकर उन्हें एक दूसरे की सेवा और भलाई के कामों की तरफ़ लगाया जावे। शुरू में ईसाई धर्म यहूदी धर्म ही की एक शाख़ समझा जाता था और यहूदी धर्म का सुधार उसकी गरज़ थी। लेकिन मोहम्मद साहब के जन्म तक ईसाई धर्म की जो गति हो चुकी थी वह यहूदी धर्म की उन दिनों की हालत से किसी तरह कम बुरी न थी।

हज़रत ईसा के कुछ दिनों बाद से ही ईसाई लोग एक तरह की त्रिमूर्ति (Trinity, तसलीस) की पूजा करने लगे थे। इस त्रिमूर्ति में आत्म तौर पर बाप (ईश्वर), बेटा (ईसा) और पवित्रात्मा (वह मानी हुई रूह जिसके ज़रिये कहा जाता था कि हज़रत ईसा की माँ कुमारी मरियम को पेट रहा था) ये तीन गिने जाते थे। लेकिन कुछ लोग ईश्वर, ईसा और मरियम की भी त्रिमूर्ति मानते थे। ईसाई मत की जो शाख़ (कॉलीरी-डियन्स) अरब में ज़्यादा फैली हुई थी वह ईश्वर, मरियम और ईसा की ही त्रिमूर्ति मानती थी।

ईसाई गिरजे ईसा, मरियम, सैकड़ों सन्तों, फ़रिश्तों और ईसाई शहीदों के वुतों से भरे रहते थे। मरियम को 'ईश्वर की माँ' कह कर उसकी पूजा की जाती थी। ईश्वर, ईसा और मरियम तीनों एक बराबर माने जाते थे और इनके साथ साथ बहुत से ईसाई सन्तों को भी इन्हीं की तरह सब जगह मौजूद, सब कुछ जानने वाले और जो चाहे कर सकने वाले माना जाता

था। इन सब के बुतों के सामने मन्त्रें मानी जाती थी और चढ़ावे चढ़ाए जाते थे। यही उस ज़माने के ईसाइयों की रीज की पूजा थी।

वहमों की यह हालत थी कि यरुसलम शहर में लकड़ी का वह क़ूश (सलीव) अभी तक दिखाया जाता था जिस पर, कहा जाता था कि, महात्मा ईसा को सूली दी गई थी। इस छोटे से क़ूश की सूखी लकड़ी बराबर बढ़ती रहती थी। हर ईसाई यात्री यरुसलम से लौटते हुए उस क़ूश का एक टुकड़ा अपने साथ ले आता था। आम आदमी उस टुकड़े को अपने घरों में रख कर उसकी पूजा करते थे और हज़ारों टुकड़े दुनिया भर के गिरजों में रखकर पूजे जाते थे। यरुसलम के पादरियों के लिये यह काफी आमदनी का ज़रिया था। लिखा है कि धीरे-धीरे सिर्फ यूरोप ही के हज़ारों गिरजों में इस क़ूश ने इतनी लकड़ी जमा हो गई कि उससे सैंकड़ों नए क़ूश तय्यार हो सकते थे। लोगो को यक़ीन था कि इस क़ूश की लकड़ी तरह-तरह की क़रामात कर सकती थी और सब बीमारियों को अच्छा कर सकती थी। इसी तरह मरियम और ईसाई सन्तों की मूर्तियों से भी हर गिरजे में सैंकड़ों क़रामातें होती आये दिन दिखाई जाती थी।

दुनिया में ईसाई राज की सब से बड़ी जगह उन दिनों रोम के सम्राट (शहनशाह) की राजधानी, कुन्तुनतुनिया थी। कुन्तुनतुनिया, सिकन्दरिया और रोम इन तीन शहरों

के लाट-पादरी (विशप) ईसाई धर्म के सबसे बड़े महन्त गिने जाते थे । इन लाट-पादरियों की राय से क्रुस्तुनतुनिया के सम्राट की तरफ से सारी दुनिया के ईसाइयों के नाम यह हुकुम जारी कर दिया गया था कि किसी भी बीमारी में दवाओं से इलाज करना, जैसा पुराने यूनानी करते थे, ईश्वर से इनकार करना है और पाप है, और ईसाइयों को इलाज के लिये गिरजे के बुतों और पादरियों के पास जाकर दुआएं मांगना चाहिये और इनसे भाड़ फूंक और गण्डे तावीज़ कराना चाहिये । रोम के ईसाई सम्राटों का जहां जहां हुकुम चलता था वहां वहां दवाओं से किसी का इलाज करने वाले वैद्य हकीम तक को मौत की सज़ा दी जाती थी ।

ईसाई पादरियों में इस तरह की बातों पर लम्बी लम्बी चहसें होती थीं, जो कभी कभी पीढ़ियों चलती थीं, कि हज़रत ईसा में ईश्वर का हिस्सा कितना था, जैसे, ईश्वर अजर अमर है यानी न कभी बूढ़ा होता है न मरता है, ऐसे ही हज़रत ईसा अजर और अमर हैं या नहीं, मरियम को 'ईसा की माँ' कहना चाहिये या 'ईश्वर की माँ' और अगर हज़रत आदम गुनाह न करते तो कभी मरते या न मरते ? इन्हीं बातों को लेकर बहुत से अलग अलग दल खड़े हो गए । जब जिस दल का जोर होता था या क्रुस्तुनतुनिया के सम्राट की तरफ से जिसे ठीक मान लिया जाता था, उसके खिलाफ़ दल वालों को अधर्मी (हेरेटिक)

कह कर देश निकाला, तरह तरह की तकलीफें और मौत की सजा तक मेलनी पड़ती थी।

सिकन्दरिया के एक विद्वान पादरी एरियस को सिर्फ इस बात पर देश निकाले की सजा दी गयी कि एरियस कहता था कि,—“हज़रत ईसा ईश्वर के बेटे हैं, इस लिए एक ज़माना ऐसा ज़रूर था जब ईश्वर था लेकिन हज़रत ईसा नहीं थे, इसीलिये हज़रत ईसा को ईश्वर के बराबर नहीं माना जा सकता,” इसी गुनाह में पहले एरियस को देश निकाले की और फिर आख़ीर में मौत की सजा मेलनी पड़ी। रोम के सारे राज में यह हुक्म जारी कर दिया गया कि जिस किसी को एरियस की कोई किताब कहीं से मिल जावे, वह अगर उस किताब को तुरन्त जला न डाले तो उस आदमी ही को मार डाला जावे।

एक विद्वान ईसाई साधु पिलेगियस ने सिर्फ यह कह दिया था कि—“आदम पैदा हुए थे तो गुनाह करने या न करने मरने ज़रूर, जन्म से सब आदमी आदम ही की तरह दंगुनाह होते हैं, सब अपने अपने भले बुरे कामों का फल पाते हैं, आदम के कामों का नहीं, और पापों को धोने के लिये नैऋतानों की ज़रूरत है, सिर्फ़ बपतिस्मे के पानी से पाप नहीं धुल सकते,” इतने ही पर पिलेगियस की और उन सब लोगों की जो पिलेगियस की राय को ठीक कहते थे, जायदादें ज़ब्त करके उन सब को रोम के राज से बाहर निकाल दिया गया।

शाम के एक मशहूर पादरी नेस्तोरियस ने कहा कि मरियम को 'खुदा की माँ' कहना ठीक नहीं 'हज़रत ईसा की माँ' कहना चाहिये। तुरत ईसाई महन्तों में दो दल हो गए। पहले वहसें हुई, फिर वलवे और वाद में खूब खून बहा। आखिर 'खुदा की माँ' वाला दल जीता। नेस्तोरियस को रोम के सम्राट के हुकुम से पहले देश निकाला देकर अफ़रीका भेज दिया गया और फिर वहां मौत से पहले उसकी "नापाक ज़वान" काट डाली गई।

यूरोप का एक विद्वान लिखता है—

“इन भगड़ों की वजह से बड़े बड़े नगरों में खूब हत्याएं होती रहती थीं और खून बहता रहता था। छोटे बड़े सब लोगों में बैरमानी और बदचलनी बढ़ी हुई थी। इससे साफ़ ज़ाहिर था कि राज के साथ मिलकर ईसाई धर्म इतना गिर गया था कि अब वह लोगों के दिलों को रोक कर उन्हें बुराई से न बचा सकता था। धर्म का जीवन मिट चुका था, उसकी जगह धर्म के असूलों पर बहसें रह गई थीं और ये बहसें भी पागलों की बहसें थीं।*”

मोहम्मद साहब के जन्म के दिनों के ईसाई मत और लोगों के जीवन पर उसके असर इन दोनों को बयान करते हुए वही विद्वान आगे लिखता है,—

* “A History of Intellectual Development of Europe”, by J. W. Draper, Vol. I, P. 289.

“आदमी की नेकी या बुरी का कोई खयाल नहीं किया जाता था। आदमी के पाप उसके बुरे कामों में नहीं नापे जाते थे बल्कि इससे नापे जाते थे कि वह ईसाई धर्म के माने हुए असूलों में से किससे कितना इनकार करता है। रोम, कुस्तुन-तुनिया और सिकन्दरिया के पादरी जी तोड़ कर एक दूसरे में बढ़ने की कोशिशों में लगे हुए थे और इस तरह के हथियारों और ज़रियों से अपना मतलब पूरा करने थे जो आदमी के दिल को गंदे और डरावने मालूम होते हैं। जबकि पादरी लोग खुद छिपकर हत्याएं कराने, जहर देने, बदचलनी करने, आंग्रे निरुलवा लेने, दंगे करा देने, बलबे करा देने और आपसी मारकाट में लगे हुए थे, जब कि पादरी और लाट-पादरी (विशप और आर्क विशप) दुनयवी ताकत के फेर में एक दूसरे को अभर्मी कह कर सजाएं दे रहे थे, राज दरबारों के ख्वासों को रिशवतें देने में सोना लुटा रहे थे और महलों की औरतों को अपने गन्दे प्रेम से जीतने की कोशिशें करते रहते थे, तो आम लोगों से क्या उम्मीद हो सकती थी?... ईसाई महन्तों की फौजें जब कभी सम्राट की फौजों में जा मिलती थी तो उन्हें घबरा देती थी और अगर बड़े नगरों में जाती थी तो वहां मजहूरी दंगे करा देती थीं, धर्म के ऊंचे ऊंचे असूलों को तब करने के लिये वे बहुत शोर गुल करती थी, लेकिन सोचने की आजादी के लिये या आदमी के छीने हुए हफ के लिये कभी कोई आवाज न उठती थी। ऐसी सूरत में लोगों के अन्दर सिवाय नफ़रत और

बेवसी बढ़ने के और क्या हो सकता था ? सचमुच लोगों से यह उम्मीद न की जा सकती थी कि ज़रूरत पड़ने पर वे एक ऐसे धर्म की मदद करेंगे जिसका असर उनके दिलों पर से विलकुल उठ चुका था । *

यही वजह थी कि मोहम्मद साहब की ज़िन्दगी में, सन् ६११ ईसवी में, जब ईरान के ज़रथुस्त्री बादशाह ने रोम के फैले हुए राज पर हमला किया तो नाखुश ईसाई पादरियों और ईसाई प्रजा में से बहुतसों ने जगह जगह उन विदेशी हमला करने वालों का साथ दिया जो एक ग़ैर ईसाई धर्म के मानने वाले थे ।

इस तरह के धर्म और इस तरह के महन्तों से भोले भाले अरबों के अन्दर किसी तरह के सुधार की उम्मीद करना बेकार था, न इन लोगों से अरबों की कोई भलाई हो सकती थी । सुधार और भलाई की जगह यहूदियों और ईसाइयों की आपसी दुशमनी और लागू डाट से अरबों के जीवन को और उनकी आज़ादी को बहुत बड़ा धक्का पहुँचा ।

दूसरे धर्मों से नफ़रत करने में ईसाई और यहूदी दोनों एक दूसरे से बड़े चढ़े थे । पांचवीं सदी के आख़ीर में, अरब के एक हिस्से, यमन के एक यहूदी हाकिम यूसुफ़ जुनवास ने उन सब लोगों और खासकर ईसाई अरबों को जो यहूदी मत मानने से

इनकार करते थे तकलीफें दे दे कर मार डालना शुरू किया। इसमें उसका एक खास तरीका उन्हें धधकती हुई आग में फेंक कर ज़िन्दा जला देना था। यमन में उन दिनों ईसाई भी काफी थे। यहूदियों की कोई सल्तनत अरब से बाहर न थी लेकिन ईसाइयों की एक अव्वरदस्त हकूमत यमन से थोड़ी ही दूर लाल समुद्र के उस पार इथियोपिया में मौजूद थी। यमन के ईसाइयों ने यहूदियों के खिलाफ इथियोपिया के ईसाई बादशाह के साथ साजिश की। इथियोपिया के बादशाह ने फौज भेजकर जुनवास को मरवा डाला और यमन के सारे सूबे पर क़ब्ज़ा कर लिया। यह बात मोहम्मद साहब के जन्म से सिर्फ सत्तर साल पहले की है। यमन का सूबा मक्के से दक्खिन में है। यह अरब का सबसे ज्यादा पैदावार वाला और सब से ज्यादा हरा भरा सूबा है और लाल समुद्र से ईरान की खाड़ी तक फैला हुआ है। इस तरह इन दोनों धर्मों की आपसी लाग डाट की वजह से अरब के दक्खिन और पूरब का बहुत बड़ा हिस्सा विदेशियों के हाथ में आ गया और सन् ६१० ईसवी तक एक दूसरे के बाद चार विदेशी हाकिम उस पर हकूमत करते रहे।

नीचे की बात से यहूदियों और ईसाइयों के आपसी झगड़ों का कुछ और पता चलता है। ईसाइयों की गिनतियों में लिखा है कि एक बार तीन दिन तक ईसाइयों के पादरियों और यहूदियों के पुरोहितों में बहस होती रही। आखिर में यहूदियों ने कहा—“अगर तुम्हारा ईसा मसीह सचमुच आलमान पर ज़िन्दा

है तो वहां से उतर कर हमे इसी वक्त दिखाई दे, हम तुम्हारा धर्म मान लेंगे ।” इस पर उसी दम वादल गरजे, विजली कड़की और एक लाल वादल के ऊपर हजरत ईसा दिखाई दिये । उनके सिर पर मुकुट था और हाथ में नंगी तलवार । उन्होंने ने आते ही यहूदियों से कहा—“देखो, मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूँ, मैं, जिसे तुम्हारे पुरखों ने सूली पर चढ़ा दिया था ।” देखते ही यहूदी सब अन्धे हो गए और फिर उस वक्त तक उनकी आंखें न खुलीं जब तक उन्होंने ने ईसाई धर्म न मान लिया ।)

इस मामले का असली रूप चाहे कुछ भी रहा हो लेकिन यह उन दिनों के यहूदियों और ईसाइयों के आपस के झगड़ों और उन ईसाइयों की धर्म की सूझ बूझ की खासी अच्छी तसवीर खींचता है जो हजरत ईसा के हाथ में भी नंगी तलवार दे सकते थे ।

गैरों की हकूमत

धर्म के नाम पर इस तरह के अन्धेरे और देश की इस तरह की हालत का देश की आजादी पर बुरा असर पड़ना जरूरी था। अभी कहा जा चुका है कि मोहम्मद साहब के जन्म से सिर्फ सत्तर साल पहले यमन के हरे भरे नूबे पर इथियोपिया के ईसाई बादशाह ने कब्जा कर लिया था। उत्तर और पच्छिम में रोम के राज और पूरव में ईरान की बादशाहत से भी अरब की सरहद मिली हुई थी और इन दोनों विदेशी हकूमतों ने अपने अपने पास के अरब इलाकों पर कब्जा कर रखा था। मिरजा अबुल फजल लिखते हैं—

“मोहम्मद साहब की पैदाइश के वक्त अरब का ज्यादा हिस्सा विदेशियों के हाथों में था। शाम और ईरान की सरहद से मिले हुए नूबे कुस्तुनतुनिया के रोमी सम्राटों और ईरान के खुसरों के कब्जे में थे। मक्के के दक्खिन में लाल मरुब के किनारे का हिस्सा इथियोपिया के ईसाई बादशाहों के ताबत था। लेकिन ‘हेजाज’ का इलाका जिनका मतलब ‘बांध’ या

‘रुकावट’ है अभी तक पूरी तरह उन क़ौमों की वदनीयती और हमलों दोनों को रोक रहा था जो उस इलाक़े के आस पास दुनिया की हकूमत के लिये लड़ रही थीं। इसी हिस्से की घाटियों में मक्का और मदीना के वे पाक शहर हैं जिनमें से एक में इसलाम जन्मा और दूसरे में पनपा।”*

उस रेगिस्तान को छोड़ कर जो आवादी के लिए बेकार था सिर्फ एक हेजाज़ का इलाक़ा ही अरब भर में उन दिनों अपने को आज़ाद कह सकता था, और आगे के वयान से पता चलेगा कि उस पर भी इन तीनों विदेशी ताक़तों के दांत बराबर लगे हुए थे।

अरबों में बहादुरी की कमी न थी। उन्हें आज़ादी भी बहुत प्यारी थी। क़ुरबानी या त्याग का माहा उनमें हृदय दर्जे का था। मेहमानों की खातिर करना और अपनी आन पर मर मिटना भी उन्हें ख़ूब आता था।

लेकिन वे भूटे बहमों और बुरे रिवाजों में डूबे हुए थे। आपसी लड़ाइयां और हत्याएं उनके आए दिन की जिन्दगी का एक ज़रूरी हिस्सा थीं। उनका सारा जीवन टुकड़े टुकड़े हो रहा था। उनका आगे जिन्दा रहना भी ख़तरे में था। उन्हें एक ऐसी महान आत्मा की ज़रूरत थी, जो उनके सब बुरे रिवाजों और

* Life of Mohammed, by Mirza Abul Fazl, Introduction, P. 1-2

बहमों के जाल को तोड़कर फेंक सके, उन्हें अंधेरों से निकाल कर उजाले में लाकर खड़ा कर सके, उनकी घरेलू लड़ाइयों को हमेशा के लिये चन्द कर उन्हें एक डोरी में बांध सके और सामने खड़ी मौत से बचा कर उन्हें तरक्की, भलाई और आजादी की तरफ ले जा सके ।

इस तरह के देश और इस तरह के आदमियों में मक्के के एक बड़े घराने के अन्दर तारीख ६ रबीउल अब्बल, सोमवार, २० अप्रैल सन् ५७१ ईसवी को सूरज निकलने के वक्त मोहम्मद साहब का जन्म हुआ ।



मोहम्मद साहब का जन्म



मक्के का शहर दुनिया के सब से पुराने शहरों में गिना जाता है। मोहम्मद साहब से एक हजार साल पहले यूरोप के साथ हिन्दुस्तान और दूसरे एशियाई देशों की तिजारत अरब ही के रास्ते होती थी। अरब सौदागरों की उन दिनों भारत के पूरबी और पच्छिमी किनारों पर बहुत सी खुशहाल वस्तियां थीं। अरब मल्लाह जो आम तौर पर यमन के रहने वाले होते थे हिन्दुस्तान और आस पास के देशों का माल अपने जहाजों में लादकर यमन ले जाते थे। वहां से खुश्की के रास्ते यह माल शाम जाता था और शाम से यूनान, रोम, मिस्र वगैरह देशों में। यमन और शाम के बीच पहाड़ियों से घिरा हुआ मक्के का शहर है। इसी लिए तिजारत के खयाल से मक्का उन दिनों बहुत बड़ा चढ़ा था। इस तिजारत से तरह तरह का लगाव रखने वाले बहुत से लोग मक्के में और उसके आस पास बस गए। मक्का अरब का सब से बड़ा और सबसे खुशहाल शहर बन गया और एक तरह की ठीक ठीक हकूमत वहां कायम हो गयी।

मक्के के बड़प्पन का दूसरा सबब काबे का पुराना मन्दिर है। यह मन्दिर भी मोहम्मद साहब से कम से कम हजारों साल पहले से अरब और उसके आस पास के लोगों का सबने बड़ा तीर्थ चला आता था। मक्के की बढ़ी हुई तिजारत और काबे की पूजा इन दोनों के सबब मक्के के हाकिम का मान और उसकी धाक अरब में शुरू से बढ़ी चढ़ी थी।

मक्के में सब से ज्यादा इज्जत आवरू वाला कर्बाना उन दिनों कुरैश का कबीला था। कुरैश का सरदार ही मक्के के छोटे से राज का मालिक या हाकिम होता था और वही काबे का देखभाल करता था। मोहम्मद साहब का परदादा हाशिम—जिसके नाम पर मोहम्मद साहब के खानदान के लोग 'बनी हाशिम' कहलाते थे—अपने ज़माने में मक्के का हाकिम था और लोग उसे बड़े आदर और प्रेम से देखते थे। हाशिम के दादा हाशिम का भाई मुत्तलिव और मुत्तलिव के दादा हाशिम का बेटा अब्दुल मुत्तलिव गद्दी पर बैठे। अब्दुल मुत्तलिव के कई लड़के थे जिनमें सबसे छोटा लड़का अब्दुल्ला २५ साल की उम्र में अपनी शायी के दो साल के अन्दर मर गया। अब्दुल्ला के मरने के कुछ रोज़ दादा अब्दुल्ला की बेवा आमिना ने बालक मोहम्मद को जन्म दिया।

पहले पच्चीस साल



आमिना इतनी दुखी और बीमार थी कि वह सात दिन से ज्यादा वच्चे को दूध न पिला सकी। उसके बाद कुछ दिन तक अब्दुल मुत्तलिब के एक दूसरे बेटे अबु लहव की एक बांदी ने मोहम्मद को दूध पिलाया। फिर मक्के के पास की एक पहाड़ी से साद कबीले की एक औरत हलीमा ने वच्चे को अपने घर लेजाकर पाला। पांच साल की उम्र होने पर धाया हलीमा ने बालक को लाकर फिर माँ को सौंप दिया। लेकिन अगले साल ही माँ आमिना भी चल बसी। इस तरह एक बड़े घराने में पैदा होने पर भी बालक मोहम्मद को माँ बाप का सुख न मिल सका।

बड़े होने पर मोहम्मद साहब ने कई बार भरे दिल से आमिना की कब्र की यात्रा की। धाया हलीमा से भी जीवन में कई बार उनकी भेंट हुई और हर बार उन्होंने ने हलीमा की तरफ गहरी मोहब्बत और इज्जत दिखाई।

माँ के मरने के बाद कई साल तक दादा अब्दुल मुत्तलिब ने अनाथ मोहम्मद की देख रेख की, और उसके बाद अब्दुल

मुचलिव के बड़े बेटे अबु तालिव ने उन्हें पाला। करीब दस साल की उम्र में मोहम्मद साहब का ज्यादा बड़का मक्के के आस पास की पहाड़ियों पर अबु तालिव की दकरीया चराने में बीना करता था।

अब हम दो ऐसी बातों को बयान कर देना चाहते हैं जिनका नौजवान मोहम्मद के दिल पर मालूम होता है सब से गहरा असर पड़ा, और जिनसे अपनी कौम की बिगड़ी हुई हालत का खाका उनकी आंखों के सामने खिंच गया। इनमें पहली बात मोहम्मद साहब की पैदायश से भी ५५ दिन पहले की है, जिसका उन्होंने बड़े होकर दूसरों से हाल सुना। अरब का यमन नूवा इथियोपिया के ईसाई बादशाह के कब्जे में था। बादशाह के हुकुम से यमन के ईसाई हाकिम अबराहा ने एक बहुत बड़ी फौज लेकर जिसमें कई हाथी भी थे मक्के पर हमला किया और कावे को गिरा डालना और मक्के को इथियोपिया के बादशाह के राज में मिला लेना चाहा। यह हमला अरबों के धर्म और उनकी आजादी दोनों के ऊपर एक जबरदस्त हमला था। हम ऊपर लिख चुके हैं कि उन दिनों अरब भर में ऐजाज़ का इलाका ही पूरी तरह आजाद था। मालूम होता था कि अबराहा की फौज को कोई एरा न सकेगा। मक्के वालों का कहना है कि परमात्मा ने अबराहा की फौज पर कोई अचानक आफत भेजकर उसे तितर बितर कर दिया। जो हो, हमने गज नहीं हज़ारों जानें गंवाकर अबराहा को मक्के के बाहर से ही लौटनी

हाथ लौट जाना पड़ा। मोहम्मद साहब ने बचपन में इस बात को सुना। उनके दिल पर इसका इतना गहरा असर पड़ा कि कुरान के एक अलग सूरे में इस बात का जिक्र आता है। इस से अपने देशवालों की बेबसी और उनके सामने की आफत मोहम्मद साहब को दिखाई दे गई।

दूसरी बात उक्काज़ के मेले में हुई। सन् ५८० ई० में उक्काज़ के मेले के मौक़े पर मक्के से पूरब के एक हवाज़िन कबीले के किसी शायर ने कुरैश के सामने अपने कबीले की बड़ाई का बखान किया। कुरैश से न सहा गया। दोनों तरफ़ से तलवारें खिंच गईं। दोनों इस बात को भी भूल गए कि वे दिन, जैसा रिवाज चला आता था, लड़ाई बन्द रखने के दिन थे। दस साल तक यह घरेलू लड़ाई जारी रही। कई कई कबीले दोनों तरफ़ से आ मिले। हज़ारों जानें गईं। जिन दिनों ये लड़ाई जारी थी मोहम्मद साहब की उम्र दस और बीस बरस के बीच में थी। अरब के इतिहास (तारीख़) में इस दस बरस की जंग को 'हरवे फ़िज़ार' यानी नापाक लड़ाई या अधर्म की लड़ाई कहा जाता है, क्योंकि यह लड़ाई उस महीने में शुरू हुई जिसमें लड़ना मना था।

छोटी उम्र से ही मोहम्मद साहब को एकान्त में रहने और सोचने की आदत थी। जबकि उनके साथी खेल कूद में वक्त खोया करते थे मोहम्मद साहब कहा करते थे, "आदमी खेल

कूद में बक़ खोने के लिए नहीं, किस्ती ज्यादा उंचे मतलब के लिये बनाया गया है।”*

जब १२ बरस के हुए तो मोहम्मद साहब अपने चाचा अबु तालिब के साथ एक तिजारती काफ़ले में मक्के से पहली बार शाम गए। रास्ते में उन्हें कई यहूदी बस्तियों से होकर जाना पड़ा। इससे उन्हें उस ज़माने के यहूदी धर्म से खासी जानकारी हो गई। शाम का देश उन दिनों रोम के ईसाई सम्राटों के मानहत्त था। वहां ईसाई धर्म का खूब जोर था। मोहम्मद साहब को अपनी जवानी में कई बार शाम जाने का मौका मिला। एक विद्वान लिखता है कि “शाम में मोहम्मद के सामने लोगों की घुरी हानत और धर्म की गिरावट का वह परदा खुल गया जिसकी याद उनकी आंख के सामने ने फिर कभी फीकी न पड़ सकी।”†

शाम का देश जिसमें फिलिस्तीन और यरुसलम शामिल थे दुनिया के सब से पुराने और सब से हरे भरे देशों में गिना जाता है। कहा जाता है कि शाम की घाटियों ने ज्यादा अन्त में वे दुनिया में कहां पैदा नहीं होते। यहूदी धर्म की नव दान न्यान घातें इसी देश में हुई। बहुत पहले जब दमश्क शाम की राजधानी था शाम एशिया की सबसे सुखी और उपरदन्त हस्तियों में

*“Life of Mohammad”, by M A Fazl, P 20

† Ibid, P 22

गिना जाता था। शाम के इलाक़े फ़ीनीशिया में सदियों तक दुनिया भर की तिजारत की सबसे बड़ी और सबसे ज्यादा भरी पूरी मंडियां थीं। सिकन्दर के बाद सदियों तक यह देश यूनानियों के हाथ में रहा और यूनान की बढ़ी हुई विद्याओं, विज्ञान (साइन्स) और दर्शन (फ़िलसफ़े) के पढ़ने पढ़ाने की यह एक बड़ी जगह रही। सदियों इसमें सैकड़ों ही बौद्ध मठ थे और बौद्ध धर्म और बौद्ध दर्शन की घर घर चर्चा होती थी। शाम ने ही हज़रत ईसा और ईसाई धर्म को जन्म दिया। हज़रत ईसा के तीन सौ साल बाद तक यह देश ज्ञान, विज्ञान, धन धान्य, दस्तकारी और तिजारत सबके लिए मशहूर था। लेकिन मोहम्मद साहब के वक्तों में वह कुस्तुनतुनिया के ईसाई सम्राट के हाथों में था और ईसाई धर्म का एक खास अड़्डा माना जाता था।

सम्राट थियोडोसियस ने शाम के पुराने धर्मों यानी बौद्ध धर्म और यहूदी धर्म को बुरा बताया, वहां के तमाम मन्दिरों को गिरवा दिया और हुकुम दे दिया कि,—“जो कोई आदमी सिकन्दरिया और रोम के ईसाई पादरियों के बताए हुए मज़हबी असूलों को न मानेगा और उन पर न चलेगा उसका सब धन दौलत जब्त कर उसे देश से निकाल दिया जायगा।” यह भी हुकुम दे दिया गया कि “जो कोई यहूदियों वाले दिन ईस्टर का त्योहार मनावेगा उसे मौत की सज़ा दी जावेगी।” हिन्दुस्तान, मिस्र, यूनान जैसे देशों के विद्वान सदियों पहले

जमीन के गोल होने का पता लगा चुके थे। जिन सदी में मोहम्मद साहब का जन्म हुआ ठीक उस सदी में ईसाई महान् सेण्ट आगन्टाइन ने इस बात को इस लिये झूठ छराराया क्यों कि इंजील में जमीन को चपटा लिखा था। हुकुम दे दिया गया कि, “जिन किताबों में जमीन के गोल होने की बात लिखी हो उन्हें जला दिया जावे।”

मोहम्मद साहब के दिनों के पोप प्रिगरी ने ईसाई धर्म के उस निकम्मे पूजा पाठ और उन रस्स रिवाजों को, जिन्हें ऊपर थोड़ा सा बयान किया जा चुका है, हुकुम देकर, हमेशा के लिये असली ईसाई धर्म ठहरा दिया। लेकिन ये सब लचर बातें उन दिनों के यूनानी ज्ञान विज्ञान की रोशनी में न ठहर सकती थीं। इसीलिये पोप प्रिगरी के बारे में लिखा है कि,—“विद्या का उससे बढ़कर जानी दुश्मन कभी कोई पैदा नहीं हुआ।” उसने खुद रोम के मशहूर ‘पैलेटाइन’ किताबघर को प्रागल्भ्य दी और गणित (रियाजी), भूगोल (जुग्राफिया), ज्योतिष (नजूम), वैद्यक (तबाबत), दर्शन (फिलसफ़ा) पढ़ाने वालों को देश से निकाल दिया। “दार्शनिकों (फिलसफ़रों) को दूढ़ दूढ़ कर फल्ल किया जाने लगा। जिस किसी पुरानी किताब का नकल मिलती थी उसे तुरन्त जला दिया जाता था। पच्छिमी एशिया भर में लोगों ने इस तरह से अपने अपने किताबघरों की सब किताबें अपने हाथों ने जनादीं कि जहाँ ज़िन्दी किताब की किसी बात के लिए उनके सारे कुत्ते को इन्त न कर

दिया जावे।”* वैद्य का पेशा करने वालों यानी दवाओं से बीमारियों का इलाज करने वालों की सज़ा मौत थी। हुकुम दिया गया कि बीमारों के इलाज के लिये ईसाई पादरियों और महन्तों के गण्डे तावीज़ और दुआएं काफी हैं। ईसाई पादरियों तक के लिये “वपतिस्मे के वक्तू तीन बार पानी में डुबकी लगा लेना, शहद और दूध मिला कर चाट लेना, कपड़े या जूते पहनते वक्तू माथे पर क्रूश का निशान कर लेना और मरियम और सन्तों की मूर्तियों के सामने धूप दीप जला देना” नेक चलनी के मुक्कावले में कहीं ज्यादा जरूरी बातें समझी जाती थीं। जो आदमी इस बात को मानने से इनकार करता था कि हज़रत ईसा के जन्म से सैकड़ों साल पहले फ़िराँ (यानी मिस्र का पेरोए) जिस रथ में बैठ कर गया था उसके पहियों के निशान अभी तक लाल समुद्र के रेत में बने हुए हैं और समुद्र की लहरें या हवा के झोंके उन्हें नहीं मिटा सकते, उसे अधर्मी कह कर मार डाला जाता था।

इन सब बातों से पता चलता है कि शाम देश के उन लोगों को जो सदियों पहले यूनानी ज्ञान विज्ञान और बौद्ध दर्शन का आनन्द ले चुके थे छठवीं सदी के आखीर में ईसाई धर्म के नाम पर कैसे कैसे जुल्मों और आफ़तों का सामना करना पड़

* A History of the Intellectual Development of Europe, by Draper, Vol I, P. 312

रहा था। यह सब हालत लड़कपन में मोहम्मद साहब की नज़र के सामने से गुज़री। कई बार कई बड़े बड़े ईसाइयों से उनकी बातचीत हुई, जिनमें एक ईसाई महन्त नस्तूर का खास तौर पर ज़िक्र मिलता है। पहली ही बार की शाम की यात्रा में एक नेक ईसाई साधु बुहैरा का भी नाम आता है जिस पर बालक मोहम्मद के सवालों, उसकी गहरी खोज, उसके बड़े दिल, उनकी सूझ बूझ और उसकी पहुँच का बहुत बड़ा असर पड़ा।

मोहम्मद साहब की जिन्दगी के पहले २५ साल अपने नाया अबु तालिब के साथ तिजारत करने में और इसी तरह के नज़रबंदे हासिल करने में बीते। इन दिनों मोहम्मद साहब ने तिजारत में इतनी होशियारी हासिल करली और अपनी सगाई और ईमानदारी के लिये वह चारों तरफ इतने मशहूर हो गए कि मक्के के दूसरे बहुत से व्यापारी उन्हें अपना एजेंट बनाकर उनकी मारफत व्यापार करने लगे।

गृहस्थी



इससे कुछ पहले शहर का एक बड़ा और मालदार सौदागर चल बसा। उसकी बेवा खदीजा को अपने काम काज के लिये एक होशियार और ईमानदार एजेंट की जरूरत पड़ी। अबु तालिब ने अपने भतीजे की खदीजा से सिफारिश की। खदीजा ने मान लिया। अब खदीजा के एजेंट की हैसियत से मोहम्मद साहब कुछ दिनों शाम, दमश्क और दूसरे मुल्कों से तिजारत करते रहे। मोहम्मद साहब की मेहनत और ईमानदारी से खदीजा को बहुत लाभ हुआ। आखिर एक बार उनके शाम से भक्का लौटने पर बेवा खदीजा ने उनसे शादी करने की बात कही। वह राजी हो गए। मोहम्मद साहब की यह पहली शादी थी। दोनों की उम्र में बड़ा फ़रक़ था। मोहम्मद साहब की उम्र इस शादी के वक्त पच्चीस और खदीजा की चालीस थी। फिर भी यह शादी जिन्दगी भर दोनों के लिये बहुत बड़ी बरकत साबित हुई और आखिर तक दोनों में खूब प्रेम रहा। इस तरह मोहम्मद साहब की गृहस्थी शुरू हुई।

अल-अमीन

२५ साल की उम्र तक उस ज़माने के तमाम बच्चों से मोहम्मद साहब की ईमानदारी और नेकचलनी का काफी सदृश मिलना है। जब उनकी उम्र के लोग, मक्के में जैसा रिवाज था, शायरी करने और आवाजा फिरने में अपना वक्तूँ ग्योते थे, मोहम्मद साहब को जब कभी अपने कारबार में फुरसत मिलती या एकान्त में कुछ न कुछ सोचते दिराई देते थे। मिलने जुलने में वह सब के साथ बहुत ही मीठे यहां तक कि शरमीले थे। उनका रहन सहन बड़ा सादा, उनका मन उनके बस में, तन्दुरन्ती अच्छी, दिल मुलायम, और चेहरा चमकता हुआ था। लोग उन्हें देखकर ही उनकी तरफ खिंचने लगते थे।

जवानी में ही अपनी सगाई और ईमानदारी के लिये वह इतने मशहूर हो गए कि तमाम मक्का के लोग उनके 'अल-अमीन', यानी जिस पर भरोसा किया जा सके, कह कर पुकारा करते थे और जिन्दगी के गम्भीर तब दर हम्मी नाम से पुकारे जाते रहे।

मक्के की हकूमत का और मक्केवालों के भगड़े तय करने का हक़ उन दिनों क़ुरैश के सरदार को था। लेकिन आए दिन बाहर से आने वाले यात्रियों और दूसरे लोगों के जान माल के बचाव का कोई इन्तज़ाम न था। मक्के के आस पास और खुद मक्के में अकसर इन लोगों का माल असबाब और कभी कभी उनके बाल बच्चे तक लूट लिये जाते थे, और कोई कचहरी न थी जिसमें जाकर वह दाद फ़रियाद कर सकें। मोहम्मद साहब से कई सौ साल पहले फ़ज़ल, फ़ज़ाल, मुफ़ज़ज़ल और फ़ुज़ज़ैल नामके चार बहादुर और दयावान नौजवानों ने मक्के के अन्दर इस पाक काम को अपने हाथों में ले रखा था। लेकिन उनके बाद फिर कोई इस तरह का बन्दोबस्त न रहा। मोहम्मद साहब ने अपनी शादी के बाद ही सब घरानों के खास खास लोगों को जमा किया। उन्होंने एक दल बनाया जिसका काम मक्के में और उसके आस पास परदेसियों की जान और उनके माल की हिफ़ाज़त करना था। उस दल के हर आदमी को इस बात की क़सम खानी पड़ती थी कि वह हर परदेसी की हिफ़ाज़त करेगा और किसी को उस पर जुल्म न करने देगा। पुराने ज़माने के उन चार बहादुरों की याद में इस दल का नाम 'हिल कुल फ़ुज़ूल' रखा गया। यह दल कम से कम ६० साल तक काम करता रहा।

अरब में उन दिनों गुलामों के बिकने का आम रिवाज था। कुछ लोग शाम के दक्खिन से किसी ईसाई क़बीले के एक

लड़के को जिसका नाम जैद था वहाँ से पकड़ लाए। जैद मक्के के बाजार में आकर बिका। खदीजा के एक रिश्तेदार ने उसे खरीद कर खदीजा को दे दिया। खदीजा ने उसे मोहम्मद साहब को दे दिया। मोहम्मद साहब ने जैद को आजाद करके उसे बड़े प्रेम से अपने साथ रख लिया। कुछ दिनों बाद जैद का बाप हारीस पता लगा कर मक्के पहुँचा। उसने जैद को अपने साथ घर ले जाना चाहा। लेकिन जैद मोहम्मद साहब के बर्ताव से इतना खुश था कि उसने बाप के साथ जाने में इनकार कर दिया।

मोहम्मद साहब की उम्र जब करीब ३० साल की थी मक्के में एक बड़ी डरावनी भेद भरी बात का पता चला। वह यह थी। कुन्तुनतुनिया के सम्राट ने बहुत सा मान ग्वर करके उनमान नामी एक ईसाई अरब के जरिये मक्के और हज्राज पर हमला करना चाहा। पता लगने ही मोहम्मद साहब ने मणवालों को और खुद उसमान की आन, देशभक्ति और उनकी आजादी की मुहब्बत के नाम पर अर्पील की और मोहम्मद साहब की कोशिश से रोम के सम्राट की वह चाल उन्नी पड़ी।

पाँच साल बाद एक और बात हुई जो दुनिया में बहुत मामूली थी; लेकिन जिसके नतीजे अरब की आजादी के लिए ऊपर की चाल से भी कुछ कम दुरे न हो सकते थे। इन दूसरी बात से इन बातों का भी पता चलता है कि मोहम्मद साहब

कितने अमन चाहने वाले और कितने सूफ़ वूफ़ वाले थे, और अपने देश भाइयों में उनका मान कितना बढ़ा हुआ था ।

कावे की कुछ दीवारें पानी की बाढ़ से फट गईं । मन्दिर की मरम्मत की ज़रूरत हुई । मरम्मत के बीच में कावे के पाक पत्थर “संगे असवद” को फिर से ठीक जगह पर लगाने का सवाल उठा । यह पत्थर एक फुट छै इंच लम्बा, आठ इंच चौड़ा और बहुत पुराने ज़माने का एक अंडे की शक्ल का टुकड़ा है जो मोहम्मद साहब के हजारों साल पहले से आज तक कावे की खास चीज़ है और दक्खिन पूरब के कोने में ज़मीन से पांच छै फुट की उंचाई पर लगा हुआ है । आज तक सब मुसलमान यात्री इज़्ज़त से उसे चूमते हैं । कुरैश कबीले की चार बड़ी बड़ी शाखों में भगड़ा होने लगा कि संगे असवद को उठाकर ठीक जगह पर लगा देने की बड़ाई किसे दी जावे । भगड़ा बढ़ गया । आखिर सबने मिलकर इस भगड़े के फ़ैसले के लिये अपने अल् अमीन मोहम्मद को पंच बनाया । मोहम्मद साहब ने मौक़े पर जाकर अपनी चादर बिछादी, उस चादर के ऊपर अपने हाथ से संगे असवद को रख दिया, फिर चारों ख़ानदानों के चार मुखियों से कहा कि वे सब मिलकर चारों तरफ़ से उस चादर को ऊपर उठावें । इस तरह उन सबने मिलकर संगे असवद को ठीक जगह पर पहुँचा दिया । चादर को उस जगह के साथ मिला दिया गया और मोहम्मद साहब ने हलके से सहारा देकर संगे असवद को उसकी जगह पर सरका

दिया। इस तरह एक ऐसा झगड़ा, जिससे न निर्म कुरेशों में
 बड़ी आपसी लड़ाई छिड़ सकती थी, बल्कि जिसमें अरब के
 सब कबीले खिंच आ सकते थे और जो एक बड़ा झौनी पल्ला
 साबित हो सकता था, आसानी से नष्ट हो गया।

एकान्त में रहना

अरब और आस पास के देशों के लोगों की हालत, उनकी आपस की फूट, उनके अजीब अजीब धर्म और रिवाज, और विदेशी हकूमतों के उन पर जुल्म, इन सब बातों पर मोहम्मद साहब शुरू से ही दुखी और सोच विचार में डूबे हुए दिखाई देते थे। अकेले में रहने की भी उन्हें शुरू से आदत थी। अब आकर उनके जीवन में एक नई बात दिखाई देने लगी।

उनके दिल में शुरू से एक ईश्वर में पक्का विश्वास था। यहूदी और ईसाई विद्वानों और खासकर शाम के ईसाई साधुओं से उन्होंने यह भी सुन रखा था कि लम्बे उपवासों (रोजों), प्रार्थनाओं, दुआओं, और चुपचाप दुख सहने से ईश्वर अपने भक्तों पर दया करते हैं और उन्हें संचाई का रास्ता दिखाते हैं। मोहम्मद साहब के दिल में इन सब धर्मों के लिये इफ्तत थी। लेकिन इन धर्मों की उन दिनों की हालत को देखते

हुए उनकी तसल्ली इनमें से किसी से न हो सकती थी। सर विलियम म्यूर लिखता है,—

“मोहम्मद साहब में शुरू से ही सोच विचार की आदत और एक तरह की गहराई दिखाई देती थी। हाल में यह और भी बढ़ गई थी और वह अब अपना बहुत सा वक्त अकलें में बिताने लग गए थे। उनका मन ध्यान और सोच में लगा रहता था। अपनी क्लौम की गिरावट का उनके दिल पर बड़ा बोझ था। सच्चा धर्म क्या है, इस तरह की उथल पुथल उनकी आत्मा को दिक् करती रहती थी। वह अकसर मक्के के पाम को सुनसान घाटियों और पहाड़ियों पर एकान्त में रहने, सोचने और शान्ति हासिल करने के लिए चले जाते थे। उनकी सब से प्यारी जगह हिरा पहाड़ की तलहटी में उनार के ऊपर एक गुफा थी।”*

हिरा का ऊंचा और सुनसान पहाड़ नक्के में उत्तर में है। कई साल तक रमजान का पूरा महीना मोहम्मद साहब या इन्हीं पहाड़ की एक गुफा में बीतता रहा, और धीरे धीरे ईश्वर की खोज में बेचैन मोहम्मद के लिये चारों महीने रमजान ही के हो गए। इस गुफा के अन्दर मोहम्मद साहब ने लम्बे लम्बे उपवास रोजे रखे, रतजगे जिये, दुआएं मांगी और बार बार उसी गुफा में वे अपने परवरदिगार के सामने ली भर कर रोए।

*“Life of Mohammed”, by W. Muir, P. 35

एक विद्वान का कहना है कि “जिस तरह हीरे धरती के पेट में अंधेरे में ही पाए जा सकते हैं, इसी तरह सचाई गहरे सोच से आत्मा की गहराइयों में ही मिल सकती है।”

इस तरह वरसों के सोच और खोज से मोहम्मद साहब के दिल पर यह सचाई जमती जा रही थी कि ईश्वर एक है, वही हम सबका मालिक है, सब आदमी भाई भाई हैं, एक ईश्वर के सिवाय और किसी देवी देवता में मन अटकाना गुनाह है, सबको बुरे कामों से बचना और नेक कामों की तरफ़ लगना चाहिये, सबको अपने अपने भले और बुरे कामों का फल भुगतना होगा। यही उन्हें सब मज़हबों का असली निचोड़ दिखाई दिया और इस असली धर्म से भटक जाने में उन्हें अरब और बाक़ी दुनिया की सारी मुसीबतों की जड़ दिखाई देने लगी।

“मोहम्मद साहब को बहुत दिनों पहले से सूझने लगा था कि अरब के सैकड़ों क़बीलों और धर्मों के लोगों का अपने अपने क़बीलों और धर्मों के अलग अलग देवी देवताओं को पूजना ही उनमें फूट और झगड़ों के बढ़ने का खास सबब था। इसलिये जिस तरह मोहम्मद साहब से बहुत पहले यहूदी महा-पुरुषों ने कोशिश की थी उसी तरह मोहम्मद साहब ने सब से बड़े और सब के मालिक एक परमात्मा की पूजा के जरिये उन सब को पूरी तरह मिला कर एक क़ौम बना देने का इरादा कर लिया। परमात्मा के एक होने के जरिये और उसी एकता के

सहारे मोहम्मद साहब ने अपने लोगों में एकता कायम करने और उन्हें एक क्रौम बनाने का फैसला किया ।”*

*“Islam, Her Moral and Spiritual Value ”
by Major Arthur Glyn Leonard, PP 25-26

ईश्वर की आवाज़



लेकिन इस तरह की गहरी और एक ईश्वर ही पर भरोसा करने वाली आत्मा की तब तक तसल्ली न हो सकती थी जब तक कि यह आवाज़ उसके अन्दर से उठती हुई मालूम न हो, जब तक कि उसका वह रव्व, जिसके सामने उसने रो रो कर रातें गुज़ारी थीं, खुद उसकी तसल्ली न करे। आदमी की अक़ल पर ही भरोसा नहीं किया जा सकता। आदमी इतना बेवस और कमज़ोर है कि वह बिना परमात्मा की मदद के कर भी क्या सकता है ! फिर सच्चे खोजियों को इससे पहले भी तो इल्हाम और आकाशवाणी हो चुकी थी ! यही मोहम्मद साहब के दिल की बेचैनी का सबब था। यही इनके एकान्त में रहने, लम्बे रोज़ों और प्रार्थनाओं का मतलब था।

आखिर जब मोहम्मद साहब की उम्र चालीस साल की हुई एक रात रमज़ान ही के महीने में हिरा की गुफ़ा में बैठे हुए उन्हें यह आवाज़ आती हुई मालूम हुई—“जा उठ ! और अपने रव्व का संदेसा दुनिया तक पहुँचा।” मोहम्मद की तसल्ली न हुई।

फिर एक रात को जब वह अकेले सोच विचार में दूबे पड़े थे किसी ने उनसे जोरों के साथ कहा "ऐलान कर !" मोहम्मद साहब चौंके। फिर आवाज़ आई "ऐलान कर !" तीसरी बार आवाज़ आई "ऐलान कर !" मोहम्मद ने धवरा कर पूछा "क्या ऐलान करूं ?" जवाब मिला—

"ऐलान कर अपने उसी रव्य के नाम पर जिसने जगत को बनाया।

"जिसने प्रेम से प्रेम का पुतला आदमी तय्यार किया, ऐलान कर ! तेरा रव्य बड़ा ही दयावान है, उसने आदमी को पन्नन के जरिये ज्ञान दिया और आदमी को वे सब बातें सिखाईं जिनमें वह नहीं जानता था।"*

ये कुरान की वे पांच आयतें हैं जिनका मोहम्मद नाएद को सबसे पहले इलहाम हुआ। यही उनके 'पैगम्बर' ('ईश्वर का पैगाम यानी संदेश लाने वाला') होने की परत थी।

इलहाम, वही, रिविलेशन, आकाशवाणी या ईश्वर का संदेश क्या चीज़ें हैं ? सचाई का कोई ऐसा भरपूर है या नहीं जिसका साथ आदमी के दिल के मंजरे मंजरे उस दिल की ग़लत सफाई की हालत में कभी उस दिल पर ग़लत रूप से पड़ सकता

† 'अलफ़' शब्द के मारने अरबों में 'प्रेम' और 'इलम' की जगह दोनों होते हैं। यहाँ दोनों मारने लग सकते हैं।

* कुरान ९६, १-५

हो ? आत्मा की कोई ऐसी हालत हो सकती है या नहीं जिसमें थोड़ी देर के लिये ग़ैब से यानी किसी ऐसी जगह से जिसके बारे में कुछ कहा ही नहीं जा सकता उसके भीतर ज्ञान का दरवाज़ा खुल जाता हो ?—ये सब ऐसे सवाल हैं जिनकी ज्यादाह गहराई में जाना इस वक्त हमारे मतलब से दूर है। लेकिन इसमें शक नहीं मोहम्मद साहब का इल्हाम का दावा दुनिया के धर्मों के इतिहास में कोई अनोखी चीज़ न थी। दुनिया के ज्यादातर धर्मों के कायम करने वालों, और हज़ारों ऋषियों, महात्माओं, पीरों, पैगम्बरों और बलियों ने किसी न किसी रूप में इसका दावा किया है और वेद, तौरेत, इंजील सब के करोड़ों मानने वाले अपनी अपनी किताबों को इल्हामी यानी ईश्वर की कही हुई मानते हैं। इसमें भी शक नहीं कि खोजी और बेचैन मोहम्मद को ठीक उसी तरह और उसी तरह की हालतों में अपने भीतर से या अपने परमात्मा से रोशनी मिली जिस तरह दुनिया के किसी भी बड़े से बड़े पैगम्बर, दृष्टा या धर्म चलाने वाले को कभी मिली है। इसी रोशनी में मोहम्मद साहब को अपने देश, अपनी क़ौम और सारी इन्सानि क़ौम के भले का रास्ता नज़र आया और इसी ने उन्हें अपने मिशन को फैलाने और उसके लिये हर तरह की तकलीफ़ें उठाने को तय्यार कर दिया।

“सचमुच अगर कभी कोई अदमी मौत की तरह अटल बने रहकर अपनी लगन का सच्चा था तो अरब भूमि का यह वफ़ादार बैठा था।

अगर कभी किसी अदमी ने दुनिया के पैदा करने वाले के सामने गन्ना दिल और अपनी आत्मा खोलकर रख दी तो इस व्यापारी मोहम्मद ने रख दी थी। उचमुच अगर दुखों में डूबी हुई और उन्हें चुपचाप रहती हुई किसी आत्मा को कभी भी हमारे बनाने वाले रब्य का दर्शन हुआ है तो हाजरा नामी दासी की इस औलाद को हुआ है।”

एक अनोखे असर और जोश में मोहम्मद साहब ने ऊपर की पांचों आयतों को साफ़ साफ़ कह डाला। उस पर भी उन्हें अपने होश हवास पर भरोसा न हुआ। वह तवियत ने पकृत ही लजीले और लिखा है कि ‘औरतो से भी ज्यादा शरमीले’ थे। ख़दीजा से उन्हें गहरा प्रेम था और ख़दीजा को उनसे। ख़दीजा की समस्त चूक और सचाई पर भी उन्हें भरोसा था। ख़दीजा की उम्र अब करीब ५५ साल थी। मोहम्मद साहब पसगा, एफ़ ख़दीजा के पास पहुँचे और सब हाल सुनाकर कहने लगे—“ख़दीजा ! मुझे क्या हो गया ? मैं कहीं पागल तो नहीं हो गया ?” ख़दीजा ने जवाब दिया—“ऐ क़ासिम ! के दाप ! डरो मत, तुम बड़ी खुशी की ख़बर लाए हो। मैं सब से तुम्हें अपनी क़ौम का पैगम्बर समझूँगी। मुसल हो ! अल्लाह ज़मी तुम्हें शरमिन्दा न होने देगा। क्या तुम मरदा अपने रिश्तेदारों के

* ‘Islam Her Moral and Spiritual Value’, by Major A G Leonard, PP 69-70

मोहम्मद साहब का एक बेटा जो बचपन में ही मर गया था।

साथ प्रेम का सलूक करने वाले, पड़ोसियों के ऊपर मेहरवान, गरीबों को दान देने वाले, मेहमान की खातिर करने वाले, अपने वचन का पालन करने वाले और हमेशा सचाई के तरफदार नहीं रहे !”

खदीजा का एक रिश्तेदार वरक्का यहूदी और ईसाई धर्म की कितावों का विद्वान् मशहूर था। वह बहुत बूढ़ा और अन्धा था और आसपास बड़ी इज़्ज़त की निगाह से देखा जाता था। खदीजा जल्दी से वरक्का के पास गई। उसने वरक्का को सब हाल कह सुनाया। वरक्का ने ध्यान से सुनकर जवाब दिया कि “धर्म की कितावों में ऐसे ही मौक़े पर एक इस तरह के पैग़म्बर के भेजे जाने का ज़िक्र है। सचमुच वही फ़रिश्ता जो हज़रत मूसा के पास आया था मोहम्मद के पास भी आया है। मोहम्मद से कहदो घबराए नहीं, हिम्मत के साथ अपने मिशन को पूरा करे।”

विद्वान वरक्का के तसल्ली देने का मोहम्मद साहब पर बहुत बड़ा असर पड़ा। लेकिन वह फिर भी मैले कुचैले कपड़े पहने, सोच विचार में डूबे हुए एक चादर लपेटे पड़े रहते थे। छै महीने की ज़बरदस्त बेचैनी के बाद फिर एक दिन आवाज़ आई—

ऐ चादर में लिपटे हुए !

उठ और लोगों को आगाह कर

और अपने रव्व की बड़ाई कर

और अपने कपड़ों को साफ़ कर

और मैले पन से बच

और दूसरों की सेवा करने के लिये किसी पर अहम्मान मत जता
और अपने रज्ज के लिये सत्र से काम ले।*

*.कुरान ७४, १-७

मिशन शुरू

इस घड़ी से ही मोहम्मद साहब को अपने मिशन का पूरा यकीन हो गया। उनकी बाक़ी उम्र अपने जीवन की इसी गरज़ को पूरा करने की कोशिशों में खर्च हुई। उन्होंने ने अब दुनिया के और सब कामों से अलग होकर मक्के में लोगों को अपने ईश्वर का संदेश सुनाना शुरू किया।

थोड़े में दूसरे सब देवी देवताओं और मूर्तियों की पूजा को छोड़ कर एक ईश्वर की पूजा करना, ऊँच नीच और कबीलों के फ़रक़ को तोड़कर सब आदमियों को भाई भाई समझना, जुआ, शराब, चोरी, वदचलनी और लड़कियों की हत्या जैसे बुरे कामों से वचना और नेक कामों में लगाना यही इसके बाद से मोहम्मद साहब के उपदेशों का निचोड़ था।

मुसीबतों के तेरह साल



तीन साल की लगातार मेहनत के बाद मुशकिल ने चालीस आदमियों ने मोहम्मद साहब के धर्म को माना। इनमें पहले पांच खदीजा, अबु तालिब का छोटी उम्र का बेटा अली, जैद, अबु बक्र और उसमान थे। अबु बक्र एक मालदार सौदागर थे। बाकी गरीब और छोटे लोग ज्यादा थे और बहुत से उन गुलामों में से थे जो उन दिनों अरब में जानवरों की तरह बेचे जाते थे।

मोहम्मद साहब ने सफा नाम की पहाड़ी पर, कुन्दा की एक सभा की और उनसे और सब देवी देवताओं को छोड़ कर निर्ग एक अल्लाह की पूजा करने को कहा। लोगों को घरा नगा। मोहम्मद साहब की हंसी उड़ाते हुए वे नव अपने अपने घर चले गए।

कुछ दिन बाद उन्होंने फिर निर्ग अपने गान्धान के चाली अब्दुल मुत्तलिब की नसल के लोगों को अपने मकान पर जमा किया। खूब समझाया। लेकिन सिवाय उन्नी के किसी ने उनका बात न सुनी।

मक्का वालों की उम्मीद छोड़ कर उन्होंने ने अब बाहर से आने वाले यात्रियों की तरफ ज्यादा ध्यान देना शुरू किया ।

कुरैश अब उनके खिलाफ हो गए । कुरैश की ज्यादा आमदनी, और बहुतों की रोजी कावे के ३६० देवी देवताओं की पूजा से चलती थी । यही उनकी कमाई थी । इसी में मक्के का बड़प्पन था । और इसी पर मोहम्मद साहब का सब से बड़ा हमला था । हजारों साल से जमे हुए विश्वास (अक्कीदे) आसानी से नहीं टूटते । कुरैश ने हर जगह मोहम्मद साहब की बात काटना शुरू किया ।

जहां कहीं मोहम्मद साहब जाते उनका मजाक उड़ाया जाता, उनपर फवतियां कसी जातीं, उन्हें गालियां दी जातीं । जब वह उपदेश देने खड़े होते उन पर पाखाना और मुरदा जानवरों की अंतड़ियां फेंकी जातीं । लोगों से कहा जाता “अब्दुल्ला का बेटा पागल हो गया है, इसकी मत सुनो ।” और शोर मचाकर कोशिश की जाती कि कोई उनकी बात न सुनने पावे । कई बार उन्हें पत्थर मार मार कर घायल कर दिया गया । एक बार कावे के अन्दर मोहम्मद साहब पर हमला किया गया और अगर अबु वक्र ने न बचाया होता तो उन्हें वहीं खत्म कर दिया जाता । जब इन सब बातों से काम न चला और मोहम्मद साहब न रुके तो फिर उन लोगों को, जो मोहम्मद साहब की बातें मान कर उन पर अमल करने लगते थे, तकलीफें दी जाने लगीं ।

विलाल नामी एक हथूरी गुलाम को, जिन्होंने मोहम्मद साहब के कहने पर मक्के के बुनों की पूजा करने में इनकार कर दिया था, तेज धूप में जलते हुए रेत पर लिटा कर एक भारी पत्थर उसके ऊपर रख दिया गया और कहा गया कि मोहम्मद साहब छोड़कर फिर से अरब के पुराने देवताओं की पूजा शुरू करेंगे। विलाल ने न माना। इस पर कई दिन तक उसे इन्हीं तरह मनाया गया। आखीर में जब अबु बक्र को पता चला तो उन्होंने मोहम्मद देकर विलाल को उसके मालिकों से खरीद लिया और फिर आजाद कर दिया।

यासिर और उसकी बीबी समीरा दोनों को इन्हीं गुनाहों में बरछियां भोंक भोंक कर मार डाला गया। उनके बेटे अम्मार को भी इसी तरह के दुःख दिये गए। अम्मार ने एक बार पत्थर कर माफी मांग ली और फिर मोहम्मद साहब के पास जाकर अपनी कमजोरी के लिये पछताना और रोना शुरू किया। मोहम्मद साहब ने उसे माफ कर दिया और फिर अम्मारों में बिना लिया।

उस शुरू जमाने के अम्मान में मरीचों की यही न थी। अरी के बेटे सुबैय को बड़ी बेरहमी के साथ मनाया गया। शिकंजे में कम कर उसने कहा गया—“अम्मान लोगों को हम तुम्हें छोड़ देंगे।” उसने जवाब दिया—“मर्जी तुम्हारा लोग दूंगा पर इस्लाम नहीं छोड़ूंगा।” उसके हाथ पांर एक एक कर काटे गए। फिर पूछा गया “क्या तुम अब भी नहीं मानते कि तुम्हारी जगह मोहम्मद होना।” जवाब मिला “अम्मान लोगें कि

मोहम्मद के एक कांटा भी चुभे मैं खुद अपने सब बाल बच्चों, कुनबे वालों और माल असबाब समेत मिट जाना पसन्द करूंगा।” खुवैब के टुकड़े टुकड़े कर दिये गए। मांस की एक एक वोटी हड्डियों से अलग कर दी गई। खुवैब शहीद हो गया। पर एक परमेश्वर और उसका संदेश लाने वाले पर यकीन खुवैब के दिल या ज़वान से न उठ सका। इन दिनों अबु बक्र ने बहुत से गुलामों को, जिन्होंने इसलाम धर्म मान लिया था और जिन्हें इसी क्रसूर में उनके मालिक तरह तरह की तकलीफें पहुँचाते थे, अपने पास से पैसा देकर आज़ाद करा दिया।

सन् ६१५ ईसवी में मोहम्मद साहब को अपने धर्म का उपदेश करते पांच साल हो गए। सौ सवा सौ आदमी जिनमें गरीब ज्यादा थे उनके मत में आ चुके थे। कुरैश की दुशमनी दिन दिन बढ़ती जाती थी। मोहम्मद साहब और उनके साथियों की जान हर घड़ी ख़तरे में थी।

अरब और ख़ास कर मक्के में कुरैश का जोर था। लाल समुद्र के उस पार थोड़ी ही दूर पर अफ़रीका में इथियोपिया का ईसाई सम्राट नज़ाशी बड़ा दिलवाला माना जाता था। सन् ६१५ में पहले १५ मुसलमान अपनी जान बचाने के लिए मक्के से इथियोपिया चले गए। धीरे धीरे वहाँ उनकी तादाद १०१ तक पहुँची जिनमें १८ औरतें थीं। कुरैश ने अपने दो आदमी अम्र और अब्दुल्ला इथियोपिया के सम्राट के पास क़ीमती क़ीमती नज़राने देकर भेजे और उससे यह चाहा कि वह

मुसलमानों को पनाह न देकर उन्हें मक्के वापिस भेजेंगे। मन्त्रा ने मुसलमानों को अपने दरबार में बुलाया और उनके नाश और उसके कायम करने वाले के बारे में मन्त्रालिखित। इन पत्रों की वजह से जाफर ने इथियोपिया के सम्राट के सामने जमाना दिया वह अरबों की उन दिनों की हालत और मोहम्मद साहब के उपदेशों की बड़ी अच्छी तस्वीर है। जाफर ने मन्त्रालिखित से कहा—

“ऐ राजन ! हम लोग जंगलीपन और ना समझी में रहे हुए थे। हम बुतों की पूजा करते थे, नापाक हिन्दुओं को खाने में खाते थे और गन्दी बातें मुंह से बोलते थे। आदमी में जितनी अच्छी बातें होनी चाहियें उन सब में हमने मुंह मोड़ रखा था। हम परदेसियों और परदेसियों दोनों की तरफ अपने धर्म में बेपरवाह थे। हम एहसास ही ज्ञानून जानते थे और वह था 'जिसकी लाठी उसकी डी'। हमें हालत में ईश्वर ने हम ही में एक ऐसा आदमी बना कर दिया जिसने ज्ञानदान, जिसकी सच्चाई, जिसकी ईमानदारी और जिसने सब लोगों को हम पहले ही से जानते थे। उन्होंने हमें बताया कि अल्लाह पर और उपदेश दिया कि अल्लाह के साथ किसी दूरे की न जाने, हमें दूसरे देवताओं या बुतों की पूजा करने में नगा बिना, नही बोलना, अमानत में इमानत न करना, दूसरे पर दया करना, नही परदेसियों के हकों का उपाल रखना एसात धर्म ठहराना, हमने हमें कहा कि किसी की भी ना परन के बारे में कुछ बात न करो और किसी पनाथ यतीन का नाला हमन करो, उन्होंने हमें हुक्म दिया कि

पापों से भागो और बुराई से बचे रहो, नमाज़ें पढ़ो, ज़कात (दान) दो और रोज़ा रखो। हमने उसकी बात मान ली है, और सिर्फ़ एक निराकार ईश्वर की पूजा करने और उस ईश्वर के साथ और किसी को न जोड़ने के बारे में उसके कहने पर अमल करना शुरू कर दिया है। इसीलिये हमारी क्रौम वाले हमारे खिलाफ़ खड़े हो गए। उन्होंने ने हमें दुःख पहुंचाए कि हम एक निराकार की पूजा को छोड़ कर फिर से लकड़ी, पत्थर और दूसरी चीज़ों के बुतों को पूजने लगें। उन्होंने ने हमें इतनी तकलीफ़ें दी और इतना नुक़सान पहुंचाया कि जब हमने देखा कि हम इनके साथ सलामती से नहीं रह सकते तो हमने आपके देश में पनाह ली। हमें भरोसा है आप उनके जुलमों से हमें बचावेंगे।”*

आए हुए कुरैश के आदमियों ने नज्जाशी से शिकायत की कि मुसलमान हज़रत ईसा को खुदा का बेटा नहीं मानते। वाद-शाह ने जाफ़र से पूछा। उसने कुरान की वे आयतें पढ़कर सुना दीं जिनमें हज़रत ईसा को पैग़म्बर माना गया है। दूसरे कट्टर ईसाइयों की तरह नज्जाशी खुद भी किसी को ‘खुदा का बेटा,’ न मानता था। नज्जाशी पर ईसाई रिफ़ारमरों एरियस और नेस्तोरियस के आज्ञाद विचारों का असर था। इन सब बातों का नज्जाशी पर इतना अच्छा असर पड़ा कि उसने मुसल-

*The Spirit of Islam, by Syed Amir Ali, PP.

मानों को कुरैश के हवाले करने की जगह अपने यहां ठहरा लिया और कुरैश के आदिमियों को उनके कीमती नजरानों समेत घर-घर वापिस कर दिया।

मोहम्मद साहब ने उस ईसाई बादशाह के छद्मनाम को हमेशा याद रखा। बहुत दिनों बाद जब उनके मरने की खबर उन तक पहुँची तो उन्होंने उसकी आत्मा की भलाई के लिये ठीक उसी तरह नमाज पढ़ी और दुआ मांगी जिस तरह वे मुसलमानों के लिये मांगा करते थे। लेकिन कुरैश की दुशमनी इन से और भी भड़की।

जब और कोई चाल न चली तो कुरैश ने मोहम्मद का नाम निकालना चाहा। कुरैश के कुछ मुखिया मोहम्मद साहब के पास आए। उन्होंने मोहम्मद पर 'देश में ग्लानि लाकर देने', 'घरों में फूट डाल देने', 'बाप दादा के धर्म को धुरा करने', और 'अपने देवताओं की बुराई करने' का इल्जाम लगाया। मोहम्मद साहब खुद कुरैश थे। लेकिन वे इन सब आरोपों से फरक को ही मिटाना चाहते थे। इस्लाम के मूलों के नीचे आते ही कुरैश और गैर कुरैश, अरब और अरबी, मुसलमान और मालिक सब बराबर होजाते थे और सब के साथ एकता बनी होने लगता था। घमंडी कुरैश इसे कैसे स्वीकार करते थे। उन्होंने मोहम्मद साहब से कहा कि 'हम सब अपने-अपने देवता बनाए तुम्हें फकीले का सब से मान्यता दायी बना देंगे।' "हम तुम्हें अपना सरदार मान लेंगे और तुम्हें बिना हमें कभी नहीं

काम न करेंगे। तुम सिर्फ अपने इस नए धर्म का उपदेश देना वन्द कर दो।” मोहम्मद साहब पर इसका कोई असर न हुआ। उन्होंने जवाब दिया—

“मैं भी तुम्हारी तरह सिर्फ एक आदमी हूँ। पर मुझे ईश्वर से यह इल्हाम हुआ है कि हमारा तुम्हारा ईश्वर एक ही है, इसलिये उसी की तरफ मुंह करो और उसी से माफ़ी चाहो। उन लोगों पर अफ़सोस है जो ईश्वर के साथ दूसरों को जोड़ते हैं, जो ग़रीबों, दुखियों को दान नहीं देते, जो मौत के बाद की ज़िन्दगी में और इस बात में यक़ीन नहीं करते कि सबको अपने किये हुए का फल भुगतना पड़ता है। लेकिन जिन्हें यक़ीन है और जो नेक काम करते हैं उनके लिये सुख ही सुख है।”*

दूसरी बार ये लोग मोहम्मद साहब से फिर मिले और उसी तरह का लालच दिया। मोहम्मद साहब का जवाब वैसा ही साफ़ था—

“मुझे न पैसा चाहिये और न राज, मैं तुम्हें सिर्फ अपने ईश्वर का संदेसा सुनाना चाहता हूँ। जो तुम मेरी बात मान लो तो इस दुनिया में और दूसरी दुनिया में दोनों में तुम्हारा भला होगा, अगर न मानो तो मैं सब कर लूंगा और अक्काह सब का फ़ैसला करेगा।”†

*. कुरान ४१, ६-८.

†. कुरान ३८, ९६ इत्यादि.

लोगों ने मोहम्मद साहब से कहा कि 'तुम पैगम्बर हो तो कुछ करामात दिखाओ।' मोहम्मद साहब ने जवाब दिया—

“अल्लाह की तारीफ़ करो ! मैं कोई चीज़ नहीं, सिवाय एक आदमी के, खुदा का भेजा हुआ।”*

“मुझसे पहले भी अल्लाह ने जितने रसूल भेजे हैं वे हमारी तुम्हारी ही तरह खाना खाते थे और गलियों में चले फिरते थे।”†

मोहम्मद साहब ने अपनी जिन्दगी भर कभी न कोई करामात, मोज़जा या चमत्कार दिखाया और न गिना सकने का दावा किया। क़ुरान में कम से कम १७ बार दिन आता है कि लोगो ने मोहम्मद साहब से कोई करामात दिखाने के लिए कहा और उन्होने हर बार यह ज़रूर कि मैं कोई करामात नहीं दिखा सकता इन्कार कर दिया। वह हमेशा अपने को सिर्फ़ एक मामूली आदमी बताते थे। उन्होँ दावा सिर्फ़ इतना था कि 'ईश्वर ने मेने घट (ग़ि) के अन्दर सचार्ह का उजाला किया है और मैं जो तुमने पूछा है वही उसी का संदेश है।' अपने उपदेशों में वह कर्तव्यों में भी काम लेते थे।

* क़ुरान १७.९६.

† “, ~ २५.२०.

“न मेरे पास अल्लाह के खज़ाने हैं, न मैं ग़ैब का इल्म रखता हूँ, न मैं फ़ारिश्ता हूँ, मैं सिर्फ़ उसी पर चलता हूँ जो अल्लाह ने मेरे घट (दिल) में बैठा दिया है ।”*

“मेरा अपना नफ़ा या नुक़सान तक मेरे हाथ में नहीं है, जो अल्लाह चाहता है वही होता है । जो मैं ग़ैब जानता होता तो मुझे सचमुच ख़ुब फ़ायदा होता और मुझे किसी तरह का नुक़सान न पहुंचता । मैं तो सिर्फ़ उन लोगों के लिये जो मेरी बात मान लें बुराई से डराने वाला और भलाई की ख़ुश ख़बरी देने वाला हूँ ।”†

कु़रैश के सरदारों ने अब और कोई चारा न देख मोहम्मद साहब के ताया अबु तालिव से कहा कि अगर आप अपने भतीजे को इस काम से न रोक लेंगे तो उसकी और उसका साथ देने वालों की जानें सलामत न रहेंगी ।

बूढ़े अबु तालिव ने भतीजे को बुलाकर समझाया कि इतने लोगों को अपना और अपने कुनवे वालों का दुशमन बनाए रखना अच्छा नहीं है । मोहम्मद साहब ने समझ लिया कि अब ताया मियां भी अपना हाथ मेरे सर से हटाना चाहते हैं । उन्होंने ने जवाब दिया—

“उस अल्लाह की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, अगर वे सूरज को मेरे दाहिने हाथ पर और चांद को मेरे बाएं हाथ पर रख दे तब भी जब तक अल्लाह का हुक्म है, मैं अपने इरादे से न हटूंगा ।”

* क़ुरान ६, ५० ।

† ” ७, १८८ ।

यह कह कर मोहम्मद साहब रोने लगे और फिर उठ कर चल दिये। अबु तालिब मुसलमान न हुए थे। फिर भी भतीजे की हिम्मत और उनके आसुओं दोनों का उन पर गहरा प्रभाव हुआ। उन्होंने ने अपनी दाशिम को इकट्ठा करके समझाया कि—“हमारे ग़यास मोहम्मद से मिलें या न मिलें हमें उनकी जान बखानी हो चाहिये, वह हमेशा यतीमों और बेज्नों का मददगार और अपने कौल और फेन का सच्चा रहा है।” निवाच एक बहुत बड़ा के और सब ने मान लिया।

उन ही दिनों में दसवें उमर का इस्लाम धर्म को मान लेना भी एक मारके की बात थी। जो मुसलमान शिष्योपिषा चले गए थे इनको छोड़कर मुशकिन ने पचास पाठनी मोहम्मद साहब के साथ मक्के में और थे। इनमें से भी बहुत से अपने नए दीन को छिपाए रखते थे और कुछ मोहम्मद साहब, जहाँ किसी के घर में और कभी किसी के घर में बैठ कर, अपने धर्म का उपदेश करते थे।

उमर उन दिनों ३५ साल के होते थे। वह एक बड़ा मजान के थे। उन्हें पता चला कि मोहम्मद साहब उन मजान में हैं। वह राजर लेख मोहम्मद साहब जो मारके के निकले निकले। रास्ते में उन्होंने सुना कि उनकी अपनी एक बहन और दानों दोनों ने इस्लाम धर्म मान लिया है। वह मुझे ने पहले बहन के मकान की तरफ बढ़े। मकान के अन्दर से सुरान ही एक गायतें पड़े जाने की गवाह उमर के जून ने परो। और

धुसते ही वहनोई को गिराकर उन्होंने ने उसकी छाती पर पैर रखा और उसका काम तमाम करने ही को थे कि वहिन बीच में आगई। एक वार में उन्होंने ने वहिन के चेहरे को भी लहू लोहान कर दिया। वहिन ने बिना घवराये या पीछे हटे बड़ी शान्ति के साथ जवाब दिया—

“अल्लाह के दुश्मन ! क्या तू मुझे इस लिये मारता है कि मैं एक सच्चे ईश्वर को मानने वाली हूँ ! तेरे रहते और तेरे जुल्म सहकर भी मैं इस सच्चे धर्म पर डटी रहूंगी। हां, मैं कहती हूँ सिवाय एक ईश्वर के कोई दूसरा ईश्वर नहीं है, और मोहम्मद उसका रसूल है। उमर ! ले अब अपना काम पूरा कर।”

उमर के दिल पर असर हुआ। उनका हाथ रुक गया। वह सोच में पड़ गए। उनकी आंख कुरान की कुछ आयतों पर गई जो पास ही किसी चीज़ पर लिखी हुई पड़ी थीं। कुरान का यह वीसवां सूरा था। वे उसे यूँही पढ़ने लगे। फिर फिर पढ़ा। इरादा बदला। वहिन और वहनोई दोनों से माफ़ी मांगी। बाहर निकलते ही वह खज़र की जगह दिल लेकर मोहम्मद साहब के पास पहुँचे और तुरन्त इसलाम धर्म अपना लिया।

उन्हीं दिनों के आस पास मोहम्मद साहब के एक चचा हमज़ा ने जो पहले उनके कट्टर दुश्मन थे, इसलाम अपनाया। लिखा है कि “मोहम्मद साहब को उन दिनों जितनी तकलीफें दी जाती थीं और जगह जगह उनकी जो बेइज़्जती की जाती थी और जिस शान्ति और धीरज के साथ वह उस सब को

सहते थे उसे देखकर हमजा के दिल पर इतना असर हुआ कि वह कट्टर दुश्मन से बदल कर पक्का साथी हो गया।” इन्हीं तरह की और भी बहुत सी मिसालें उन दिनों की मिलती हैं।

मोहम्मद साहब को नए मन का उपदेश करने मानस मान था। अभी तक मक्के की गलियों में उनकी जान खतरे में रहती थी। यह देखकर अबु तालिब ने और बनी हाशिम खानदान के दूसरे लोगो ने सोचा कि मोहम्मद साहब और उनके धर्म मानने वालो को लेकर वह मक्के से पूरब की एक ऐसी नंग घाटी में जा वसैं जहां कोई आसानी से उन पर हमला न कर सके। इस घाटी को “अबु तालिब का रोव” कहते थे। मोहम्मद साहब, उनके साथी और उनसे वाले सब वहां जाकर रहने लगे।

फुरैश के दो बड़े खानदानो बनी हाशिम और बनी उमैया में पहले से ही लाग टाट बनी आती थी। बनी हाशिम को छोड़ कर और सब फुरैश मोहम्मद साहब के खिलाफ थे। इन्हीं में उमैया भी थे। बनी उमैया की तरफ से एक लिखाइत उनके गले में टांग दी गयी जिसमें और सब फुरैश को खत्म हो गई थी कि जब तक बनी हाशिम मोहम्मद का साथ न छोड़ें और उसे सच्चा के लिये चाही फुरैश के खाले न पर दें तब तक बनी हाशिम से लेन देन, खाना पीना, व्यापार सादी सब तरह का

चलन वन्द कर दिया जावे । तीन साल तक बनी हाशिम मोहम्मद साहब को लिए हुए उसी छोटी सी घाटी में वन्द रहते रहे । उनमें मोहम्मद साहब के घराने के ऐसे लोग भी थे जिन्होंने अभी तक इसलाम धर्म नहीं अपनाया था । सिर्फ अपने घराने की आन और मोहम्मद साहब से प्रेम के सबब वह उनका साथ दे रहे थे । इन तीन साल के कड़े वाइकाट से मोहम्मद साहब और उनके साथियों को काफी दुःख उठाने पड़े, यहां तक कि कभी कभी इन लोगों को कई कई दिन का फाका हो जाता था ।

अरब में यह रिवाज चला आता था कि कावे के मन्दिर की यात्रा के महीनों में अरबों के सब आपस के भगड़े थोड़े दिनों के लिये वन्द हो जाते थे । उन ही दिनों इन लोगों को भी बाहर निकलने और खाने पीने का सामान जमा करने का मौका मिल जाता था । उन दिनों में ही मोहम्मद साहब को भी उस घाटी से निकल कर बाहर के यात्रियों में खुले अपने मत को फैलाने का मौका मिलता था । तीन साल के बाद कहा जाता है कि वह लिखावट जब इतनी फीकी पड़ गई कि पढ़ी न जा सकती थी तब अबु तालिब के कहने सुनने से ज्यों त्यों कर यह वाइकाट खत्म हुआ ।

मोहम्मद साहब अब ५० वरस के हो चुके थे । अपने धर्म का उपदेश करते उन्हें दस वरस बीत चुके थे । पिछले तीन वरस के वाइकाट के बाद उम्मीद की जा सकती थी कि वे वे खटके मक्के में रह सकें और आज्ञादी से लोगों को अपने

धर्म का उपदेश दे सकें। लेकिन इस वाइकाट के खत्म होने के कुछ दिन बाद ही उनके सबसे बड़े सुरक्षा और प्रेमी अबु तालिब दुनिया से उठ गए। अबु तालिब उस वक्त ८० साल के ऊपर हो चुके थे।

“अबु तालिब ने अपने भतीजे के लिये अपने और अपने सगे घराने के ऊपर जिस तरह की आइतों को डुलाया, और वह भी स्व कि अबु तालिब मोहम्मद साहब के धर्म को नहीं मानता था, उसने इस बात का सबूत मिलता है कि अबु तालिब कितनी लंबी तद्विगत का, कितने बड़े दिल का, कितना दहादुर और जिनना बेनीम आदमी था। साथ ही इस बात ने मोहम्मद साहब के दिल को स्याह का भी पक्का पता चलता है, क्योंकि किर्सी मुदगरज़ घोसैवान के लिये अबु तालिब कभी इस तरह की आइत में न पड़ा, और अबु तालिब के पास मोहम्मद साहब को परखने के लिए काशी जरिये दे।”*

“जब कि अबु तालिब को इस्लाम के पैगम्बर के मिशन ने मर्कूम न था, पैगम्बर को इस तरह रिफ़ाज़ करने ने उसको यह क़ादुर अचम्मे में डालने वाली है, और मोहम्मद साहब को इमानदार का यह बहुत बड़ा सबूत है कि वह अबु तालिब जैसे ज़ुददस्त और मन्ने आदमी पर इतना गहरा असर डाल सके।”

अबु तालिब को मरे अभी तीन दिन न हुए थे कि मोहम्मद साहब की दूसरी बड़ी मददगार, उनकी २५ साल की सार्व

*Life of Mohammet, by William Muir.

†Gillman.

ख़दीजा भी चल बसी। ख़दीजा के मोहम्मद साहब पर बड़े बड़े अहसान थे। “अपनी इस व्याहता अहसान करने वाली के साथ उन्होंने ने बड़े ही प्रेम के, शान्ति के और अच्छे दिन बिताये थे, उन्हें उससे वह सच्ची मुहब्बत थी जो किसी दूसरे के साथ न हो सकती थी।”* मरने के वक्त ख़दीजा की उम्र ६५ साल की थी। इतिहास (तारीख़) गवाह है कि मोहम्मद साहब ने ख़दीजा के जीते जी अपने घर में या अपने दिल में किसी दूसरी औरत को जगह नहीं दी। अपने ऊपर ख़दीजा के अहसानों को याद करते हुए एक बार ख़दीजा के मरने के बरसों बाद मोहम्मद साहब ने कहा था—

“अल्लाह जानता है उससे (ख़दीजा से) बेहतर और बढ़ कर मेहरबान जीवन की साथी कभी कोई नहीं हुई। जब मैं ग़रीब था उसने मुझे मालदार बनाया, जब लोग मुझे झूठा कहते थे उसने मुझपर यक़ीन किया, जब दुनिया मेरे खिलाफ़ थी और मुझे तकलीफ़ें पहुंचा रही थी उस वक्त उसने सच्चाई के साथ मेरा साथ दिया।”

ख़दीजा से मोहम्मद साहब के दो लड़के और चार लड़कियां हुईं। दोनों लड़के छोटी उम्र में ही ख़दीजा की ज़िन्दगी में मर गए। लड़कियां मौजूद थीं।

अबु तालिब और ख़दीजा दोनों की ऐसे वक्त में मौत मोहम्मद साहब के ऊपर बहुत बड़ी आफ़त थी। अबु तालिब

*Heroes, Hero-worship and the Heroic in History, by Thomas Carlyle.

के मरते ही कुरैश और खास कर दो कुरैश सरदारों अबु सुफियान और अबु जहल ने फिर मक्के के अन्दर मोहम्मद साहब का रहना मुशकिल कर दिया। एक दिन जब मोहम्मद साहब उपदेश देने के लिये नगर में निकले तो उनके सिर पर मैला डाल दिया गया। घर पहुँच कर मोहम्मद साहब की एक बेटी जिसने उनका सिर धोया इसे देख कर रो पड़ी। मोहम्मद साहब ने उसे तसल्ली देते हुए कहा—“मेरी बेटी ! रो मत ! सचमुच अल्लाह तेरे बाप की मदद करेगा ।”

मक्के में मोहम्मद साहब का काम ज्यादा नहीं बढ़ रहा था। उन्होंने ने मक्के से कोई ६० मील दूर तायफ नामी शहर में जाकर उपदेश देने का इरादा किया। अपने वफादार साथी जैद को वह अपने साथ ले गए। तायफ उन दिनों अरब दुत परतों का एक बहुत बड़ा गढ़ था। देवी ‘लात’ का वहाँ एक बहुत बड़ा मन्दिर था और उसकी खूब पूजा होती थी।

कई दिन के सफर के बाद मोहम्मद साहब और जैद तायफ पहुँचे। वहाँ के बड़े बड़े लोगों से मिलकर मोहम्मद साहब ने उन्हें अपना धर्म समझाया जिसमें खास चीज एक निराकार को छोड़ कर और सब देवी देवताओं की पूजा को छोड़ देना और नेक काम करना था। किसी पर कोई असर न पड़ा। फिर उन्होंने ने गलियों में खड़े होकर उपदेश देना शुरू किया। जहाँ वह बोलने खड़े होते लोग उन्हें बुरा भला कहने लगते। शोर मचाकर उनकी आवाज बन्द कर दी जाती। कई बार

उन्हें पत्थर मार मार कर घायल कर दिया गया। कई दिन वह वहां उपदेश देते रहे, लेकिन रोज़ यही हालत होती। आखिर एक दिन लोगों ने उन्हें ज़बरदस्ती शहर से बाहर निकाल दिया। कई मील तक लोग मज़ाक़ उड़ाते और गालियां देते उनके पीछे गए। “पत्थरों की मार से उनकी दोनों टांगों से लहू बह रहा था।” ज़ैद ने उन्हें बचाने की कोशिश की, जिसमें एक पत्थर ज़ैद के सिर पर भी लगा। शहर से करीब तीन मील दूर आकर लोग वापिस लौट गए। मोहम्मद साहब और ज़ैद थक कर एक पेड़ के साए में बैठ गए। थोड़ी देर के बाद मोहम्मद साहब ने घुटने टेककर जिस तरह अल्लाह से दुआ मांगी वह यह थी—

“ऐ मेरे रब ! अपनी कमज़ोरी, अपनी बेबसी और दूसरों के सामने अपने छोटपन की मैं तुझ ही से शिकायत करता हूँ। तू ही सब से बड़कर दयावान है। निर्बलों का तू ही बल है। तू ही मेरा मालिक है। अब तू मुझे किसके हाथों में सौंपेगा ? क्या इन परदेसियों के हाथों में जो मुझे चारों तरफ़ से घेरे हैं ? या उन दुश्मनों के हाथों में जिनका तूने मेरे घर के अन्दर मेरे झिल्लाफ़ पल्ला भारी कर रखा है ? अगर तू मुझसे नाराज़ नहीं है तो मुझे कोई सोच नहीं, मैं तो समझता हूँ तेरो मुझ पर बड़ी दया है। तेरे दया भरे चेहरे की ज्योति (नूर) ही में मैं पनाह चाहता हूँ। उसी से अंधेरा दूर हो सकता है और इस दुनिया और दूसरी दुनिया दोनों में शान्ति मिल सकती है। तेरा गुस्सा मुझ पर न पड़े। जब तक तू खुश न हो, गुस्सा करना

तेरा काम है। तुझसे बाहर न किसी में कोई बल है और न कोई और चारा !”

मोहम्मद साहब के पास सिवाय परमात्मा के या अपने भीतर के विश्वास के अब कोई सहारा न था। तायफ़ से इस तरह निकाले जाने के बाद अगर वे मक्के जाते तो उनकी हालत और भी बुरी होती। वह कई दिन तक जंगल में रहे, और ज़ैद को मक्के भेजकर उन्होंने वहाँ एक जानने वाले का घर अपने रहने के लिये ठीक किया। कई बरस तक वह इसी घर में रहे और सिर्फ़ कावे की यात्रा के दिनों में बाहर निकल कर बाहर से आने वाले यात्रियों में अपने धर्म का उपदेश देते रहे।

एक दिन यात्रा ही के दिनों में जब वह मक्के से कुछ उत्तर में अकबह की पहाड़ी पर उपदेश दे रहे थे यसरव* के कुछ यात्रियों का ध्यान उनकी तरफ़ गया। मोहम्मद साहब के उपदेश और उनकी सच्चाई का इन लोगों पर असर हुआ। इनमें से ६ आदमियों ने इस्लाम धर्म अपना लिया और अपने शहर जाकर, जो मक्के से २८६ मील था, लोगों से मोहम्मद साहब के उपदेशों का चर्चा किया।

अगले साल उनके साथ छै और आदमी यत्तरव ने गए। ये यसरव के दो बड़े कबीलो और और ज़ररज के खास लोगो में से थे। इन्हो ने भी इस्लाम धर्म अपना लिया

*जिसे बाद में लोग ‘मदीना’ कहने लगे।

और दस्तखत कर के नीचे लिखे वचन लिख कर मोहम्मद साहब को दे दिये—

“हम एक ईश्वर के साथ किसी दूसरे को न जोड़ेंगे । यानी एक ईश्वर के सिवा किसी दूसरे की पूजा न करेंगे । न चोरी करेंगे न बदचलनी करेंगे । न अपने वच्चों की हत्या करेंगे । न जान बूझकर किसी पर झूठा इलज़ाम लगाएंगे । न किसी ऐसी बात में जो अच्छी होगी, पैगम्बर के हुकुम को तोड़ेंगे । और सुख दुख दोनों में पैगम्बर का पूरा साथ देंगे ।”

इसलाम के इतिहास में यह “अक़बह का पहिला वादा” कहलाता है ।

यसरब के लोगों के कहने पर मुहम्मद साहब ने अपने एक समझदार साथी मुसअब को इसलाम धर्म फैलाने के लिये उनके साथ यसरब भेजा । यसरब में एक साल तक मुसअब ने जिस होशियारी और धीरज के साथ अपने धर्म को फैलाया उसकी बहुत सी मिसालें मिलती हैं ।

‘ एक बार मुसअब किसी के घर में बैठा कुछ लोगों को उपदेश दे रहा था । इतने में उसैद नामी एक आदमी भाला लेकर उस घर में घुसा और कहने लगा—“तुम लोग यहां क्या कर रहे हो ? तुम कमज़ोर दिमाग के आदमियों को उनके धर्म से गिरा रहे हो ! तुम्हें अपनी जान प्यारी है तो यहां से भाग जाओ ।” मुसअब ने बड़े ठण्डे दिल से जवाब दिया—“बैठ जाइये और हमारी बात सुनिये, अगर हमारी बात सुन कर आपको

अच्छी न लगे तो हम यहां से चले जायेंगे।” उसैद ने अपना भाला ज़मीन में गाड़ दिया और बैठ कर सुनने लगा। मुसअव ने उसे इस्लाम के बुनियादी असूल समझाये और कुरान के कई हिस्से पढ़ कर सुनाए। उसैद पर बहुत बड़ा असर हुआ। कुछ देर बाद उसने कहा—“इस धर्म में मैं किस तरह शामिल हो सकता हूँ ?” मुसअव ने जवाब दिया—“जाकर नहा-इये, और फिर आकर कहिये और मान लीजिये कि सिवाय एक खुदा के दूसरा कोई खुदा नहीं है और मुहम्मद उसका रसूल है।” उसैद ने ऐसा ही किया और वह मुसलमान हो गया।

इसी तरह की और भी बहुत सी बातें मुसअव के यसरव में धर्म फैलाने की मिलती हैं। नतीजा यह हुआ कि यसरव में मुसअव का उम्मीद से कहीं बढ़कर काम हुआ। घर घर नए धर्म का चरचा होने लगा। अगले साल सन् ६२२ ईसवी में, मुसअव के साथ ७० और आदमी उनमें से जिन्होंने इस्लाम धर्म अपना लिया था कावे की यात्रा के दिनों में मर गए। उनका इरादा था कि मोहम्मद साहब को यसरव ले जाकर मर्यादानी के जुल्मों से उन्हे बचावें। मोहम्मद साहब के दिल में भी मर्यादा छोड़कर यसरव में अपने नए धर्म की किस्मत आजमाने का खयाल पैदा हो चुका था।

आधीरात को उसी अकब्र की पहाड़ी पर बातचीत हुई। पिछले साल के वादे में ये टुकड़ा और जोड़ दिया गया—

“हम लोग (यसरव में) पैग़म्बर और उसके साथियों की उसी तरह हिफ़ाज़त करेंगे जिस तरह अपने बाल बच्चों की करते हैं।”

सबने क्रसम खाई । इसे ‘अक्रवह का दूसरा वादा’ कहते हैं ।

मोहम्मद साहब ने अब अपने साथियों को लेकर यसरव में जा बसने का फैसला कर लिया । लेकिन खुद शहर छोड़ने से पहले वह अपने सब साथियों को वहां भेज देना चाहते थे । दो दो चार चार कर उनके बहुत से साथी धीरे धीरे यसरव के लिये चल दिये । मोहम्मद साहब, अबु बक्र और उनके घरों के लोग मक्के में रह गए ।

कुरैश को इस का पता चला । उन्हो ने सोचा ऐसा न हो कि वहां जाकर मोहम्मद का बल और बढ़ जावे और कभी बाद में हमे और हमारे शहर को मोहम्मद से और ज्यादा नुक़सान पहुँचे । कुरैश की दुशमनी और भड़की । अबु सुफियान मक्के का हाकिम था । उसने कुरैश के सरदारों को जमा करके तय कर दिया कि मोहम्मद को शहर से ज़िन्दा न निकलने दिया जाय । अगर कोई एक आदमी मोहम्मद की हत्या करता तो यह डर था कि वनी हाशिम ख़ानदान के लोग या मोहम्मद के साथी उस हत्या करने वाले से और उसके ख़ानदान वालों से बदला लेते । इस लिये तय किया गया कि हर ख़ानदान का एक एक आदमी जाकर एक साथ अपने अपने खंज़र मोहम्मद के वदन में भोंक दे ।

रात को ये सब लोग मोहम्मद साहब के मकान के पास जमा हो गए। इनकी सलाह थी कि ठीक सुबह को ज्यों ही मोहम्मद साहब घर से निकलें उन पर हमला किया जाय।

दीवार के एक सूराख से इन्होंने मोहम्मद साहब को बिछौने पर पड़ा देख लिया था। मोहम्मद साहब का पता चल गया। उन्होंने अली को अपनी जगह बिछौने पर लिटा दिया। उसके ऊपर अपनी हरी चादर डाल दी और खुद रात ही को पीछे के रास्ते घर से निकल गए।

मोहम्मद साहब सीधे अबु बक्र के घर गए। रातों रात दोनों भक्के से पैदल निकल कर शहर से तीन चार मील दूर एक पहाड़ी गुफा के अन्दर जाकर छिप गए। तीन दिन तक ये लोग इसी गुफा में रहे और चौथे दिन अंटों का दन्दोयन्त करके यसरव के लिये रवाना हो गए।

इस बीच में कुरैश ने ऐलान कर दिया था कि जो भी मोहम्मद को ज़िन्दा या मुरदा नाकर पेश करेगा उसे एक सौ अंट इनाम में दिये जावेंगे। बहुत से घुड़ सवार चारों तरफ उनकी खोज में निकले। अपना पीछा करने वालों ने कई जगह बाल बाल बचने मोहम्मद साहब सोमवार ८ रबीउल अख्यर, २० सितम्बर सन् ६२२ ईसवी को यसरव पहुँचे। थोड़े दिन बाद मोहम्मद साहब और अबु बक्र के घरवाले भी इन्हें आकर मिल गए।

यसरव वालों ने मोहम्मद साहब की बड़ी आव भगत की और उनके आने की खुशी में अपने शहर का नाम 'यसरव' से बदल कर 'मदीन तुन्नवी' यानी 'नवी नगर' रख दिया। इसी से बाद में "मदीना" नाम पड़ा।

इस्लाम के इतिहास में यह वही "हिजरत" है जिससे मुसलमानों का हिजरी सन् शुरू होता है। हिजरत का मतलब (धर्म के लिये) अपना घर छोड़ कर दूसरी जगह जाना है। इस दिन से ही मोहम्मद साहब और इस्लाम दोनों की ज़िन्दगी में एक नया दरवाज़ा खुलता है।

कहा जाता है कि मुहम्मद साहब के मदीना पहुँचने से पहले कोई डेढ़ सौ मुसलमान मक्के से वहाँ पहुँच चुके थे। कुछ को मक्के वालों ने ज़बरदस्ती पकड़ कर रोक लिया था। जो लोग मदीने गए उनमें से कुछ को अपना धर्म बचाए रखने के लिए बहुत कुछ खोना पड़ा था। इनमें सुहैव नामी एक यूनानी था। सुहैव पहले एक गुलाम रह चुका था। उसके मालिक ने उसे आज़ाद कर दिया था। आज़ाद होकर सुहैव ने मक्के में तिजारत शुरू की। थोड़े दिनों में वह मक्के के मालदार से मालदार सौदागरों में गिना जाने लगा। जब उसने मुसलमान होकर मक्के से मदीने जाना चाहा तो मक्के के लोगों ने उसे सिर्फ़ इस शर्त पर जाने दिया कि वह अपना सारा धन, दौलत और सारी जायदाद मक्के ही में छोड़ जावे और उस से हमेशा के लिए हाथ धो बैठे। सुहैव ने ऐसा ही किया। उसने अपना

सारा धन और माल मक्के ही में छोड़ दिया लेकिन अपने पैगम्बर का साथ न छोड़ा ।

सन् ६१० ईसवी से ६२२ ईसवी तक १३ साल के अन्दर जिस मजबूती, विश्वास, धीरज और हिम्मत से, तरह तरह की मुसीबतें मेलते, मोहम्मद साहब ने उस सबाई के फैलाने को जारी रखा जिसे वह अपने देश और दुनिया दोनों के दुखों का एक ही इलाज समझते थे, दुनिया के इतिहास में वह एक अनोखी चीज थी । इन १३ साल के अन्दर ले देकर करीब तीन सौ आदमियों ने उनके धर्म को अपनाया जिनमें १०१ इथियोपिया जा चुके थे और बाकी बहुत से अब अपने घर वार और अपनी जायदादें हमेशा के लिये छोड़कर अपने पैगम्बर के साथ मदीने आगए थे ।

“अरब के पैगम्बर ने लगातार १३ साल तक हर तरफ से जिस तरह की नाउम्मेदी, धमकियों, बेपरवाही और तकलीफों का सामना करते हुए, अपने विश्वास को अटल रखा, लोगों को बुरे ज़मानों के लिये पछताने का उपदेश दिया और अपने शहरवालों को जो एक ईश्वर के मानने से इनकार करते थे ईश्वर के गुस्ते का हर दिखावा, उस सारी कोशिश की दूसरी मिसाल दुनिया के इतिहास के सत्रों में दूसरी से भी नहीं मिलती । थोड़े से वज़ादार मरदों और औरतों का साथ लिये, और अपनी आगे की जीत पर भरोसा रखते हुए, बर हद तरह

की वेइज़ज़ती, धमकियों और मुर्सीबतों को धीरज के साथ बरदाश्त करते रहे।*”

*Life of Mohammet, by Sir William Muir, Vol. IV, PP. 314-315.

मदीने में राजा की हैसियत से



मदीने पहुँच कर धीरे धीरे मोहम्मद साहब और इसलाम दोनों के दिन फिरने शुरू हुए। इसलाम के मानने वालों की तादाद ज़ोरों से बढ़ने लगी। इनमें दो तरह के लोग ज्यादा थे। एक वह जो मक्के से आए थे और 'मोहाजिर' यानी हिजरत करने वाले कहलाते थे और दूसरे वह मदीना वाले जिन्होंने इन्हें मदीना बुलाकर पनाह दी थी और जो 'अन्सार' यानी 'भददगार' कहलाते थे। बहुत से मोहाजिर उस वक्त बेसामान और बेघरवार के थे। मोहम्मद साहब की सलाह ने एक एक अन्सार ने एक एक या दो दो मोहाजिर को अपना भाई बनाकर अपने घर में रख लिया। इस तरह एक नया 'भाईचारा' मदीने में बन गया और अन्सार और मोहाजिर में एक दूसरे से प्रेम बढ़ता गया। पहले कुछ साल तक यह रिवाज रहा कि जब कोई ऐसा अन्सार मरता था जिसने किसी मोहाजिर को अपना "भाई" बना रखा था तो उसकी सारी जायदाद उस मोहाजिर

को मिल जाती थी। वाद में इस की जरूरत न रही और यह रिवाज बन्द हो गया।

मदीने के दो सबसे बड़े कबीलों बनी और बनी खजरज में १२० साल से लगातार लड़ाई चली आती थी। शहर में कभी किसी का जोर होता था और कभी किसी का। नतीजा यह था कि शहर का अमन, शहर की सुख शान्ति हमेशा खतरे में रहती थी। अब इन दोनों कबीलों के जो जो लोग नए धर्म को मानने लगे उनमें इस पुराने झगड़े की जगह एकता और प्रेम दिखाई देने लगा। इस तरह सदियों की इस फूट और १२० साल की लड़ाइयों के हमेशा के लिये मिट जाने और शहर में फिर से सुख और शान्ति कायम होने की आस बंधी। जहां न कोई सरकार थी और न कोई हाकिम, जहां सिचाय तलवार के आपस के झगड़ों के फंसले का कोई तरीका न था, वहां अब मोहम्मद साहब के जरिये एक ठीक ठीक सरकार कायम होने लगी, और इन्साफ के साथ लोगों के झगड़े चुकाए जाने लगे। इस सब से इसलाम के फैलने में बड़ी मदद मिली।

मोहम्मद साहब के उपदेश देने और मुसलमानों की नमाज के लिये अब एक अलग जगह की जरूरत हुई। दो बर्तीम भाइयों ने अपनी ज़मीन मुक्त देना चाहा। लेकिन मोहम्मद साहब के हुकुम से अबु बक्र ने उन्हें कीमत दे दी। खजूर के अंगूर तनों के खम्भों पर खजूर ही की टहनियों और पत्तियों

से एक बहुत बड़ा छप्पर छा दिया गया जिसके इधर उधर ईंट और गारे की दीवारें खड़ी कर दी गईं। यहीं मदीने की सबसे पहली मसजिद थी। उसका एक हिस्सा परदेसियों के ठहरने और बेघर के लोगों के रहने के लिये छोड़ दिया गया। रात को रोशनी के लिये बहुत दिनों तक तेल बत्ती की जगह खजूर की छिपटियां जला दी जाती थीं।

कुछ ही दिनों में शहर की हकूमन का सारा बोझ मोहम्मद साहब को अपने ऊपर लेना पड़ा। अरब के दूसरे नगरों के हाकिमों की तरह मदीने का हाकिम भी वहां के सब खानदानों के मुखियों की राय से चुना जाता था। मुसलमानों की नज़रों में मोहम्मद साहब से बढ़कर कोई दूसरा हाकिम न हो सकता था। जिन लोगों ने इसलाम अभी तक नहीं अपनाया था वह भी बनी और बनी खज़रज की १२० साल की घरेलू लड़ाइयों से उकता गए थे। इसलिए मदीने के सब लोगों ने मोहम्मद साहब को, जो अभी तक 'अल अमीन' कहलाते थे, करीब करीब एक राय से शहर का हाकिम चुना। इस बोझ को अपने ऊपर लेते ही मोहम्मद साहब ने शहर के लोगों के नाम एक ऐलान निकाला जिसके कुछ टुकड़े ये थे—

“अल्लाह के नाम पर जो सबके ऊपर दया करने वाला और रहान है। अब्दुल्ला के बेटे और अल्लाह के रसूल मोहम्मद की तर्फ से, सब मुसलमानों और उन सब लोगों के नाम, चारों वे जिलों में रहने के हैं, जो एक साथ मिलकर रहने की तय्यार हैं। ये सब लोग एक

‘उम्मत’ (क्रौम) होंगे.....किसी (बाहर वाले) की सुलह होगी तो सबसे और लड़ाई होगी तो सबसे। इनमें से किसी को यह हक़ न होगा कि वह सिर्फ़ अपने मज़हब वालों के दुश्मनों से अलग सुलह करले या उनके साथ अलग लड़ाई छेड़ दे।.....औफ़, नज़्ज़ार, हारिस, ज़श्म, सालवाह, और क़बीलों की अलग अलग शास्त्रों के यहूदी और सब लोग जो मदीने में आकर बस गए हैं, मुसलमानों के साथ मिलकर एक ‘मुत्तहिदा उम्मत’ (मिली हुई क्रौम) समझे जावेंगे। वे अपने अपने धर्मों का उतनी ही आज्ञादी के साथ पालन कर सकेंगे जितनी आज्ञादी के साथ मुसलमान अपने धर्म का।.....जो जुर्म करेगा उसे सज़ा दी जावेगी.....मुसलमानों का धर्म (फ़र्ज़) होगा कि वह हर ऐसे आदमी से अलग रहें जो कोई जुर्म करे या किसी को सतावे या किसी पर जुल्म करे। कोई किसी जुर्म करने वाले को तरफ़दारी न करेगा चाहे वह जुर्म करने वाला उसका कितना ही पास का रिश्तेदार क्यों न हो।.....जो लोग इस ऐलान को मान लेंगे उनमें आपस में अगर कभी कोई झगड़ा होगा तो वह अल्लाह के नाम पर मोहम्मद के सामने लाया जावेगा।”

मदीने के सब लोगों ने इस ऐलान को बड़ी खुशी के साथ मान लिया।

मदीने के बाहर भी चारों तरफ़ बहुत से ईसाई, यहूदी और दूसरे क़बीले थे जिनके साथ अपना बर्ताव तय करना ज़रूरी था। प्रेम और शान्ति के साथ उनके कानों तक नए धर्म का संदेश पहुँचाना भी ज़रूरी था। इनमें से जिन लोगों ने मदीने

वालों के साथ मिलकर एक क़ौम और एक राज होकर रहना पसन्द किया उनको खुशी से अपना लिया गया, और जिन्होंने चाहा उनके साथ मुल्ह की शर्तें तय हो गईं। इन दिनों सिनाई पहाड़ के ऊपर सेण्ट कैथराइन के ईसाई मठ के महन्तो और अरब के और सब ईसाइयों के लिये मोहम्मद साहब का जो ऐलान निकला वह बहुत ही मारके का था। ऊपर आ चुका है कि उस ज़माने के ईसाई मूर्तियां पूजने थे और उनके गिरजे मूर्तियों से भरे रहने थे। ऐलान के कुछ हिस्से ये हैं—

“अल्लाह के नाम पर जो सबके ऊपर दया करने वाला और रहीम है ! अल्लाह के रसूल मोहम्मद की तरफ से सिनाई पहाड़ के महन्तो और आम तौर पर सब ईसाइयों के लिये ।

“सबमुक्त अल्लाह सबने बड़ा, सबसे महान् है, तमान पैगम्बर उर्सी के पास से आए, और कहीं नहीं लिखा है कि अल्लाह ने किंगों के साथ बेइन्साफ़ी की हो.....

“मेरे धर्म के मानने वालों में से चारों पैगं बादशाह हों. चारों कुछ भी हो, जो कोई मेरे इस वादे और इस सौगन्ध को जो मैंने के ऐलान में दर्ज है तोड़ने की हिम्मत करेगा, वह अल्लाह के बचन को तोड़ने, सौगन्ध को भुठलाने और (ईश्वर न करे !) अपने इमान को तोड़ने का पाप करेगा ।

“जब कभी कोई ईसाई महन्त याजा करते हुए (मदीने के राज के अन्दर) किसी पहाड़ या पहाड़ी, गाव या दलत में, कन्दर नर या रेगिस्तान में, या किसी मठ, गिरजे या दूसरे इबादतगाने में जाकर

ठहरेगा तो सभझना चाहिये कि उसके जान माल का जी जान से बन्दोबस्त और उनकी हिफाज़त करने के लिये मैं खुद धर्म के सब मानने वालों समेत उसके साथ हूँ, क्योंकि ये लोग हमारी ही उम्मत (क़ौम) का हिस्सा हैं और उनसे हमारी इज़्ज़त है।

“मैं इस ऐलान के ज़रिये अपने सब अफ़सरों को हुकुम देता हूँ कि वे इन लोगों से किसी तरह का टैक्स या और कोई चुङ्गी वग़ैरह न मागें, उन्हें किसी ऐसी बात के लिये सताना नहीं चाहिये।

“किसी दूसरे को उनके क़ाज़ियों (जजों) या सरदारों को बदलने का हक़ न होगा, और न कोई उन्हें इन जगहों से हटा सकेगा।

“सड़क पर चलते हुए कोई उन्हें किसी तरह का दुःख न देगा।”

“किसी को उनसे उनके गिरजे छीनने का हक़ न होगा।

“और न उनके जजों, सरदारों, महन्तों, नौकरों, चेलों या उनके किसी भी आदमी से किसी तरह का टैक्स लिया जायगा, न उन्हें और किसी तरह दिक् किया जायगा, क्योंकि मेरे इस वादे और ऐलान में वह और उनके सब आदमी शामिल हैं।”

“जो ईसाई मामूली घरबारी हैं और अपने माल और रोज़गार में से टैक्स दे सकते हैं, उनसे भी जितना ठीक होगा उससे ज़्यादा हरगिज़ न लिया जायगा।

“ईश्वर का साफ़ हुकुम है कि इसके सिवा उनसे और कुछ न लिया जायगा।

“अगर कोई ईसाई औरत किसी मुसलमान के साथ शादी कर ले, तो वह मुसलमान उसके रास्ते में कोई रुकावट न डालेगा, न उसे

गिरजा जाने से रोकेगा, न दुआ करने से और न किसी तरह अपने धर्म पर चलने से ।

[किसी भी यहूदी या ईसाई मां के मुसलमान बेटे का धर्म (फर्ज) है कि मां को टट्टू वगैरह पर बैठाकर उसके गिरजा के दरवाजे तक पहुंचा दे, और अगर वह इतना गरीब हो कि टट्टू का इन्तजाम न कर सके, या अगर मां इतनी बूढ़ी और कमजोर हो कि सवारी पर न बैठ सके तो मुसलमान बेटे का धर्म है कि मां को अपने कन्वो पर बैठाकर उसके पूजाघर तक पहुँचा दे ।]

“अपने गिरजों की मरम्मत करने में कोई उन्हें न रोक सकेगा, और अगर ईसाइयों को अपने गिरजों या मठों की मरम्मत के लिये या अपने धर्म की किसी दूसरी बात के लिये मदद की जरूरत हो तो मुसलमानों का धर्म है कि उनको मदद दें ।

...

...

...

“उनके खिलाफ कोई हथियार न उठावेगा, हाँ उनकी दिशाज्जत के लिये हथियार उठाना मुसलमानों का धर्म होगा । अगर देश के बाहर की किसी ईसाई ताकत के साथ मुसलमानों की कमी लगाने हो, तो देश के अन्दर के किसी ईसाई के साथ उसके ईसाई होने की वजह से वैद्वेज्यता का सलूक न किया जायगा ।

“इस ऐलान से मैं हुकुम देता हूँ कि जब तक दुनिया रहे तब तक मेरे धर्म का कोई मानने वाला मेरे इस हुकुम के खिलाफ चलने या अमल करने की हिम्मत न करे । जो मुसलमान इसके खिलाफ चलेगा

वह ईश्वर और उसके रसूल से बागी और अपने धर्म से 'मुत्तद' (फिरा हुआ) समझा जायगा।*॥

इस ऐलान को हज़रत अली ने अपने हाथ से लिखा, वतौर गवाहों के मोहम्मद साहब के सोलह साथियों ने इस पर दस्तख़त किये, और तारीख़ ३ मोहर्रम, सन् २ हिजरी को मोहम्मद साहब ने मसजिद में बैठकर अपने हाथ से उस पर अपनी मोहर लगाई।

मदीने और आसपास के बढ़ते हुए देश के हाकिम या राजा की हैसियत से मोहम्मद साहब ने अलग अलग मज़हबों के लोगों के साथ कभी किसी तरह का भेदभाव (फरक़) नहीं किया, सबको अपने अपने मज़हबों पर चलने की पूरी आज़ादी दी और मज़हबी फ़रक़ के रहते हमेशा सबको "एक उम्मत" यानी एक क़ौम या एक राष्ट्र या एक नेशन कहकर बयान किया।

* "A Description of the East and other Countries," by Richard Pococke, Bishop of Meath, vol I, P. 268 Edn 1743

इसलाम फैलाने का तरीका

—२५—

मदीने में पहुंच कर पहली बार मोहम्मद साहब को खुले तौर पर, पूरी शान्ति और आजादी के साथ, अपने विचारों को फैलाने का मौका मिला। अब वह रोज़ बड़े जोश के साथ उपदेश देने लगे। हजारों आदमी उनका पयान (संदेश) सुनने के लिए जमा होते थे। उनके इस काम में किसी के साथ किसी तरह के भी जोर ज़बरदस्ती की कोई जगह न थी। मदीने में जिन दिनों उनकी ताकत अपने पूरे जोर पर थी उन दिनों का क़ुरान में एक साफ़ आयत है—

“ ला इकराह फ़िद्दीन ”

यानी—“धर्म के मामले में किसी तरह की ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिये।” (२-२५६)

क़ुरान में शुरू से आखीर तक जगह जगह इस तरह की आयतें मौजूद हैं जिनमें यह बताया गया है कि अपने धर्म को लोगो में किस तरह फैलाया जाय। इनमें शुरू की कुछ आयतें ये हैं—

“लोगों को अपने रव्व (पालनहार) के रास्ते पर आने के लिए बुलाओ तो होशियारी के साथ और बड़े अच्छे शब्दों में समझाओ । उनसे बहस करो तो अच्छे से अच्छे और मीठे लफ्ज़ों में करो ।” (१६-१२५)

“और जो कुछ वह कहें उसे सब्र के साथ सुनो और बरदाश्त करो और जब उनसे अलहदा हो तो बड़े प्रेम और खूबी के साथ अलहदा हो ।” (७३-१०)

“जिन लोगों ने तुम्हारे धर्म को मान लिया है उनसे कह दो कि वे उन लोगों पर जो तुम्हारी बात नहीं मानते और जिन्हें ईश्वर से अपने कामों के फल मिलने का डर नहीं है किसी तरह का गुस्सा न करें । जो कोई नेकी करेगा अपनी ही आत्मा के लिए और जो कोई बुराई करेगा अपनी ही आत्मा के लिए, फिर सबको उसी रव्व के पास लौटकर जाना है ।” (४५-१४, १५)

“तुम्हारा काम, या किसी रसूल का काम, इससे ज्यादा और कुछ नहीं कि साफ़ साफ़ शब्दों में अपनी बात कह दो । फिर अगर वे पीठ मोड़कर चल दें तो चल दें, तुम्हारा काम सिर्फ़ अपनी बात समझा देना ही तो था ।” (१६-३५, ८२)

“जिन लोगों के पास दूसरी धर्म की किताबें हैं उनके साथ बहस न करो और अगर करो तो बहुत ही मीठे शब्दों में करो, फिर जो ज़बरदस्ती करे और न माने वह न माने, उनसे कहो कि हम उस किताब को भी मानते हैं जो ईश्वर ने हमें दी है और उसे भी मानते

हैं जो ईश्वर ने तुम्हें दी हैं, हमारा और तुम्हारा अल्लाह एक ही है, और उसी एक अल्लाह के सामने हम सर झुकते हैं।” (२९, ४६)

“इन्ही विचारों की तरफ लोगों का ध्यान दिलाते रहो, और जिस तरह तुम्हें हुकुम दिया गया है उसी तरह ठीक ठीक खुद अपनी जिन्दगी बसर करो, दूसरों के बहमों में मत आओ, और कह दो कि मैं अल्लाह को सब कितायों को मानता हूँ, मुझे इन्साफ का हुकुम है. अल्लाह हमारा और तुम्हारा सबका रब्व है। जो तुम करेंगे उसका तुम्हें फल मिलेगा और जो मैं करूंगा उसका मुझे फल मिलेगा. हमारे बीच में कोई झगड़ा नहीं है, अल्लाह हम सबको मिला देगा, हम सबको उसी के पास लौटकर जाना है।” (४२-१५)

“फिर भी वे तुम्हारी न सुनें और मुट मोड़ लें, तो तुम उनसे कोई निगहवान बनाकर नहीं भेजे गए हो, तुम्हारा काम सिर्फ़ हमको देना है।” (४२-४८)

“अगर तुम्हारा रब्व चाहता तो सबकुछ दुनिया के सब लोग एक खयाल के हो जाते, तो क्या तुम किसी के साथ हथगदस्ती करोगे कि सब तुम्हारी ही बात मान लें ?” (१०-९९)

“और हमने तुम्हें सिर्फ़ इसलिये भेजा है कि सब आदमियों के नैक कामों के बदले में अच्छे फल की और बुरे कामों के बदले में बुरे फल की बात बताओ।” (३४-२८)

ऊपर की सब आयतें तब की हैं जब मुहम्मद नार्थन मरने में थे।

नीचे लिखी आयतें उस ज़माने की हैं जब मुहम्मद साहब मदीने में थे, ये और भी ज्यादा साफ हैं—

“धर्म के मामले में किसी तरह की भी ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिए ।” (२-२५६)

“अल्लाह और उसके रसूल का कहना मानो । न मानो तो तुम्हारी मरज़ी, रसूल का काम साफ़ साफ़ कह देना भर है ।” (६४-१२)

“वह तुमसे हुज्जत करें तो उनसे कह दो कि मैंने अपने आपको बिलकुल अल्लाह की मरज़ी पर छोड़ दिया है । यही इसलाम शब्द के माइने हैं । जिन्होंने मेरी बात मान ली उन सब ने भी अपने को उसी ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ दिया है । जिन लोगों के पास दूसरी धर्म की किताबें हैं या जिनके पास नहीं हैं उन सबसे कहो कि तुम भी अपने को एक ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ दो । वे मान जायें तो अच्छा करेंगे । न मानें तो तुम्हारा काम कह देना ही है, अल्लाह अपने सब बन्दों को देखता है ।” (३-१९)

“तुम में इस तरह के आदमी होने चाहियें जो लोगों को सबके साथ नेकी करने का उपदेश दें, सबको नेक कामों में लगाएं और बुरे कामों से बचाएं, ऐसे लोगों का ही भला होगा ।” (३-१०३)

“हमने हर क़ौम के लिए पूजा के अलग अलग तरीक़े ठहरा दिये हैं, जिन पर वह चलते हैं, इसलिए इस बात पर नहीं झगड़ना चाहिए । तुम्हें उन्हें सिर्फ़ ईश्वर की तरफ़ बुलाना चाहिए, सचमुच तुम सीधे रास्ते पर हो, और जो वे तुमसे झगड़ा करें तो कह दो अल्लाह सब जानता है कि तुम क्या करते हो ।” (२२-६७, ६८)

“और जो ग़ैर-मुसलमानों में से कोई तुम्हारी पनाह में आना चाहे, तो उसे अपने पास बुला लो, जिससे वह तुम्हारे पास रह कर अल्लाह का कलाम यानी अल्लाह की बताई बातें सुने, और जो इस पर भी वह तुम्हारी बात न माने तो उसे होशियारी से उसके घर तक या किसी हिफाज़त की जगह तक पहुंचा दो, क्योंकि वे लोग अनजान हैं।” (९-६)

एक बार किसी अरब ने जो पुराने धर्म का मानने वाला था हज़रत अली से पूछा कि अगर हम इसलाम धर्म के बारे में या किसी और बात के बारे में कुछ जानने के लिये पैग़म्बर के पास जाना चाहें तो हमें कुछ डर तो नहीं है ? हज़रत अली ने इसी ऊपर की आयत को नक़ल करते हुए जवाब दिया कि किसी को कोई डर नहीं है। (इब्ने अन्बास)

“तुम्हें उनमें इस तरह के आदमी मिलते रहेंगे जो एक बार बात मान कर उससे फिर जावें, यानी दगा करें, उन्हें माफ़ कर देना और छोड़ देना, सचमुच अल्लाह उन लोगों को प्यार करता है जो दूसरों पर अहसान करते हैं।” (५-१३)

मुहम्मद साहब का अपने धर्म को फैलाने का तरीका जिन्दगी भर ऐसा ही रहा जैसा कुरान की इन आयतों में बताया गया है। उनकी सारी जिन्दगी में एक भी मिसाल ऐसी नहीं मिलती जिसमें उन्होंने किसी को भी तलवार के जोर से या किसी तरह का दबाव डाल कर अपने धर्म में शामिल किया हो, और न उन्होंने किसी फकीरे या गिरोह को अपने धर्म में

लाने के लिए कभी किसी पर भी चढ़ाई की या एक भी लड़ाई इस काम के लिए लड़ी।* वह धर्म में दूसरों को उतनी ही आज़ादी देते थे जितनी वह दूसरों से अपने लिए चाहते थे।

मदीने में पहुँचने के बाद मुहम्मद साहब ने अपने धर्म का फैलाने के लिए मदीने से बाहर के दूर दूर के क़बीलों में समझदार आदमी भेजने शुरू किये। आस तौर पर जिस दिन उन्हें किसी ऐसे आदमी को कहीं भेजना होता था वह उसे बहुत सवेरे अपने पास बुलाते थे। सुबह की नमाज़ के बाद, फिर से ईश्वर की तारीफ़ कर और दुआ मांग कर वे उस आदमी को यों समझाते थे—

“अल्लाह के बन्दों के साथ मिलने जुलने में अल्लाह के हुक्म को न तोड़ना। आदमियों का कोई काम जिस किसी को सौंपा जाता है, वह अगर सचाई से लोगों की सेवा नहीं करता तो अल्लाह उसके लिये जन्नत (स्वर्ग) का दरवाज़ा बन्द कर देता है।

“लोगों के साथ नरमी से बर्ताव करना, किसी से सख़्ती न बरतना। उनके दिलों को खुश रखना। उन्हें बुरा न कहना। जब वे तुमसे पूछें—‘स्वर्ग की कुंजी क्या है?’ तो तुम जवाब देना—‘एक ईश्वर की सचाई और नेकी में विश्वास करना और नेक काम करना

*तफ़सीरुल क़ुरान, लेखक सैय्यद अहमद खाँ, जिल्द ४; The Preaching of Islam, by T. W. Arnold, ch II, P 33, The Holy Quran by Mohammad Ali, P 97

यही स्वर्ग की कुंजी है।” लिखा है कि ये उपदेश देने वाले जिन लोगों में उपदेश के लिये भेजे जाते थे उन्हीं की दोली दोलने लगने से और उसी में उन्हें समझाते थे। मुहम्मद साहब की जब इनकी मृत्यु मिली तो उन्होंने ने कहा—“अल्लाह के बन्दों की तरफ अल्लाह का धताया उनका सब ने बड़ा धर्म (क़र्ज़) यही है।” इन्हें साद १०।

* Life of Mohammad, by Mirza Asad Khan, P. 144.

- The Preaching of Islam by T. W. Arnold, P. 25.

मदीने पर कुरैश के हमले

मुहम्मद साहब का धर्म मानने वालों की तादाद अब ज़ोरों के साथ बढ़ने लगी। इसके साथ साथ मदीने का राज और मदीने का वड़प्पन भी बढ़ रहा था। अरब के अन्दर मक्के से सिर्फ २८६ मील दूर एक और बराबर के राज का कायम होना और बढ़ते जाना कुरैश कब सह सकते थे। मक्के और वहाँ के मन्दिर कावे दोनों का पुराना वड़प्पन भी अब घटने लगा। कुरैश जानते थे कि अगर मुहम्मद की ताकत को बढ़ने दिया गया तो एक न एक दिन मक्के का पुराना धर्म और मक्के का वड़प्पन मिट जायगा।

कुरैश इसका इलाज सोचने लगे। उन्होंने ने मुहम्मद और मदीने का ताकत को कुचल देने का फ़ैसला किया। जो थोड़े सुसलमान मक्के में रह गए थे उन्हें वे बराबर तकलीफ़ें देते रहे। धावे मार मार कर उन्होंने ने मदीने वालों के शहर से बाहर चरते हुए ऊंटों और घोड़ों को उड़ा ले जाना शुरू किया। मदीने वालों की तरफ़ से शुरू में इसका कोई जवाब नहीं दिया गया।

मदीने में मुहम्मद साहब को आए जब दो साल हो गए तो पता चला कि १००० कुरैश ७०० अंठों और १०० घोड़ों समेत मदीने पर हमला करने आ रहे हैं। मुहम्मद साहब की उम्र ५५ साल की थी। अपने उस धर्म का उपदेश देने, जिसे वह दुनिया के लिए ईश्वर का संदेश मानते थे, उन्हें १५ साल हो चुके थे। इन १५ साल के अन्दर बल्कि ५५ साल के अपने मांगे जीवन में, सिवाय एक मौके के जब कि लड़कपन में 'हरबे फिजार' के अन्दर (एक लड़ाई जिसका पहले बिक्र आ चुका है) वह अपने चचा को तीर उठा उठा कर दे रहे थे, आज तक उन्होंने कभी किसी लड़ाई में किसी तरह का भी हिस्सा न लिया था। लेकिन आज शहर भर के लोगों की जान माल की हिफाजत का बोझ उनके कंधों पर था। जैसी उसकी प्रादुर्भाव थी, रोज़े (उपवास) और नमाज़ (प्रार्थना) के जगिये उन्होने अपने रब्ब से हिदायत मांगी। कुरान में पाली धार लगाई की इजाज़त की आयने इस तरह उतरी—

“जिनसे और लोग लगने के लिये आते हैं उन्हें भी नज़्द की इजाज़त दी जाती है क्यों कि उन पर यह जुल्म है। नब्वुल्लाह में उन लोगों की मदद करने का ताकत है जिन्हें निर्जद करने के जुर्म में कि—‘एक अल्लाह ही हमारा रब्ब है’—देहन्नाजी ने उनसे परों से निकाल दिया गया है !

“अगर अल्लाह इस तरह कुछ लोगो (आतमाओं या हिन्दुओं) को दूसरे लोगों से न दवाता तो स्वस्थ दुनिया में नद, किस्से

यहूदियों के मन्दिर और सब दूसरे (धर्म वालों के) पूजाघर जिनमें अल्लाह का नाम बार बार लिया जाता है कभी के गिरा दिये गए होते ।” (कुरान २२-३८ से ४०)

“अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुम्हारे साथ लड़े, लेकिन हृद से कभी न बढ़ो, सचमुच अल्लाह हृद से बढ़ने वालों से कभी प्रेम नहीं करता ।

“और जो वे लड़ना वन्द कर दें तो तुम सिवाय उन लोगों के जो जुल्म करते रहें और किसी के साथ दुशमनी जारी न रखो ।” (२-१९०, १९३)

मुहम्मद साहब या उनके साथियों की तसल्ली न हुई । अपने वचाव के नाम पर भी उनका दिल लड़ाई सं हटता था । वह सोचते थे कि जो फौज मक्के सं आ रही है उसमे बहुत सं हमारे नज़दीकी रिश्तेदार हो सकते हैं । ये और वे सब एक ही दादा की औलाद थे । ठीक उसी तरह का धर्म संकट अब मुसलमानों के सामने था, वह उसी तरह की उत्तमन में पड़े हुए थे जिस तरह की उत्तमन में कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन । मुहम्मद साहब ने फिर रोज़ा रखा और दुआ मांगी । अपने दिल में बैठे हुए ईश्वर से उन्हें हुकुम मिला —

“तुम्हें लड़ने की इजाज़त दी गई है लेकिन तुम्हें उससे नफरत है । हो सकता है कि तुम एक ऐसी चीज़ से नफरत करते हो जो तुम्हारे लिये भलाई की हो, और तुम्हें ऐसी चीज़ से प्रेम हो जो तुम्हारे लिये बुरी हो । और अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते ।”)२-२१६)

“क्या तुम ऐसे लोगों से न लड़ोगे जिन्होंने बदले मुद तड़ाई शुरू की।” (९-१३)

“और तुम्हें क्या हो गया है कि तुम अल्लाह की राह में ज़म्ज़ीनों, औरतों और बच्चों की हिफाज़त के लिये भी नहीं लड़ते।” (४-७५)

सिर्फ ३१३ आदमियों को साथ लेकर मुहम्मद साहब मक्के से आने वाली फौज को रोकने के लिये निकले। कुरैश मक्के में आधी दूर आ चुके थे। ‘बद्र’ नाम की हरी भरी घाटी में (६२४ ई०) दोनों फौजों में खूब धमसान की लड़ाई हुई। मदीने की फौज में धर्म और इन्साफ़ के नाम पर लड़ने वालों का जोश था। कुरैश को मैदान छोड़कर भागना पड़ा। मदीने वालों के १४ और कुरैश के ४६ आदमी मैदान में फास आए। और इनने ही कैद कर लिये गए।

क़रीब क़रीब सब देशों में उन दिनों रिवाज था कि जो लोग लड़ाई में कैद कर लिये जाते थे उन्हें या तो मार डाला जाता था या गुलाम बनाकर रखा जाता था। पर इन मौके पर मुहम्मद साहब के हुक्म से इनमें से बहुत से जो ग़रीब थे, इन वादे पर छोड़ दिये गए कि वे फिर कभी मुसलमानों या मदीना वालों के खिलाफ़ हथियार न उठावेंगे और बागी न लड़ें हरजाना लेकर उन्हें आज़ाद कर दिया गया। कुछ कैदियों ने जो पढ़े लिखे थे यह काम लिया गया कि उनमें से एक दम दम मदीने वालों को लिखना पढ़ना सिखा दे और चला जाए। जितने दिनों तक ये कैदी मदीने में रहे उनमें दिनों पग़ार—

“मुहम्मद के हुकुम से मदीना वालों ने और उन मुहाजिरों ने जिनके पास अपने घर थे कैदियों को अपने अपने यहां रखकर उनके साथ बड़ी ही इज्जत का बर्ताव किया। बाद में इन कैदियों ने खुद बयान किया ‘मदीना वालों पर अब्बाह की बरकत हो ! वे खुद पैदल चलते थे और हमें सवारियों पर बैठाते थे। जब रोटियों की कमी थी वे हमें गेहूँ की रोटी खिलाते थे और आप खजूर खाकर रह जाते थे।’ ”*

बद्र की लड़ाई के बाद उमैर इब्न वाहब नामी एक नौजवान मुहम्मद साहब की जान लेने के इरादे से मदीने आया। वहां कुछ दिन उनके उपदेशों को सुनने का उस पर इतना असर हुआ कि उसने अपने आप सामने आकर अपने दिल का पाप कह डाला और इस्लाम धर्म अपना लिया।

मुहम्मद साहब ने इसके बाद कोशिश की कि कुरैश के साथ सुलह हो जावे। उन्होंने कहला भेजा—

“ऐ मक्का वालो ! तुम फ़ैसला चाहते थे तो वह हो गया, अब अगर तुम मुसलमानों पर हमला न करो तो अच्छा है, लेकिन अगर तुम फिर हमला करोगे तो हमें भी लड़ना पड़ेगा, और तुम्हारे साथ कितनी भी फ़ौज हो कुछ फ़ायदा न होगा, क्योंकि अब्बाह ईमान वालों के साथ है।

“.....अगर वे अब हमला न करें तो अब तक जो कुछ रो चुका सब माफ़ कर दिया जायगा !” (८-१९, ३८)

लेकिन इसका कोई नतीजा न हुआ। कुरैश की तरफ़ से धावे जारी रहे।

बद्र की लड़ाई के बाद ही अबु सुफियान २०० तेज़ घुड़सवार लेकर मक्के से निकला और मदीने से तीन मील उधर, दो मुसलमानों को मार कर, वहाँ की खेती को बरबाद कर, ग़ज़र के दरख्तों को आग लगा, मदीना वालों के निकलने से पहले पहले वापस लौट गया।

अगले साल तीन हज़ार आदमी लेकर अबु सुफियान ने फिर मदीने पर हमला किया। इस हमले की गरज़ उन कुरैशों का बदला लेना बताया गया जो पिछले साल बद्र की लड़ाई में मारे गए थे। कुरैश मदीने के पास आ पहुँचे। करीब एक हज़ार आदमी लेकर मुहम्मद साहब मदीने से बाहर आए। मोरार की पहाड़ी पर दोनों दलों में मुठभेड़ हुई। कहा जाता है मुहम्मद साहब की फौज में सिर्फ़ दो घुड़सवार थे और कुरैश की तरफ़ दो सौ। इस लड़ाई में अबु बक्र, उमर और अनी तीनों बुरी तरह घायल हुए। खुद मुहम्मद साहब के पाले एक पत्थर से चोट लगी और फिर एक तीर ग़ाज़र लगा जिससे उनका आँठ कट गया और आगे का एक दाँत टूट गया। कुरैश का पल्ला भारी रहा। लेकिन वे इतने धक गए थे कि आगे न बढ़, आस पास लूट मार कर, वहाँ से लौट गए।

ओहद की लड़ाई में जो मुसलमान कुरैश के हाथ पड़ गए थे उन्हें खूब तकलीफें दी गईं, जिनका वयान करना बेकार है। मुसलमानों में बदले की आग भड़की। उस मौके पर कुरान में आयत उतरी—

“अगर तुम बदला लो तो जितना नुकसान तुम्हें पहुंचाया गया है उतना ही बदला लो, लेकिन अगर तुम सन्न के साथ सहलो तो सचमुच सह लेने वालों के लिये सबसे अच्छा है, इसलिये तुम सन्न के साथ सहलो।”*

लड़ाई के बाद दुश्मन के मुरदों और घायलों के नाक कान काट लेने का जंगली रिवाज उन दिनों यहूदियों, ईसाइयों और सब लोगों में था। कुरैश ने भी ओहद की लड़ाई के बाद ऐसा ही किया था। मुहम्मद साहब ने अपने आदमियों को ऐसा करने से मना कर दिया और धीरे धीरे मुहम्मद साहब ही के हुकुम से यह रिवाज अरब से हमेशा के लिये उठ गया।

कुरैश की दुश्मनी अब और ज्यादा पक्की हो गई। उन्होंने मदीने से बाहर के अरब के दूसरे बड़े बड़े कबीलों को अब मुहम्मद साहब के खिलाफ भड़काना शुरू किया। कई लड़ाइयां हुईं। इन सब छोटी मोटी लड़ाइयों को वयान करना बेकार है। जितनी फौजें मदीने से बाहर भेजी जाती थीं उन सबके सरदारों को मुहम्मद साहब की तरफ से ये कड़ी हिदायतें दी जाती थीं—

*. कुरान १६, १२६-१२८।

“किसी हाल में भी धोखे या दगाबाजी ने काम न लेना, और न कभी किसी बच्चे को जान लेना ।

“हमें जो जो नुक़सान पहुंचाए जावें उनका बदला लेने में कभी भी अपने अपने घरों के अन्दर रहने वाले बेगुनाह लोगों को दुख न देना । कभी औरतों पर हमला न करना । दुधसुहे बच्चों और दिवंग पर पड़े बीमारों को कभी हाथ न लगाना । बन्नी के जो लोग हमसे नहीं लड़ते उनके घरों को कभी न गिराना । लोगों के रोटी बगाने के औज़ारों और फलदार दरख्तों को बरबाद न करना । तड़क के घेने को कभी हाथ न लगाना, क्योंकि उनका साथी लोगों के निंदे मर्दान है और उनकी हरियाली लोगों के दिलों को गुंथ गस्ती है ।”

कुरैश के साथ इसके बाद एक बड़ी लड़ाई मार्च मग ६२६ ईसवी में हुई जो ‘खन्दक की लड़ाई’ के नाम से मशहूर है । वह लड़ाई इस तरह हुई—

कुरैश सरदार अबु सुफियान ने, बन्नी शिन्धान और दूसरे कबीलों को अपनी तरफ मिलाकर, जिनमें कई बड़े शहीद भी थे, दस हजार हथियार बन्द लोगों को लेकर मदीने पर चढ़ाई की । ख़बर पाते ही मुहम्मद साहब ने शहर के बचाव की सोची । उनके एक ईरानी साथी नन्समान ने राय दी कि शहर की चहार दीवारी के बाहर एक गहरी खाई खो दी जाये, जिससे दुश्मन आसानी से इस पार न आसके । मुहम्मद साहब के हुक्म से खाई खुदने लगी । दूसरे लोगों के साथ साथ

मुहम्मद साहब भी फावड़ा और टोकरी लेकर मिट्टी ढोने लगे ।
और इस तरह के गीत गा गाकर लोगों की हिम्मत बढ़ाने लगे—

“ऐ रब्ब ! तेरे बिना हमें कौन सच्चा रास्ता दिखाता !

“न हम ख़ैरात करते होते, और न तेरी बन्दगी करते !

“तू ही हमें शान्ति दे और लड़ाई में हमारे क़दमों को मज़बूत कर !

“क्यों कि वे लोग हमारे ख़िलाफ़ उठ खड़े हुए हैं, उन्होंने ने हमें सच्चे रास्ते से हटाना चाहा, लेकिन हमने साफ़ इनकार कर दिया ।”

आख़री टुकड़े को मुहम्मद साहब ज़्यादाहज़ोर से गाते थे ।

खाई अभी पूरी भी न हुई थी कि दुशमन आ दूटा । दस हजार फ़ौज खाई के उस पार और तीन हजार इस पार । बीस दिन तक दोनों तरफ़ से पत्थरों और तीरों की बौछार होती रही । बीस दिन बाद किसी एक जगह जहाँ खाई कम चौड़ी रह गई थी दुशमन की कुछ फ़ौज इस पार आ गई । खूब घमसान हुआ । काफी नुक़सान उठाकर दुशमन को फिर खाई के पार चला जाना पड़ा । सरदी, मेह और रसद की कमी से भी क़ुरैश को काफी नुक़सान हुआ । आख़िर पस्त और लाचार होकर वचे हुए क़ुरैश मक्के की तरफ़ और दूसरे क़बीले वाले अपने अपने घरों को लौट गए । क़ुरैश का मदीने पर यह आख़री हमला था ।

इसलाम के कुछ उपदेश देने वाले



कुरैश के खिलाफ इस जीत में मदीने की नई कौमी सरकार और मुहम्मद साहब दोनों का असर बढ़ता चला गया। इनलाम के फैलने में भी इस में बहुत मदद मिली। मदीने में मुहम्मद साहब खुद उपदेश देने थे, और मदीने में बाहर के लिए उन दिनों एक ग्राम रिवाज यह था कि दूर दूर के कबीलों के बड़े बड़े आदमी या मुखिया मुहम्मद साहब से मिलने मदीने जाते थे। इन में से कई मुसलमान होकर लौटते थे। फिर इन्हीं में या कभी कभी इनके साथ कुछ और जो भी उन कबीलों में उपदेश के लिए भेज दिया जाता था।

इन अलग अलग कबीलों के जो लोग मुहम्मद साहब से मिलने आते थे उनके साथ मुहम्मद साहब या उनके बच्चे इतनी अच्छा और प्रेम का होता था, उनकी शिखायतों की तरफ से इतनी अच्छी तरह ध्यान देते थे और उनके आदमी बनने में इतनी सफलता से तय कर देते थे कि इससे इतना

साहव का नाम होता था और इस्लाम से लोगों का प्रेम बढ़ता था ।*

अलग अलग कबीलों में इस्लाम कैसे फैला और कहीं कहीं कैसी दिक्कतें हुईं इसकी कुछ मिसालें नीचे दी जाती हैं—

(१) सन् ४ हिजरी (६२५ ई०) में नज्द इलाक़े के वनु आमिर कबीले के सरदार के कहने पर चालीस मुसलमान मदीने से वनु आमिर कबीले में इस्लाम फैलाने के लिए भेजे गए । इन चालीस में से ३८ वहां दगा देकर मार डाले गए । दो ज़िन्दा वापिस मदीने पहुंचे ।

(२) सन् ५ हिजरी में ज़िमां नामी एक बहू सरदार अचानक मुहम्मद साहव के पास पहुँचा । उसने उनसे इस्लाम के बारे में बहुत से सवाल पूछे । आखीर में वह मुसलमान होकर लौटा और उसने अपने कबीले वालों में इस्लाम को फैलाया ।

(३) मदीना और लाल समुद्र के बीच में वनु जुहैनाह नाम का एक कबीला रहता था । उसका एक खास मन्दिर था । मन्दिर में पत्थर की मूर्तियां थीं । अम्र वहां का पुजारी था । उसे मुहम्मद साहव से आकर मिलने की सूझी । मुहम्मद साहव मक्के में थे । अम्र पढ़ा लिखा और शायर था । वह मक्के आया । मुहम्मद साहव से बातचीत के बाद उसने नए धर्म को अपना लिया । अपने कबीले में जाकर मुहम्मद साहव के हुकुम से उसने नए धर्म का उपदेश देना शुरू कर दिया । उसका असर इतना

अच्छा पड़ा कि थोड़े ही दिनों में वहाँ सिर्फ एक आदमी रह गया जिसने उसकी बात न मानी और जो अपने पुराने विचारों पर अड़ा रहा। बाकी सब लोग मुसलमान हो गये (इब्न साद, ११८)।

(४) सन् ६ हिजरी में मुहम्मद साहब की मक्के वालों ने सुलह हो गई। इस सुलह का जिक्र आगे चलकर किया जावेगा। यहाँ पर यह बता देना जरूरी है कि उस सुलह से इस्लाम के फैलने में और भी मदद मिली। मक्के के बहुत से लोग जो कुछ साल पहले अपने शहर में मुहम्मद साहब के उपदेश सुन चुके थे, और जो कुरैश के डर से रुके हुए थे, उस सुलह के बाद मदीने पहुँच कर नया धर्म अपनाने लगे।

खास कर मक्के में दक्खिन के उलाकों में इस्लाम के फैलने के लिये तभी से रास्ता खुल गया।

(५) यमन के उत्तर की पहाड़ियों में यनु दौस कबीला रहता था। इस कबीले के कुछ लोग मुहम्मद साहब के पाले में ही किसी नये और ज्यादा ऊँचे धर्म की खोज में थे। मुहम्मद साहब के उपदेशों की खबर सुनकर दौस कबीले जा संगत तुकैल मुहम्मद साहब से मिलने मक्के आया। वह शायर भी था। उसने अपनी कुछ शायरी मुहम्मद साहब को सुनाई। मुहम्मद साहब ने उसे कुरान के कुछ सूरे सुनाए। तुकैल को नया धर्म पसन्द आया। वह मुसलमान हो गया। मुहम्मद साहब की इजाजत में उसने अपने कबीले के लोगों में जाकर इस्लाम की फैलाना शुरू किया। लेकिन सिवाय उसके बाद

उसकी बीबी, और कुछ दोस्तों के किसी ने उसकी न मानी। तुफैल मुहम्मद साहब के पास आया। मुहम्मद साहब ने उसे सत्र, धीरज और प्रेम से काम लेने और अपना काम जारी रखने की सलाह दी। वह फिर लौटा। इस बार एक और साथी ने उसे मदद दी। ये लोग घर घर जाते थे और नए धर्म के असूल समझाते थे। इस तरह धीरे धीरे उस कबीले के थोड़े थोड़े लोग इसलाम धर्म अपनाते जा रहे थे। तुफैल और उसके साथियों ने अपना काम जारी रक्खा। आखिर सन् ८ हिजरी तक यानी क़रीब क़रीब दस वरस के अन्दर उस क़बीले के सारे लोगों ने नये धर्म को अपना लिया। ये लोग मुसलमान होने से पहले लकड़ी के एक लट्टे को अपने क़बीले का देवता मानकर उसी की पूजा किया करते थे। अब वे सब एक निराकार ईश्वर की पूजा करने लगे, जो सारी दुनिया का मालिक है। जब क़बीले भर में कोई आदमी भी उस लकड़ी के देवता का पूजने वाला न रहा तो क़बीले के सरदार तुफैल ने उसे सबके सामने लाकर उसमें आग लगा दी।

इसी अरसे के अन्दर इसी तरह १५ और क़बीलों ने इसलाम को अपनाया।

(६) तायफ़ शहर का एक सरदार उरवाह मुहम्मद साहब से मिलने मदीने आया। उसने इसलाम धर्म अपना लिया। वह बहुत जोशीला था। उसने मुहम्मद साहब से इजाज़त चाही कि मैं अपने शहर जाकर इसलाम को फैलाऊं। मुहम्मद

साहब ने पहले मना किया। फिर उसके ज़िद्द करने पर इजाज़त दे दी। वह तायफ़ गया। तायफ़ पुराने विचारों का ख़ान गढ़ था। उसने खुले तौर मूर्ति पूजा की बुराईयाँ की। एक दिन जब वह खड़ा उपदेश दे रहा था एक तीर उसे आकर लगा। उरबाज़ ने इश्वर को सराहा और वह वही शहीद हो गया।

(७) मुहम्मद साहब ने यमन के तीन बड़े बड़े कबीलों के सरदारों के नाम एक ख़त लिखा। इस ख़त में उन्होंने बड़े अच्छे और प्रेम के शब्दों में उन्हें इसलाम अपनाने को कहा। यह ख़त मुहम्मद साहब ने अयाश नामी एक आदमी के हाथ भेजा। अयाश जब मदीने से चलने लगा तो मुहम्मद नाग्य ने उसे यो समझाया—

“जब तुम उनके शहर तक पहुँच जाओ तो रात को शहर के अन्दर मत जाना। सुबह तक बाहर ही ठहरना। फिर सुबह को अच्छी तरह नहाना, और ‘दो रकअत’ नमाज़ पढ़ना, और प्रणाम में हाथ मागना कि तुम्हारी मुराद पूरी हो, लोग तुम्हें मुस्लिम मानें, और तुम हर तरह की आप्रत से बचे रहो। फिर मेरा ख़त अपने दाहिने हाथ में लेना। अपने दाहिने हाथ में उभे उनके दाहिने हाथ में देना। वे उभे ले लेंगे। फिर उन्हें पुराना का १० वां सूरा पढ़ना। जब सुना चुको तो कहना—‘मुहम्मद ने हर घर पर बिस्पाक बिछा है और अपने क़ब्रों के लोगों में ने क़दमें पहिने हैं, बिस्पाक बिछा है।’ इसके बाद तुम उनके हर सपाल पर ज़्यादा से ज़्यादा, और जो भी वह तुम्हारे खिलाफ़ करेंगे उनकी बात फ़ौजी पर लायनी, जो से किसी

विदेशी बोली में बात करें या विदेशी बोली में कोई हवाला दे, तो कहना इसका तरजुमा कर दो। और उनसे कहना - 'मेरे लिये एक अल्लाह बस है। मैं अल्लाह की किताब में विश्वास करता हूँ। मुझे इन्साफ़ करने का हुकुम दिया गया है। अल्लाह हमारा और तुम्हारा सब का मालिक है। हमें अपने कामों का फल मिलेगा और तुम्हें तुम्हारे कामों का फल मिलेगा। हममें और तुममें कोई भगड़ा नहीं है। अल्लाह हम सबको मिला देगा। हम सबको उसी के पास जाना है।' इसके बाद अगर वे सब के सब इसलाम अपना लें, तो उनसे वे तीन छड़ियाँ मागना जिनके सामने वे जमा होकर हुआएं मांगते हैं। इनमें से एक छड़ी सफ़ेद और पीले धब्बों वाली भाऊ की है, दूसरी वेत की तरह गठीली है और तीसरी आवनूस की तरह काली है। इन छड़ियों को बाज़ार में लाकर सबके सामने जला देना।”

अयाश लिखता है—

“मैं गया। मैंने ऐसा ही किया। जब मैं वहां पहुँचा तो मैंने देखा कि सब लोग किसी त्योहार के लिये अच्छे अच्छे कपड़े पहने हुए थे। मैं उनसे मिलने के लिये बढ़ा। आख़िर मैं तीन दरवाज़ों पर पहुँचा, जिनके सामने तीन बड़े बड़े परदे पड़े थे; मैं बीच के दरवाज़े का परदा उठाकर अन्दर गया। मैंने देखा लोग उस मकान के सहन में जमा थे। मैंने उनसे जाकर कहा कि मैं अल्लाह के पैग़म्बर का संदेश लाया हूँ। इसके बाद मुझे जिस तरह कहा गया था मैंने वैसा ही किया। उन लोगों ने मेरी बातों को ध्यान से सुना। और आख़िर में जैसा पैग़म्बर ने कहा था वैसा ही हुआ।” (इब्नसाद, ५६)

छड़ियों के जलाने की इजाजत सिर्फ उस सूरे में दी गई थी, जबकि उस कबीले में एक भी आदमी उनका पूजने वाला न रहे। इस मामले में ठीक यही वर्तव मुहम्मद साहब और उनके साथियों का और सब जगह होता था।

कुरान के जिस ६८वें सूरे का ऊपर जिक्र है उसकी खाम आयत यह है—

“उनको सिवाय इसके और कुछ हुकुम नहीं दिया गया कि वे सचाई के साथ एक ईश्वर की पूजा करें, उसी का हुकुम मानें, सच्चे और ईमानदार रहें, ईश्वर से दुआ मांगते रहें, और गरीबों को दान देते रहें, यही सच्चा और पक्का धर्म है।” (६८-४)

(८) यमन में सबसे बड़ा कबीला हमदान नाम का था। इस कबीले के लोगों में जब इस नए मजहब की खबरें पहुँची, तो उन्होंने अपने आमिर नामी एक आदमी को मक्के भेजा। आमिर मक्के में मुहम्मद साहब से मिला और मुन्नान होकर अपने घर लौटा। मदीने पहुँचने के कुछ दिनों बाद मुहम्मद साहब ने खालिद को उस कबीले में मुन्नान का उपदेश देने के लिये भेजा। खालिद कुछ जगह न जा सका। वह छै नहीने बाद मदीने लौट आया। उसके बाद मुहम्मद साहब ने खालिद की जगह अली को भेजा। धीरे धीरे कुछ घर-घर हमदान कबीले के सब लोग मुन्नान हो गए। (दुसारी)

(६) यमन ही में ईरान के भी कुछ लोग आवाद थे । सन् १० हिजरी में मुहम्मद साहब ने वरवन यख़नस नामी एक आदमी को उनमें उपदेश देने के लिए भेजा ।

(१०) इसके बाद मुहम्मद साहब ने मुआज़ और अबू मूसा दो आदमियों को यमन के एक एक ज़िले में जाने और उपदेश देने के लिए भेजा, और चलते वक्त उनसे कहा—

“अपना काम नरमी से करना । किसी से हराग़िज़ सज़्ती न करना । लोगों के दिलों को खुश रखना । तुम से किसी को नफ़रत न हो पावे । मिलजुल कर काम करना । लोगों को यह समझाना कि एक खुदा ही सब का ईश्वर है और उसी की सबको पूजा करनी चाहिये । फिर उन्हें दान का मतलब बताना, वह यह कि तुम में जो मालदार हैं उनसे लेकर जो ग़रीब हैं उनको देना । जब वे दान दें तो उनसे चुनकर अच्छी अच्छी चीज़ें न ले लेना । जिस आदमी के ऊपर किसी तरह का भी जुल्म या ज़्यादती की जाती है, उसकी आह से डरते रहना, क्योंकि उसकी आह के और परमात्मा के बीच में कोई परदा नहीं है ।” (बुख़ारी)

इसलाम के इन उपदेशों से पुराने क़बीले और उनकी ताक़त टूटती चली गई, और उनकी जगह एक ज़बरदस्त और बहुत बड़ी विरादरी, एक नई क़ौम बनती गई, जिससे सदियों के लड़ाई मग़ड़े ख़त्म होकर देश भर में अमन और आमान की सूरतें दिखाई देने लगीं ।

जो लोग अब अपने पुराने कबीलों के बीच के झगड़ों और बदला लेने का मुहम्मद साहब में आकर जिक्र करने दें, उन्हें वे हमेशा कुरान की ये आयतें सुनाते हैं—

“बुराई का बदला भलाई में दो।” (२३-१६)

“अगर तुम चाहते हो कि अल्लाह तुम्हें माफ़ करदे तो तुम्हें चाहिए कि तुम दूसरों के कसूरों को माफ़ कर दो और उन्हें भूल जाओ, अल्लाह माफ़ करने वाला और दयावान है।” (२४-२२)

“ज़मीन और आसमान में बढ़कर चढ़ी जन्नत (स्वर्ग) उन लोगों के लिये तैयार है जो बुराई में सच्चे हैं, जो गरीबी में और धर्मरही में दोनों में खूब दान देते हैं, जो अपने गुल्ले में शराब में रक्ते हैं और जो लोगों के सब कसूर माफ़ कर देते हैं। अल्लाह उन्हीं को प्यार करता है जो दूसरों पर एहसान करने हैं।” (३-१३२, १३३)

देश-दगा की सज़ा

मदीने में और उसके आसपास कुछ यहूदी कबीले रहते थे। जहां तक पता चलता है, ये लोग, कई सौ बरस पहले रोम के सम्राट हद्रियन के ज़माने में, रोम के जुल्मों से लाचार होकर अपने मुल्क फिलस्तीन से भाग कर अरब में आकर बसे थे। ये लोग मुहम्मद साहब को इतनी जल्दी अपना धर्म गुरु या सरदार मानने को तय्यार न हो सकते थे, जितनी जल्दी अरब के और कबीले। इसकी एक साफ़ वजह यह भी थी कि अरबों में इससे पहले कभी कोई पैग़म्बर न हुआ था। लेकिन यहूदियों में हज़रत इबराहीम से लेकर हज़रत मूसा तक बहुत से पैग़म्बर हो चुके थे। इसलिए यहूदी इतनी आसानी से किसी नए आदमी को और वह भी एक अरब को पैग़म्बर मानने को तय्यार न थे, और राज काज में उन्हें अपना राजा या सरदार मानने में भी अपनी हेटी समझते थे।

मुहम्मद साहब ने मदीने आते ही इन यहूदियों के साथ मुलह से रहने की बहुत कोशिशें की, लेकिन उन पर ज़्यादा

असर न हुआ। कुछ यहूदी कभी कभी अन्दर ही अन्दर खुर्रेशों से मिलकर दगा की सोचने रहने थे। इनमें में कुछ ने मुन्दक की लड़ाई में ऐन मौके पर खुर्रेश के साथ मिल जाने की कोशिश की थी, और कुछ ने उन्हें अन्दर ही अन्दर मदद भी दी थी।

मशहूर इतिहासकार (मवरिख) स्टेनले लेनपूल लिखता है—

“.....यहूदियों ने इसलाम को डरा बना, उसकी हानि उठाना. और जिस तरह उन्हें सूझ सका उस तरह इसलाम के पैगम्बर को दिक् करना शुरू किया।...इसमें शक नहीं तब तक दगा की जा सकती थी, तब तक मुहम्मद साहब ने उनके साथ दगा का रहस्य किया। उन्हो ने उनके साथ एक समझौता कर लिया था, जिसमें मुसलमानों और यहूदियों सब के अलग अलग हक तब कर दिये गए थे। उन्हें अपने धर्म के पालन की पूरी आजादी थी। समझौते में लिखे गये शामिल थे उन सब को हिजाबत का वजन दे दिया गया था और उनका घर दूर कर दिया गया था। किसी पर भी बाहर से कोई हथकड़ी करे तो उसकी मदद करना सब का धर्म ठहराया गया था

“इतने में भी यहूदियों की तत्कालीन न हुर्रें। उन्हो ने बिना पलट छेड़ छाड़ शुरू कर दी।.....

“एन लोगो ने मदीने के राज्य के खिलाफ फिर फिर कर नुब बन्दिया की। मुहम्मद साहब फिर इसलाम धर्म के बल्ले मारते ही न थे, वह मदीने के बादशाह भी थे. और शहर के सम्म नीचे गगन

के लिये ज़िम्मेवार थे। पैग़म्बर की हैसियत से वह यहूदियों के इन हमलों को टाल सकते थे.....पर शहर के हाकिम की हैसियत से, ऐसे दिनों में जब कि लगातार लड़ाइयां होती रहती थीं, मुहम्मद साहब दगा की तरफ़ से बेपरवाह न हो सकते थे। एक ऐसे दल को दवाना जिसकी मदद से दुश्मन की फ़ौजें कभी भी नगर को छूट सकती थीं, और एक बार क़रीब क़रीब छूट ही लिया था, अपनी सारी प्रजा की तरफ़ मुहम्मद साहब का धर्म था।

“क़रीब आधे दरजन यहूदियों को जो अपनी ज़्यादातियों के लिये, और मदीने के दुश्मनों तक ख़बरें पहुँचाने के लिये मशहूर थे, मौत की सज़ा दी गई। तीन यहूदी क़बीलों में से दो को, जो इससे पहले देश निकाले की सज़ा पाकर ही बाहर से वहाँ आए थे, फिर यही सज़ा दी गयी,.....

“जो सज़ा तीन क़बीलों को दी गई उसमे देश निकाले की सज़ा जो दो क़बीलों को दी गई काफ़ी नरम थी। ये लोग बग़ावत करते रहते थे। मदीने के लोगों को एक दूसरे से लड़ाते रहते थे। आख़ीर में एक बार कुछ भग़ड़ा हुआ। शहर में बलवा हो गया। नतीजा यह हुआ कि इनमें से एक क़बीले को देश से निकाल दिया गया। इसी तरह सरकारी हुकुमों को न मानने, दुश्मनों से मिल जाने और खुद पैग़म्बर की हत्या के लिये गुटबन्दी करने के इलज़ाम में दूसरे क़बीले को देश निकाले की सज़ा दी गई। इन दोनों क़बीलों ने पिछले समझौते की शर्तों को तोड़ा था, और मुहम्मद साहब और उनके धर्म दोनों की हंसी उड़ाने और उन्हें मिटाने की हर तरह कोशिश की

यी । सवाल सिर्फ़ यह है कि जो सज़ा उन्हें दी गई उसमें इस्लाम ने क्या दह नरमी यी या नहीं ।"*

जिन दो क़र्बीलों को देशनिकाला दिया गया, उन्हें मिले या हुकुम था कि सिवाय हथियारों के अपना बाकी सब मान-असबाब अपने साथ ले जाओ, और मर्दाना ग़ज़ ने दाएँ जहाँ चाहे चले जाओ ।†

इन यहूदियों की उन दिनों यह ख़ानत थी कि एक बार तुल यहूदियों ने मुहम्मद साहब ने आकर कहा कि हमारा क़र्बाना इस्लाम धर्म अपनाना चाहता है, समझाने के लिये कुछ आदमी हमारे साथ भेज दीजिये । छै आदमी उनके क़त्ले पर उनके साथ भेज दिये गए । रास्ते में जब वे छै मुसलमान एर नांग के किनारे आराम कर रहे थे, साथवाले यहूदी अचानक उन पर दूट पड़े, उनमें से चार को उन्होंने ने बाँधी मार डाला और बाक़ी दो को मक्के ले जाकर क़ुरैश के हवाले कर दिया, जहाँ वे और भी बेदरदी के साथ मार डाले गए ।

एक दूसरी बार कुछ यहूदियों ने आकर अपने दो मुसलमान बताया और कहा कि किसी दुश्मन ने हम पर हमला किया है, हमारी मदद के लिये आदमी दीजिये । ७० आदमी मुस-

* Stanley Lane Pool in his Introduction to E. W. Lane's Selections from the Quran.

† Life of Muhammad, by Mirza Asad Khan.

उनके साथ भेज दिये गए। रास्ते में एक नदी के किनारे इनमें से ६६ को उसी तरह दगा दे कर मार डाला गया।

एक बार एक यहूदी क़बीले ने मुहम्मद साहब की दावत को। दीवार से पीठ लगाए मुहम्मद साहब बेखटके खाना खा रहे थे और चाल यह थी कि ऊपर से एक भारी चक्की का पाट अचानक उनके ऊपर इस तरह लुढ़का दिया जावे कि वह वहीं ख़त्म हो जावें। पर ठीक वक्त पर इस चालबाज़ी का पता लग गया। मुहम्मद साहब बच गए।

वही इतिहासकार उसके वाद लिखता है—

“तीसरे क़बीले की आगे के लिये एक डराने वाली मिसाल क़ायम की गई। फ़ैसला मुहम्मद साहब का दिया हुआ नहीं था, बल्कि एक पंच का दिया हुआ था, जिसे यहूदियों ने खुद अपनी तरफ़ से पंच बनाया था। जब क़ुरैश और उनके साथियों ने मदीने को घेर रखा था और शहर की दीवारों को क़रीब क़रीब तोड़ डाला था, उस वक्त इस यहूदी क़बीले वालों ने दुश्मन से मिलकर गुटबन्दी शुरू की। पैग़म्बर की होशियारी से बात खुल गई और चल न सकी। जब दुश्मन हार कर लौट गया तो जैसा चाहिये, मुहम्मद साहब ने यहूदियों से जवाब तलब किया। उन्होंने जवाब देने से इनकार किया। उन्हें घेर लिया गया। लाचार होकर उन्होंने हार मान ली। उनकी प्रार्थना पर मुहम्मद साहब ने इस बात को मान लिया कि एक ऐसे क़बीले का सरदार, जिसका यहूदियों के साथ मेल मिलाप था, उनके लिये सज़ा तय करे। यह उस आदमी ने फ़ैसला दिया कि बागी

क़बीले के कुल यहूदी मर्द जिनकी तादाद करीब ६०० थी वृत्त कर दिये जावें और औरतों और बच्चे गुलाम बना लिये जावें ।

“फ़ैसला सख्त और म़ुनी था । लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि इन लोगों का क्रूर राज के खिलाफ़ मुठबन्दी प्रोग़ दगा करना था और वह जब कि दुश्मन ने नगर को घेर रखा था । जिन लोगों ने इतिहास में पढ़ रखा है कि ड्यूक आज़ बेनिमिन के वृत्त का सारा रास्ता इसी से पहचाना जा सकता था कि रास्ते भर दग़नी के ऊपर प्रौज को छोड़कर भागने वालों और लूटने वालों की लाशें लटकी हुई दिखाई देती थीं, उन्हें एक देश से दगा करने वाले क़बीले के इस तरह मार डाले जाने पर अचरज नहीं होना चाहिये ।” *

मिरज़ा अबुल फ़जल ने लिखा है कि मुद य़ादियों में लड़ाई के जो फ़ायदे थे यह फ़ैसला उन फ़ायदों के अन्दर था । लेकिन मुहम्मद साहब ने औरतों और बच्चों के साथ इस मज़नी की इजाज़त न दी और—“बाद में सब औरतों और बच्चों को आज़ाद कर दिया गया । किसी एक को भी गुलाम बनाकर नहीं बेचा गया ।” जिन ६०० मर्दों को मौत की सज़ा सुनाई गई थी उनमें से भी मुहम्मद साहब ने ४०० को माग़ पर दिया । सिर्फ़ “दो सौ ही को यह सज़ा दी गई ।”

यही मुहम्मद साहब की हिन्दूनी या सब से मज़न काम गिना जाता है ।

* Stanley Lane Pool in his Introduction to “Selections from the Quran,” by E. W. Lane.

मक्के की पहली यात्रा



मक्के से आए हुए मुसलमानों को अपनी जन्मभूमि छोड़े छै साल हो चुके थे । उनमें से बहुतसों के बाल बच्चे अभी तक मक्के में थे । कुरान में जिक्र आता है कि उनके इन बालबच्चों के साथ कुरैश की ज्यादातियों की खबरें मुहम्मद साहब के कानों तक बार बार पहुँचती रहती थीं । मुहम्मद साहब की उम्र अब करीब ६० साल की थी । जाहिर था कि जब तक मक्के और मदीने में दो जबरदस्त ताकतें एक दूसरे की दुश्मन बनी रहेंगी, तब तक अरब में अमन शान्ति नहीं रह सकती थी । मुहम्मद साहब शुरू से ही जितने बेचैन अरबों के विचारों को सुधारने के लिए थे, उतने ही या उससे भी ज्यादा बेचैन सारे अरब को एक क़ौम देखने के लिये थे । बिना इस के अरब का आज़ाद और सुखी रह सकना हो ही नहीं सकता था; कावे के साथ मुसलमानों को भी वैसाही प्रेम था जैसा पुराने खयाल के अरबों को । कावे की बुनियाद डालने वाले हज़रत इबराहीम को मुसलमान पैग़म्बर मानते थे । मुहम्मद साहब दुनिया भर के

बड़े से बड़े और पुराने से पुराने तीर्थों में गिने जाने वाले मक्के के इस तीर्थ के बढ़पन को और उसकी यात्रा की श्रद्धा को भी खूब समझते थे। हज के दिनों में दूसरे अरबों की तरह मुसलमानों को भी काबे की यात्रा का हक था। मुहम्मद साहब ने शान्ति के साथ, बिना लड़े और बिना हथियार उठाये, ग्राज कन के मर्यादों में "अहिंसात्मक सत्याग्रह" के जरिये अपने इस हक को पान में लाने और इसी के जरिये मक्के वालों और मदीने वालों को एक प्रेम डोर में बांधने का प्रयत्न किया।

मुहम्मद साहब ने मक्के की यात्रा का इरादा किया। टीर हज के महीने में जब कि अरबों की तमाम आपस की लड़ाइयाँ बन्द हो जाती थीं, १४०० आदिनियों के साथ मुहम्मद साहब मक्के की हज के लिये चले। चलने में पहले यह "अल्लहु अकबर" के कोई शख्स हथियार बांध कर न आए।" (निबन्धी) शर्त के खास हथियार तीर फमान या भाला एक भी बिना के पान न था। इस पर भी मक्के वालों की पूरी तस्ल्ली के लिए मक्के हज के वह कपड़े (एहराम) पहने जिन्हें पान पर बाँधना किसी चीटी को भी नहीं मार सकता और न पना तोड़ सकता है। रास्ते से आदिनी भेज कर मुहम्मद साहब ने कुरैश से हज की इजाजत माँगी। कुरैश ने इनाम न दिया, और एक हथियारबन्द कौज निहाने मुसलमानों का रास्ता रोकने के लिये खड़ी कर दी। मुहम्मद साहब मक्के लेकर आगे बढ़े। ८० कुरैशों के एक दल ने उन पर हमला किया।

और खुद मुहम्मद साहब पर तीर चलाये। मुसलमानों की तरफ़ से कोई जवाब नहीं दिया गया। मुसलमानों की तादाद ज्यादा थी। उन्होंने ने इन ८० कुरैश को ज़िन्दा पकड़ कर मुहम्मद साहब के सामने लाकर खड़ा कर दिया। मुहम्मद साहब ने उन सब को माफ़ कर दिया और इस वादे पर छोड़ दिया कि हम दोबारा मुसलमानों के खिलाफ़ हथियार न उठावेंगे। इस मौके पर मुहम्मद साहब और उनके साथियों का सारा वर्ताव सच्चे “सत्याग्रहियों” का सा था। १४०० आदमी बिना किसी तरह के हथियार के और बिना दूसरे पर हाथ उठाये अपने हक़ के लिए दड़े थे। कुरैश पर इसका गहरा असर पड़ा।

हुदैवियाह की सुलह



दोनों तरफ़ के खास खास लोग जमा हुए। सुल्तान की गर्ज लिखी जाने लगी। मुहम्मद साहब बोलने जाते थे और पत्नी लिखते जाते थे। “अल्लाह के नाम पर जो रहमान और राहीम है!” कुरैश ने रोक दिया और लिखाया “अल्लाह के नाम पर।” मुहम्मद साहब ने मान लिया। फिर शुरू किया— “मुहम्मद, अल्लाह के रसूल की तरफ़ से” कुरैश ने फिर गंगा और लिखाया “अब्दुल्ला के दूते मुहम्मद की तरफ़ से।” मुहम्मद साहब ने फिर तुरत मान लिया और अपने हाथ में गदर जक ठोक कर दिया। खास शर्तें ये तय पार—

१—कुरैश में से कोई अगर बिना अपने पैसे के सन्तान से पूछे मुहम्मद के पास जावेगा तो उसे कुरैश के पान्न दान्न लौटा दिया जायगा।

२—मुसलमानों में से जो कोई नगरा गन्तों के पास चला जायगा उसे वापस न लिया जायगा।

३—हर कबीले को आज्ञा दी होगी कि वह कुरैश या मुहम्मद जिससे चाहे मिल कर रहे ।

४—इस बार मुसलमान बिना हज्ज किये वहाँ से वापिस मदीने लौट जाय ।

५—अगले दस साल तक कुरैश और मुसलमानों में लड़ाइयां बन्द रहें ।

६—अगले साल मुसलमानों को हज्ज के लिये मक्का आने और तीन दिन तक मक्के में रहने की इजाज़त होगी ।

कुरैश और मुहम्मद साहब के बीच की यह सुलह “हुदैबियाह” की सुलह के नाम से मशहूर है । इसकी आख़री दोनों शर्तें मुहम्मद साहब की तसल्ली के लिए काफी थीं ।

मुहम्मद साहब ने सच्चाई के साथ इस सुलह की शर्तों पर अमल किया । एक नौजवान कुरैश लड़का मुहम्मद साहब के पास पहुँचा । वह अपने को मुसलमान कहता था । उसने मुहम्मद साहब के साथ रहना चाहा । लड़के के बाप ने आकर मुहम्मद साहब को सुलह की शर्तों की याद दिलाई । मोहम्मद साहब ने लड़के को बाप के साथ वापिस जाने पर मजबूर किया और उसे दुःखी देख तसल्ली देते हुए कहा—“सन्न करो और अल्लाह पर भरोसा करो, तुम्हारे और तुम्हारे जैसे दूसरों के छुटकारे का वह ज़रूर कोई न कोई रास्ता निकालेगा ।”

इसी तरह की और भी कई मिसालें मिलती हैं । मक्के में ऐसे लोग बढ़ते जा रहे थे, जिनके दिल मुहम्मद साहब के साथ

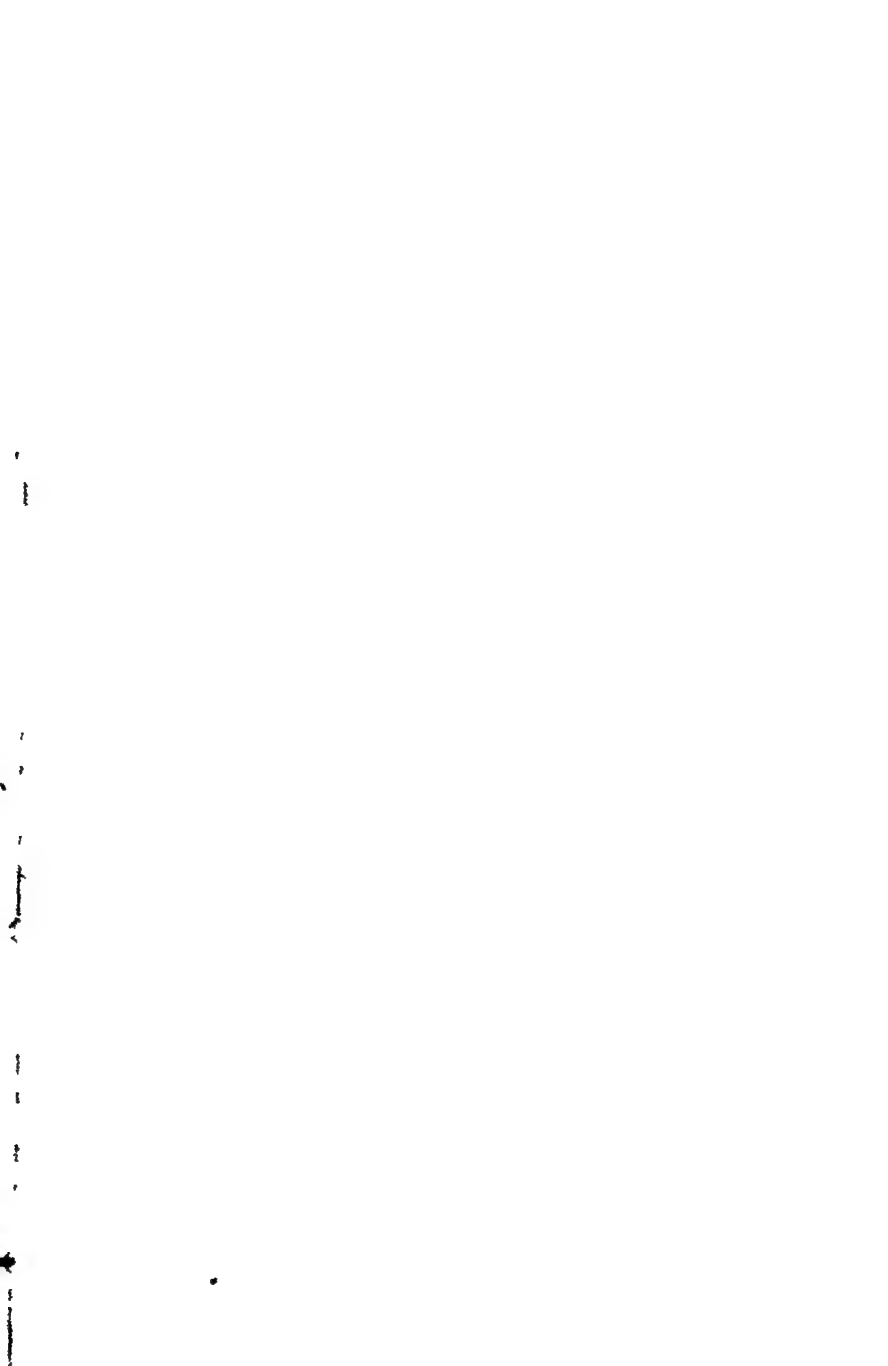
थे, पर जो क्रूरैश के दर के नारे मुहम्मद नायब का नायब न दे सकते थे ।

फिर भी हुदैवियाह की सुन्दर से मुहम्मद नायब का ज़माना साफ बढ़ा ।

मक्के की दूसरी यात्रा

एक साल बीतने पर, जैसा तय हो चुका था, मुसलमानों के मक्के जाने का वक्त आया। सन् ६२६ ईसवी में २००० मुसलमानों को साथ लेकर काबे की हज के लिए मुहम्मद साहब फिर मक्के की तरफ चले। फिर इन २००० में से किसी के पास कोई हथियार न था। उनके कपड़े हाजियों के कपड़े थे। इनमें जो लोग सात साल से अपने घरों से निकले हुए थे मक्के पहुँचते ही उनकी खुशी का ठिकाना न रहा।

“सचमुच मक्के की घाटी में जो चीज़ उस वक्त देखने को मिली वह दुनिया के इतिहास (तारीख) में अनोखी थी। मक्के के सब छोटे बड़े लोगों ने तीन दिन के लिये उस पुराने शहर को खाली कर दिया। हर घर सूना पड़ा था। जब वे चले गए तो अपनी से बिछुड़े मुसलमान, जो बरसों अपने घरों से दूर रह चुके थे, एक बहुत बड़ी तादाद में अपने नए साथियों को लेकर फिर अपने वचपन के खाली घरों में आए और थोड़े से वक्त में उन्होंने हज की रस्में पूरी कीं। मक्का वाले चारों तरफ की पहाड़ियों पर, खेमों में या घाटियों के साए





में जमा हो गए और अबु जुबैर को लूचों पहाड़ी पर से नीचे ले यात्रियों को अपने पैगम्बर के साथ साथ जावे के चारों तरफ लड़क लगाते (परिक्रमा तबाक़ करते) और जैसा पुराना रिवाज था सफ़ा और मरवा की पहाड़ियों के बीच तेज़ी से दौड़ते हुए ऊपर से। वे बड़े शौक के साथ इतनी दूर में हर आदमी के चेहरे को देखने से। इस उम्मीद में कि हो सकता है उन यात्रियों में उनके किसी एक को खोए हुए रिश्तेदार या भाई का चेहरा दिखाने में लगे। इनमें से पैदा होने के दरदों से कहीं इनादद दरदों के साथ इराजान का नाम हुआ। ऐसे दरदों में ही हम तरह जो चीज़ें देखने में आ सकती थी।”*

मुहम्मद साहब और उनके साथियों ने जावे की सब दुकानों रस्मों को अदा किया और तीन दिन तक वहाँ रुक कर, जहाँ नरसी, बड़े प्रेम और बड़े मिठान के साथ सब में रह कर चौथे दिन सब के सब बाहर चले आए। या बाहर आने में रखने की है कि जब मुहम्मद साहब और उनके साथी जावे के चक्कर लगा रहे थे और सब रस्में अदा कर रहे थे, तब हमें कि उनके जिलों में एक निराश्रित मकान के निवासी होने का खयाल न था, जावे के २६० दुतों में सबके सब जावे के मकान मौजूद थे और मुहम्मद साहब या उनके किसी साथी ने कोई बात भी ऐसी नहीं की, जिनमें किसी दुत को देखने की जरूरत होती जाती या जिनमें किसी पुराने रस्मान में सब उनके का रिश्ता

*“Life of Mohammed” by Sir W. M. L. I. 2.

दुखता। मक्के के लोग मुसलमानों के इस वर्ताव को देख कर दंग रह गए और उन्होंने तसल्ली की सांस ली। मुसलमानों के मदीने चल देने पर वे फिर अपने अपने घरों में आ गए।

यहूदियों और मुसलमानों में मेल

मुसलमानों के इस वर्ताव से इस्लाम की जड़ें लोगों के दिलों में जम गई। बहुत से बड़े बड़े कुरैश मुसलमान हो गए। इस्लाम के माननेवालों की तादाद तेजी से बढ़ने लगी और आस पास के कबीलों ने जल्दी जल्दी नए पैगम्बर के धर्म और उसके राज दोनों को मानना शुरू कर दिया।

लेकिन यहूदियों की दुशमनी अभी तक पूरी तरह टूटी नहीं हुई थी। मुहम्मद साहब को मक्के में लौटकर उनके साथ आखरी मोरचा लेना पड़ा। अरब में यहूदियों का मन्नेन बड़ा गढ़ मदीने से कोई १०० मील उत्तर में एक शहर होकर था। कुछ चारों यहूदी और कुछ और कबीले मदीने पर एमना करने के इरादे से खैबर के आस पास जमा हो गए।

मुहम्मद साहब ने १४०० योद्धाओं को लेकर मैदान पर चढ़ाई की। उन्होंने यहूदियों से सुल्ह पे लिये जहा, लेकिन बेकार। यह इलाका पहाड़ी था और इस्ने दूर में नष्ट हुए थे।

थे। कई हफ्ते लड़ाई होती रही, जिसमें अबुबक्र, उमर और अली तीनों ने हिस्सा लिया। आखीर एक एक कर सब किले मुसलमानों के हाथों में आ गए। अब यहूदियों ने सुलह चाही। उनकी बात मान ली गई। उन्हें अपने धर्म पर चलने की पूरी आजादी दे दी गई। उनकी ज़मीनें और माल असवाब सब उन्हें वापिस दे दिया गया। और उन्होंने ने मदीने की क़ौमी सरकार को अपनी सरकार मान लिया। यहूदी और मुसलमान अब से एक मिली हुई क़ौम एक “उम्मत” बन गए।

मुहम्मद साहब अभी खैबर के किले में ही थे कि उनकी जान लेने की फिर एक कोशिश की गई। एक यहूदी औरत ने मुहम्मद साहब और उनके साथियों के लिये खाना परसा, जिसमें ज़हर मिला दिया गया था। उनका एक साथी दो चार कौर खाकर मर गया। मुहम्मद साहब भी पता लगने से पहले खाना चख चुके थे। उनकी जान बच गई लेकिन अन्दर जो ज़हर जा चुका था, उसके सबब वाक़ी ज़िन्दगी भर उन्हें दुःख भोगना पड़ा। मुहम्मद साहब ने उस औरत को विलकुल माफ़ कर दिया और सुलह की शर्तों पर इसका कोई असर नहीं पड़ने दिया।

कुरैश के साथ कम से कम दस साल के लिये सुलह हो चुकी थी। यहूदियों की दुश्मनी भी ठण्डी हो चुकी थी। मदीने की ताकत बढ़ रही थी। इसलिये १५ साल पहले जो मुसलमान अपने धर्म को बचाने के लिये इथियोपिया भागकर चले गए थे, उनमें से बहुत से अब अपने देश लौटकर मदीने में रहने लगे।

रोम वालों से लड़ाई और जीत

२७२

अरब के बीच के हिस्से में जो उन दिनों आज़ाद था, अब कोई खास दुश्मन मुहम्मद साहब का न रहा था। इन नार्थ हिस्से के लोग धीरे धीरे एक ईश्वर और एक धर्म के मानने वाले और एक कौम बनते जा रहे थे। मुहम्मद साहब का ध्यान अब दक्खिन और उत्तर के उन अरब इलाकों की तरफ गया, जो विदेशी बादशाहों के हाथ में थे। दक्खिन में यमन और उसके पास के उपजाऊ इलाके इस बीच इथियोपिया के ईसाई बादशाह के हाथों से निकल कर ईरान के झरगुमी नज़ाद खुसरो परबीज़ के हाथ में आ चुके थे और शान ने निते एए उत्तर के कुछ सूबे रोम के ईसाई सम्राट के मानएत थे। जो नये रोम के हाथ में थे, वहाँ की अरब प्रजा को भी ईसाई बनकर ही रहना पड़ता था।

ईरान और रोम इन दोनों दली ताकतों की लगातार जंगनों लड़ाइयों और दोनों की गिरती हुई शक्त को मुहम्मद साहब

ख़ूब जानते थे। रोम के राज में ईसाई धर्म की गिरावट और ईरान में पुराने पारसी धर्म की उन दिनों की बुरी हालत भी उनकी आंखों से ओझल न थी। उन्हें मालूम था कि रोम के सारे राज में धर्म की आज़ादी का कहीं निशान न था, ईसाई सम्राटों और पादरियों की छोटी निगाह इस हद को पहुँच गई थी कि साइन्स, वैद्यक वगैरह का पढ़ना पढ़ाना वहाँ जुर्म था और धर्म के नाम पर आए दिन हज़ारों और लाखों मनुष्य जिन्दा जलाए जा रहे थे और तलवार के घाट उतारे जा रहे थे। ऐसे ही ईरान में उस ज़माने के ज़रथुस्ती धर्म ने लाखों ऐसे पेशे वालों को जिन्हें अपने पेशे में आग काम में लानी पड़ती थी, जैसे सुनार, लोहार वगैरह हिन्दुस्तान के अच्छूतों से भी बुरी हालत को पहुँचा रखा था। मुहम्मद साहब ने सोचा कि अगर इन दोनों जगह के सम्राट इसलाम धर्म अपना लें, यानी और सब चीज़ों को छोड़कर सिर्फ़ एक अल्लाह की पूजा करने लगे, और सब आदमियों को एक बराबर समझने लगे, तो इन दोनों देशों का सुधार भी आसान हो जाय और उनकी अरब प्रजा को भी इसलाम अपनाने का सुभीता हो जाय।

उन्होंने ने वेधड़क आस पास के बादशाहों को इसलाम धर्म मान लेने को लिखा और खास आदमियों के हाथ ६२८ ई० में इनके पास ख़त भेजे, जिनमें उन्हें अपने बहुत से देवी देवताओं और बुतों की पूजा और निकम्मी बहसों को छोड़कर एक निराकार अल्लाह की पूजा करने का उपदेश दिया। इनमें दो

खत खास थे, एक कुस्तुनतुनिया में रोम के सम्राट हिरेक्लियस के नाम और दूसरा ईरान के सम्राट खुसरो परवीज के नाम। तीन और खत, एक यमन के हाकिम के नाम, एक मिस्र के हाकिम के नाम और एक इथियोपिया के बादशाह के नाम थे। हिरेक्लियस ने खत पाकर मुहम्मद साहब के चलन बर्गस के बारे में और ज्यादा जानना चाहा; लेकिन परवीज ने दाने घमण्ड के साथ खत फाड़कर फेंक दिया।

मुहम्मद साहब ने अब इन सब सरहदी अरब इलाकों में इसलाम धर्म समझाने वाले भेजने शुरू किये। इनमें एक इलाक़ की तरफ शाम की सरहद पर के अरब क़र्बानों के पान गए। रोम के सम्राट अपने राज में मज़हब की आजादी का नाम सुनना भी न सह सकते थे।

मुहम्मद साहब के भेजे हुए आदमियों और रोम के पामिन में टकराव होनी ही थी।

रोम के मानहत्त प्रन्मान का हाकिम फ़रवाह एक ईसाई अरब था। उसे मुहम्मद साहब का नया धर्म पसन्द न गया। उसने इसलाम अपना लिया और मुहम्मद साहब को अपना भेजा। वहाँ के रोमी गवर्नर को जब पता चला तो उसने फ़रवाह को फिर से ईसाई हो जाने के लिये लिखा और साथ ही तनखाह और प्रोहदे में तरकीब का लोभ दिया। फ़रवाह ने इनकार कर दिया। फ़रवाह को मौत की सज़ा दे दी गई।

इस पर मुहम्मद साहब ने रोम की हकूमत के साथ एक तरह का सत्याग्रह शुरू कर दिया। वह अपने देशवासी अरबों में इस्लाम फैलाने की आज़ादी चाहते थे। शाम की सरहद पर अरब क़बीलों में इस्लाम फैलाने के लिये मुहम्मद साहब ने दस दस, बीस बीस मुसलमानों के जत्थे भेजने शुरू किये। इन जत्थों में से इक्का दुक्का आदमी बचकर मदीने तक वापिस आता था। बाक़ी सब मार डाले जाते थे। इतने बड़े राज के अन्दर इन छोटे छोटे जत्थों का कोई फ़ौजी या राजकाजी मतलब न हो सकता था। मुहम्मद साहब की गरज़ सिर्फ़ अरबों में इस्लाम फैलाना था। पर रोम के हाकिम अपनी प्रजा को इस तरह की आज़ादी देना न चाहते थे।

मुहम्मद साहब ने सब शिकायतें लिखकर एक ख़त वोसरा (फ़िलिस्तीन) के ईसाई गवर्नर के नाम एक ख़ास आदमी के हाथ भेजा। रास्ते ही में मौतह के ईसाई हाकिम शुरहवील ने उस आदमी को मार डाला।

यह बात याद रखनी चाहिये कि जिन इलाक़ों में मुहम्मद साहब के उपदेश देने वाले जाते थे और मार डाले जाते थे वह सब अरब ही के हिस्से थे, और अरबों ही की वहां आवादी थी। मुहम्मद साहब के पास अब सिवाय लड़ने के और कोई चारा न था और लड़ाई भी इतने बड़े राज के साथ। तीन हज़ार हथियारबन्द सिपाही मुहम्मद साहब के पुराने साथी ज़ैद के मातहत मौतह की तरफ़ भेजे गए। इस फ़ौज में ज़ैद के अलावा

और कई मशहूर मुसलिम सरदार थे। इनमें एक अबुतान्नि का बेटा अली का भाई जाफ़र था, जिसने इथियोपिया के ईसाई बादशाह के सामने मुसलमानों की वकालत की थी। दूसरा मशहूर मुसलमान बहादुर और शायर अब्दुल्लाह था, तीसरा बनीद का बेटा ख़ानिद था, जो कभी मुहम्मद साहब का कट्टर दुश्मन रह चुका था और जो बाद में इन लोगों के सबसे बड़े फौजी सरदारों में से हुआ। इन छह सरदारों के रहने एक आज़ाद हुए हथ्थी गुलाम ज़ैद को मारी फौज में और सब सरदारों का सरदार बनाना मुहम्मद साहब की नज़्म से अरबों के अपनी नसल और ख़ानदान के घमरे पर एक खासा वार था।

चलते वक्त मुहम्मद साहब ने ज़ैद को हिदायत दी—

“लोगों के साथ नरमी का बर्ताव करना, श्रीमंतों, दलों, ईसाई साधुओं और कमज़ोरों पर किसी हालत में भी हमला न करना, न गिरों का घर गिराना और न कोई फलदार दरख़्त काटना।”

रास्ते में इन लोगों को पता चला कि एक बहुत बड़ी रीम की फौज सम्राट हिरैरिलियस के भाई थियोडोरस के मानाज़ मुसलमानों को कुचलने के लिये आ रही है। सलाह होने लगी। कुछ की राय हुई कि मुहम्मद साहब के पास तादानी भेजकर फिर से उनकी राय ले ली जाय। अब्दुल्लाह ने ज़रूरत पर कहा “हम तादद के भरोसे नाने नहीं पढ़ें, उन मिरों का

की राह पर और उसी की मदद की उम्मीद में घर से निकले हैं। जीतेंगे तो नाम है। मरेंगे तो जन्नत।”*

अपने नए धर्म की सच्चाई के अन्दर इस अटल विश्वास ने ही सातवीं सदी के अरबों में वह ताकत पैदा कर दी थी, जिससे वे बड़ी से बड़ी सीखी हुई फौजों और बड़ी बड़ी हकूमतों के सामने भी मैदान पर मैदान जीतते चले गए।

मौतह नगर के पास दोनों फौजों में मुठभेड़ हुई। इसलाम का भण्डा जैद के हाथों में था। जैद के गहरा ज़ख्म लगा। भण्डा उसके हाथों से गिरने ही को था कि जाफर ने आगे बढ़कर भण्डे को उंचा किया। लड़ाई का सारा जोर इसी भण्डे के आसपास था। जिस हाथ में जाफर ने भण्डा थामा वह हाथ कट कर गिर गया। जाफर ने दूसरे हाथ से भण्डा सम्हाला वह भी कट कर गिर गया। जाफर ने अपने दोनों लहू लहान बाजुओं से भण्डा दावे रखा। एक और बार में जाफर की खोपड़ी के टुकड़े उड़ गए। जाफर गिर गया। अब्दुल्लाह ने बढ़ कर भण्डा अपने हाथ में लिया। अब्दुल्लाह भी कट कर गिर गया। ख़ालिद ने अब्दुल्लाह की जगह ली और चीरता हुआ कुछ दूर तक रोम की फौज के अन्दर घुस गया। इतने में शाम हो गई। दोनों फौजों को एक दूसरे की वहादुरी का काफी

* ‘हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम’—
भगवद्गीता ।

अन्दाजा हो चुका था। दोनों ने नय किया कि रान को अपनी अपनी जगह आराम करें और सुबह जो लड़ाई फिर शुरू हो। लिखा है उस दिन की लड़ाई में खालिद के हाथों ने नौ तलवारें टूटी।

दूसरे दिन खालिद ने, जो अब जैद की जगह नानी फौज का सरदार था, इस हांशियारी के साथ फौज को गया मिया और मुसलमान जत्थों को अलग अलग तरफ में आगे बढ़ाया कि थोड़ी ही देर बाद रोम की फौज पीछे हटने लगी। उन्हें भगदड़ मच गई। कुछ दूर तक खालिद ने उनका पीछा किया। लेकिन दो दिन की लड़ाई में काफी मुसलमान मर चुके थे और काफी घायल हो चुके थे। थोड़ा देर तक भागते हुए दुनमन का पीछा करने के बाद रोम की फौज का बहुत ना पीमती नाम और उनके छुट्टे हुए हथियार साथ लेकर खालिद मर्दीने की तरफ लौटा। यह खालिद दुनिया के बड़े से बड़े जर्मनों या फौजी सरदारों में गिना जाता है।

इस जीत पर मर्दीने में खुशी और रंज दोनों मिले हुए थे। मुहम्मद साहब ने खालिद को गले लगाया, लेकिन अपने लफ्ठे जाकर के यतीम बेटे और दरगजर जैसे ही लोडो लफ्ठे से देखकर मुहम्मद साहब उनके बिस्तर पर इस तरह पड़ा कि वह रोए कि पास के एक आदमी ने हैबान फोर पद हो लिया "मे अल्लाह के रन्गल ! क्या गाय भी इस तरह रोते हैं ?"

इस लड़ाई से मुहम्मद साहब दुनिया में मशहूर होगए ।
उत्तर अरब के लोग अब बड़ी बड़ी तादाद में इसलाम अपनाने
लगे, और उत्तर के सूबे एक एक कर रोम के राज से टूटकर
मदीने की आज़ाद क़ौमी सरकार को अपनी सरकार मानने
लगे ।

मक्के की जीत

- - - - -

मुहम्मद साहब का ध्यान अब फिर मक्के की तरफ गया ।
कुरैश के साथ सुलह हो चुकी थी । लेकिन कुछ मुसलमानों ने फिर
इस सुलह के खिलाफ जुजाय्हा करवाने पर जोर देने की
सरकार की रिश्ताया थे, हमला कर दिया । मुहम्मद साहब ने
इस बार १०,००० हथियारबन्द लेकर मक्के पर चढ़ाई की ।
इस फौज की मददारी उमर और मौपी गई ।

शाम को यह फौज मक्के के बाहर जाकर ठहरी । मिनतियों
को हुक्म था कि जहाँ तक हो सके मिनती पर हमला न करना,
और अगर कोई दुश्मन मिले, तो उसे पकड़ लें । सोनी के
बाद पहर के कुछ निपारी शहर के बाहर से दो आदमियों ने
पकड़कर मुहम्मद साहब के सामने लाए । उनके दरमियाँ मुसलमान
सदर अबु सुफियान था । अपने मित्रों और के साथ-साथ,
जिनके साथ मुसलमानों को भील माना जा रहा था, हमला
के लक्ष्य परी थी, अपने सामने देखकर मुहम्मद साहब

आंखों से टप टप आंसू गिरने लगे। उन्होंने ने विना किसी शर्त के अबु सुफियान के सब पुराने कसूर माफ कर दिये और उसे इज़्ज़त से बैठाया। अबु सुफियान के दिल पर इसका गहरा असर हुआ। वह अहसान से दब गया। अबु सुफियान की मार्फत मक्का वालों को संदेशा भेजा गया। कहा जाता है कि सिर्फ़ मुट्ठीभर लोगों को छोड़ कर अबु सुफियान ने और सबने मुहम्मद साहब को अपना सरदार, और मदीने की सरकार को अपनी क़ौमी सरकार मान लिया। इस तरह विना एक भी आदमी का खून वहे मक्का जीत लिया गया।

अगले दिन बहुत सवेरे मुहम्मद साहब अपने साथियों को लेकर शहर की तरफ बढ़े। एक दल ख़ालिद के साथ था। लोगों को हिदायत थी कि सब के साथ नरमी और बरदाश्त से काम लें और अपनी तरफ़ से किसी पर हमला न करें। कहते हैं कुछ कुरैश ने ख़ालिद के दस्ते पर दो चार तीर चला दिये, जिसका ख़ालिद ने भी तलवार से जवाब दिया। मुहम्मद साहब ने उसी दम खुद आगे बढ़कर ख़ालिद को रोक दिया। शहर के बाहर मुहम्मद साहब ने अपने मामूली कपड़े उतार कर और हथियार अलग रखकर 'एहराम' बांधा यानी कावे के यात्री के कपड़े पहने और विना हथियार अकेले ऊंट पर बैठ कर ठीक सूरज निकलते निकलते शहर के अन्दर पहुँच गए।

“जिन लोगों ने शुरू से अब तक मुहम्मद साहब को इतनी तकलीफ़ें पहुँचाई थीं, वे अब उनके क़दमों पर थे... ऐसे ही वक्फ़ पर

आदमी अपने असली रंग में दिखाई देता है। मर्घा बात बहुत ठोस होती है, और वह एक सच्ची बात है कि अपने हिन्दुओं भर के दुश्मनों के ऊपर मुहम्मद साहब की सबसे बड़ी जीत का दिन ही अपनी आत्मा के ऊपर भी उनकी सने बड़ी जीत का दिन था। कुरैश ने बरसों जो उन्हें दुःख पहुंचाए थे, वेइज़ज़ती की गो और जुल्म किये थे, मुहम्मद साहब ने सबको खुले दिल से माफ कर दिया। उन्होंने ने मक्के के तमाम लोगों का दर दूर कर दिया। जिस वक्त उन्होंने ने अपने सब से कट्टर दुश्मनों के शहर में जीत का दिन मना हुआ पाव रखा, सिर्फ चार नाम उनके पास ऐसे थे जिन्हें इनाम में सजा देना जरूरी था। पैगम्बर के बाद उनकी पीछ ने भी उन्होंने की मिसाल पर अमल करते हुए ठरडे दिल से और खुब चार शहर में कदम बढ़ाया। न एक मकान लूटा गया और न एक मीरात की वेइज़ज़ती की गई।”^५

उस ज़माने के फ़ौजी इतिहास में यह सचमुच एक अद्वितीय बात थी। जिन चार आदमियों को सजा देना जरूरी था, उनमें से भी तीन को बाद में माफ कर दिया गया।

मक्के वालों के दिल पर मुहम्मद साहब की इन दो नरमी का इतना गहरा असर पड़ा कि उनके कट्टर से कट्टर दुश्मनों, यहां तक कि अबु सुफियान ने और बाद में युरेयिों तक ने इस्लाम धर्म अपना लिया।

मक्का अब मुसलमान था। काबे के मन्दिर में मूर्तियों के रहने की अब कोई वजह न थी। इसके बाद एक दिन मुहम्मद साहब सीधे काबे के मन्दिर की तरफ गए। ऊपर आ चुका है कि काबे में ३६० बुत थे। एक एक बुत के सामने मुहम्मद साहब यह आयत पढ़ते जाते थे और उनके साथी बुत को उसकी जगह से हटाते जाते थे—“सच्चमुच्च अब हक़ (सच) कायम हो गया और वातिल (झूठ) उठ गया ।”*

इस तरह उस दिन दोपहर तक मक्के और उसके आस पास के सब बुत हमेशा के लिये अपनी पूजा की जगहों से हटा कर अलग कर दिये गए। मूर्तियाँ हट गईं, फिर भी काबा पहले से भी ज्यादा शान के साथ सब अरबों का सब से बड़ा तीर्थ बना रहा।

ऊपर आ चुका है कि मुहम्मद साहब धर्म के मामले में किसी के साथ किसी तरह की भी जबरदस्ती को ठीक न समझते थे। यमन के ईसाई हाकिम ने इसी काबे के मन्दिर पर हमला करके उसे गिराना चाहा था। खुद क़ुरान के अन्दर उसके इस काम को बुरा बताया गया है। हमला करने वालों पर जो मुसीबत आई थी उसे क़ुरान ने ‘ईश्वर की भेजी आफ़त’ कहा है। जहाँ तक सब के लिए मजहबों की आज़ादी का सवाल है, इसलाम मूर्ति पूजने वालों और निराकार के पूजने वालों में

*.क़ुरान, १७, ८१।

कोई करक नहीं करता। मुहम्मद साहब ने हर धर्म के लोगों के मन्दिरों, मठों, गिरजों, सब की हित्ताजत करना मान गठों में बार बार मुसलमानों का धर्म (क़र्ज) बनाया।

लेकिन अब न मक्के के अन्दर बल्कि सांग अरब में करीब करीब सब लोग मूर्तिपूजा छोड़ कर एक निराकार ईश्वर की पूजा अपना चुके थे। इन लोगों का विश्वास था, जैसा कुरान में लिखा है, कि कावे के फायस करने वाले एडरन इबराहीम ने वहां कोई मूर्ति नहीं बिठाई थी, इबराहीम सिर्फ एक निराकार की पूजा करते थे और बाद में नासमन्गी के दिनों में कावे के अन्दर मूर्तियां रख दी गईं। जो हां, जिन्हीं भी धर्म की जगह के बारे में वहां के पूजा करने वालों को अपनी राय में जो चाहे बदलाव या सुधार करने का पूरा एज है।

हो सकता है मुहम्मद साहब यह भी समझते हों कि जिन तरह मैंने अरबों के दिलों को मूर्तिपूजा से हटा दिया है, उन्हीं तरह अगर अपने जीते जी कावे के मन्दिर को इन मैदानों, रंग विरंगी, सुडौल, और बेटौल लकड़ी पत्थर तारों और पट्टे तार की मूर्तियों से चाली न कर दिया तो हो सकता है मेरा नारा काम मेरे जाते ही समन्दर की एक लहर की तरह मिट जाए।

इसके अलावा कावे में इन दुनों का हम बड़ा फायदा होगा किसी एक आदमी का किसी दूसरे की पूजा की सोचों को हटाना न था, बल्कि एक पूरी ज़मान का जीवन मानव का रूप सोचने समझने के बाद अपनी मरवा में अपने मैदानों पर

के पूजा के तरीकों में एक गहरा बदलाव या सुधार करना था। अरबों की सारी क़ौम उन दिनों अपनी केंचुली बदल रही थी। उसकी काया पलट हो रही थी। या गहरे दरदों के साथ एक नई अरब क़ौम जन्म ले रही थी। और मुहम्मद साहब ईश्वर के हाथों में इस कायापलट या केंचुली बदलने के ज़रिये थे या उस देश का तेज़ी से थड़कता हुआ दिल थे।

दोपहर को मुहम्मद साहब के हुकुम से काबे की चोटी से खड़े होकर विलात ने, जो पहले एक हव्शी गुलाम थे, ऊंची आवाज़ से शहर और बाहर के तमाम लोगों को नमाज़ के लिये बुलाया। विलात इस्लाम के सबसे पहले मुअज़्ज़िन (अज्ञान देने वाले) मशहूर हैं। अज्ञान इस्लाम में नमाज़ का कोई हिस्सा नहीं है। सिर्फ़ जहां आस पास इस तरह के मुसलमान हों, जिन्हें नमाज़ के लिए बुलाना हो, वहां अज्ञान बुलाने का तरीक़ा रखा गया है। नमाज़ में काबे की तरफ़ मुंह करने के बारे में, मुहम्मद साहब के पैग़म्बर होने के १३ साल बाद तक जब तक मुहम्मद साहब मक्के में रहे नमाज़ में किसी खास तरफ़ मुंह करना ज़रूरी न था। मदीने पहुँचने के बाद सब मुसलमानों के एक जगह इकट्ठे होकर खुले नमाज़ पढ़ने का मौक़ा आया। मदीने में १६ महीने तक मुहम्मद साहब उत्तर की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ाते रहे, और काबा मदीने से ठीक दक्खिन में है। मदीने से उत्तर में बल्कि उत्तर पच्छिम के कोने में यरूसलम है, जिधर यहूदी अपनी पूजा के वक्त मुंह

किया करते थे। यही उस वक्त तक मुसलमानों का भी रिवाज़ (पूजा में जिधर मुंह करते हैं) था। मदीने पहुँचने के मोला महीने बाद, मुहम्मद साहब ने उत्तर में बदल कर दक्षिण की तरफ मुंह करके नमाज़ पढ़ाना शुरू किया। यहूदियों ने नम्रद पूछा। इस पर क़ुरान में यह आयत है—

“नासमक लोग यह कहेंगे कि इन लोगों ने अरना रिवाज़ (जिधर मुंह करके नमाज़ पढ़ा जावे) क्यों बदल दिया। उन्हें ज्ञात दो कि पूरब और पच्छिम दोनों अस्साद के हैं। वह जिनकी चारुता है ठीक रास्ते पर लगाता है।”

इसके बाद की यह आयत और भी नाफ़ है—

“और पूरब और पच्छिम दोनों अस्साद के हैं, इन्हींके बिना भी तुम मुंह करो उधर हो अस्साद का रुह है। मकरान अस्साद सब जगह और सब कुछ जानने वाला है।”

कावे की यात्रा की, जिनमें आज कल हैं, ग़रे एगानी जेपुरा रस्मों को मुहम्मद साहब ने सुधार दिया। जैसे पहले लोग विल्कुल नगे होकर कावे के चारों तरफ चक्कर लगाया करते थे। मुहम्मद साहब ने इस रिवाज़ को बन्द कर दिया और कानों के लिए कपड़े पहन कर चक्कर लगाने की रिवाज़ कर दी।

दोपहर की नमाज़ के बाद मुहम्मद साहब ने एक निराकार ईश्वर, और सब आदमियों के भाई भाई होने पर उपदेश दिया। उसके बाद कुरैश के सरदारों ने मुहम्मद साहब को अपना सरदार मानते हुए अपनी पिछली भूलों के लिये दुःख जताया। मुहम्मद साहब की आंखों से आंसू गिरने लगे। उन्होंने जवाब दिया—

“हां आज मेरी तरफ से आप लोगों के ऊपर कोई इल्ज़ाम नहीं रहा। अल्लाह आप को माफ़ कर देगा। वह सब दयावानों से बढ़कर दयावान (रहमुर्रहमीन) है।”

इसके बाद अपने वाक्की साथियों की तरफ़ मुड़कर मुहम्मद साहब ने उन्हें कुरान की ये आयतें पढ़कर सुनाई—

“बुराई का इलाज भलाई से करो।

“सबसे अच्छी बात वह करता है जो अल्लाह की तरफ़ लोगों को बुलाता है और खुद नेक काम करता है और फिर कहता है कि मैंने अपने को अल्लाह पर छोड़ दिया है।

“भलाई और बुराई बराबर नहीं हो सकतीं, दूसरा तुम्हारे साथ बुराई करे तो तुम जवाब में उसके साथ भलाई करो; और वह जिसे तुमसे दुश्मनी थी, तुम्हारा दिली दोस्त हो जायगा।

“जिन लोगों के दिलों में विश्वास है उनसे कहो कि वह उन लोगों को माफ़ कर दें जिन्हें उस दिन का डर नहीं है जिस दिन वह अल्लाह के सामने जायेंगे।

“और जल्दी ही अपने रथ ने अपनी भूलों के लिये मानी मंगी और उस स्वर्ग के लिये प्रार्थना करो जो धरती और आकाश के फैली हुई है। वह उन लोगों के लिये है जो परहेज़गार बानों सदाचारी हैं, जो गरीबी अमीरी दोनों में दान देने रहते हैं, जो अपने गुस्ते को दबाते हैं और जो आदमियों को मान करने हैं क्योंकि अल्लाह दूसरों के साथ नैकी करने वालों को ही प्यार करता है। *”

कुछ दिन मक्के में रहकर मुहम्मद साहब ने चाही में चारों तरफ अपना धर्म समझाने वाले भेजे। इन लोगों को फिर नाक़्तौर पर यह हिदायत दी गई कि किसी के साथ मर्यादा न करना। ख़ालिद सदा से तबियत का नेज़ था। वह जुज़ैमा कबीले के कुछ लोगों से लड़ पड़ा, जिसमें उन कबीले के एक लोग मारे गए। मुहम्मद साहब को जब पता लगा उन्होंने दुःखी होकर दो बार चिल्लाकर कहा—“ऐ अल्लाह! मैं इस मारे में बेक़सूर हूँ” फिर ख़ालिद को बुलाकर दाँदा और नुर्रान अली को भेजकर जिन जिन का जितना नुर्रानान एजा था मर से माफी मांगी और सबको पूरा पूरा हरजाना मिल गया। लिखा है कि अली ने “अपनी नरमी में और मुँह में और खुले हाथों उनकी मदद कर फिर सबको गुम कर दिया।” जुज़ैमा कबीले के जिन लोगों को ख़ालिद ने मारा था, उनके ने इससे पहले एक मुसलमान लम्बे अन्दरुंगान के फटे फाँटों और खुद ख़ालिद के चप्पा को मार डाला था। अन्दरुंगान

* पुरान १२-२६, २३-६८, ४५-३३, ३४, ४४-५१, ३-५३, ५३३।

को खुश करने के लिये ख़ालिद ने उससे आकर कहा “मैंने तुम्हारे बाप के मारने का बदला लिया है” लेकिन मुहम्मद साहब किसी से भी हत्या तक का बदला लेने को मना कर चुके थे। नौजवान अब्दुर्रहमान ने उल्टा कर जवाब दिया— “यू क्यों नहीं कहता कि तूने अपने चचा की हत्या का बदला लिया है ! तूने इस काम से इसलाम पर धब्बा लगाया है !”

जब यह सवाल आया कि अब बाक़ी ज़िन्दगी मक्के में बिताई जावे या मदीने में तो मुहम्मद साहब ने यह कहकर मदीने के लिये फ़ैसला दिया कि मदीने वालों ने उन दिनों मेरा साथ दिया था, जब कोई मेरे साथ न था और मैंने वचन दिया था कि मैं उनके ही बीच में मरूंगा।

मक्के से उतर कर तायफ़ का नगर जिसमें ‘लात’ देवी का मशहूर मन्दिर था, पुराने अरब रिवाजों का सबसे बड़ा गढ़ था। १० साल पहले इसी नगर से मुहम्मद साहब लहू लुहान कर निकाले गये थे। तायफ़ के आस पास के कुछ क़बीलों ने अभी तक मदीने की नई क़ौमी सरकार या इसलाम धर्म दोनों में से किसी को नहीं अपनाया था। इस बार मुहम्मद साहब की मक्के की जीत ने उनकी दुश्मनी की आग को भड़का दिया। तायफ़ के पास अ़ौतास की घाटी में कुछ पहाड़ी क़बीले मुसलमानों पर हमला करने के लिये जमा हुए। मुहम्मद साहब मक्के से रोकने के लिये निकले और हुनैन और अ़ौतास की लड़ाइयों में कम से कम खून ख़राबी के बाद नई अरब क़ौमी

सरकार के खिलाफ इस आखरी धनवे को ठगवा दिया। इन लड़ाइयों में दुशमन को मारने की जगह मुसलमानों ने मुहम्मद साहब के हुकुम से उन्हें सिरफ पकड़ कर ले जाने की गिनत की। औतास की लड़ाई में उस हवाजिन कबीले के छह हजार आदमी पकड़ लिये गए, जिन कबीले की धाया हलीमा ने पांच साल बालक मुहम्मद को दूध पिलाया था। बुढ़िया हलीमा अभी जीती थी। मुहम्मद साहब की जीत के बाद वह उनसे मिलने आई। मुहम्मद साहब ने गड़े तोंवर की इच्छा से उसकी आवभगत की। अपनी चारों तरफ पर उनके पैरों के लिये बिछा दी और उनके कपड़े पर उसी रंग का रंग हवाजिन कैदियों को छोड़ दिया।

मक्के लौटकर मुहम्मद साहब ने बाग के लोगों को धर्म की सीख देते रहने के लिये मुज्राज नामी एक आदमी को 'इमाम' बनाया और शहर के धनगोष्ठ के लिये एक नौजवान उतबह को शहर का हाकिम चुना। मुद अपने साथियों को लेकर वह मदीने लौट आए। मदीने पहुँचने के पछे ही इन्हीं बाद तायफ के कुछ खास खास लोग मुहम्मद साहब के पास आए, उन्होंने दस सान परले की भूत के लिये मांगी मांगी और अपने सारे कबीले की तरफ से इस्लाम धर्म अपनाने की इजाजत चाही। तायफ मदीने की जैसी सरकार में मिल लिया गया।

‘तइ’ कवीले का मुसलमान होना



इन दिनों ही ‘तइ’ कवीले ने इसलाम अपनाया जिसकी कहानी खासी मनभाती है। यह कवीला मदीने से कोई दो सौ मील उत्तर में शाम की सरहद पर रहता था। शाम के रोमी हाकिमों ने उसे मदीने की नई सरकार के खिलाफ गुटवन्दियों का अड़्डा बना रखा था। वहां मजहब की आजादी न थी। इसलाम फैलाने वाले वहां मार डाले जाते थे। मुहम्मद साहब ने अली को फौज के साथ भेजा। गरज सिर्फ यह थी कि ‘तइ’ कवीले के सरदारों पर जोर दिया जावे कि अपने इलाके में लोगों को मजहब की आजादी दें और इसलाम फैलाने वालों को समझाने की इजाजत हो। यह कवीला ऐसी जगह रहता था कि नई अरब सरकार के लिए उनकी दोस्ती बड़े काम की थी। हुनैन की लड़ाई तक में मुहम्मद साहब की फौज के अन्दर इस तरह के बहुत से आदमी मौजूद थे जिन्होंने इसलाम धर्म नहीं अपनाया था, जो अभी तक अपने पुराने धर्मों पर ही कायम थे, लेकिन जिन्होंने सबके लिए की धर्म आजादी के

असूल को मान लिया था। और जो या तो मदीने की सरकार की प्रजा थे और या उनके कबीले ने मदीने की सरकार के साथ दोस्ती कर ली थी।

‘तई’ कबीले के इलाके में जब अली पांचे तरफ की तरफ उस कबीले का सरदार था। यह अली तई दुनिया में मगर हातिम तई का बेटा था। अली अपने चार बच्चों को लेकर भाग कर शाम चला गया। उसकी बहिन सगनाह और एक और लोग पकड़ लिए गए और मदीने में मुहम्मद साहब के सामने लाए गए। मुहम्मद साहब को जब पता लगा कि सफनाह उस हातिम तई की लड़की है, जो अपने दो दिन, दान और दान के लिए सारी दुनिया में मगर था तो मुहम्मद साहब ने यह कह कर कि—“हातिम के अन्दर सचमुच में नद भगवानों मौजूद थी, जो एक मुसलमान में होनी चाहिये, सचमुच सगनाह ऐसे लोगों से प्रेम रखता है” सफनाह और उनके साथ के सब लोगों को उसी दम बिना किसी शर्त के छोड़ दिया। अली को जब यह मालूम हुआ वह मुहम्मद साहब में मिलने मदीने आया। मुहम्मद साहब उन दिनों अरब के बहुत से लोगों के मालिक थे। इस पर भी उनके भाटे राज मरान जो देकर अली पर गहरा असर पड़ा। अली लिखता है—

“उन्होंने (मुहम्मद साहब ने) मुझे मेरा नाम दिया। तब मैंने नाम बता दिया उन्होंने कहा मेरे नाम मेरे पर नहीं। मुझे है एक कमज़ोर दुबली औरत ने उनसे कुछ करना चाहा। वे नहीं रोके

उसके मामलों पर बात चीत करने लगे। मैंने अपने दिल में सोचा कि यह ठङ्ग तो कुछ बादशाहों का सा ढंग नहीं है। जब हम उनके घर पहुंचे उन्होंने मुझे बैठने के लिये चमड़े का एक गद्दा दिया, जिसके अन्दर खजूर की पत्तियां भरी थीं और वे खुद नंगी ज़मीन पर बैठ गये, मैंने फिर सोचा यह तो कोई शाहों का सा ढंग नहीं है।”

थोड़े ही दिनों में धीरे धीरे ‘तइ’ कबीले के सब लोगों ने इसलाम धर्म अपना लिया। अपना इलाका उन्होंने मदीने के राज में जोड़ लिया और उस राज की हद उत्तर में दूर तक बढ़ गई।

हमे याद रखना चाहिये कि इस तमाम ज़माने में मुहम्मद साहब की ज़िन्दगी के बराबर दो पहलू थे। वह एक नए धर्म के चलाने वाले भी थे और मदीने की नई आज़ाद हुक्मत के सरपंच और सरदार भी थे। सन् ६३१ ईसवी में पता चला कि शाम की सरहद पर रोम के सम्राट की तरफ से फिर एक बड़ी फौज अरब की इस नई कौमी हुक्मत को मिटाने के लिये जमा की जा रही है और सम्राट ने नए सिपाहियों को एक एक बरस की तनखाह पहले से देकर भरती किया है। मुहम्मद साहब चारों तरफ से अरब जवानों को जमाकर अरब की आज़ादी के लिए बढ़े। इतने ही में रोम के सम्राट को अपनी राजधानी के अन्दर नए बलबे का सामना करना पड़ा। रोम की फौज सरहद से हटा ली गई। मुहम्मद साहब भी बिना किसी लड़ाई के शाम की सरहद से लौट आये।

चीज़ है, कोई दूसरे के जान माल या असबाब को हाथ नहीं लगा सकता ।

“ अब्बाह ने हर आदमी के लिये बाप दादा की जायदाद से हिस्सा तय कर दिया है, इसलिये जो जिसका हक है वह उससे छीनने वाली कोई वसीयत ठीक नहीं मानी जायगी ।

“ रबीयाह के बेटे, हारिस के पोते, अब्दुलमुत्तलिब के पड़पोते और मेरे भतीजे अयास के खून से लेकर, जिसे लैस के कबीले वालों ने दूध पिलाकर पाला था और जिसे नासमझी के दिनों में हुज़ैल के कबीले वालों ने मार डाला था, आज तक जितने खून हो चुके हैं उनमें से किसी का भी किसी से बदला लेने की किसी को इजाज़त नहीं है, और आगे के लिये बदला लेने का यह रिवाज ही हमेशा के लिये बन्द किया जाता है ।

“ किसी जुर्म करने वाले पर सिवाय उस जुर्म के जो उसने खुद किया हो और किसी बात का इलज़ाम न लगाया जायगा । किसी बाप से बेटे के जुर्म की या बेटे से बाप के जुर्म की पूछ ताछ न होगी ।

“ सचमुच सूद लेने का रिवाज नासमझी के दिनों का है, आगे के लिये इस रिवाज की बिलकुल मनाही की जाती है । तुम लोग अपने रुपयों का सिर्फ़ असल वापस ले सकोगे । इस बारे में न तुम किसी के साथ बेइन्साफ़ी करो न कोई तुम्हारे साथ बेइन्साफ़ी करे, और मेरे चचा अब्बास का जितना सूद लोगों के ज़िम्मे है, वह सब रद्द कर दिया गया ।

“हर मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है, और अपने भाई की कोई चीज़ जब तक वह उसे किसी ठीक तरीक़े से न पावे किसी मुसलमान के लिए हलाल नहीं हो सकती।

“हर मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है। न कोई किसी पर जुल्म करे न किसी का साथ छोड़े, और न कोई किसी को छोटा समझे। किसी के लिये भी अपने भाई मुसलमान को छोटा समझना बहुत ही बुरी बात है। हर मुसलमान की हर चीज़ उसका माल उसकी जान और उसकी आन हर मुसलमान के लिये इज़ज़त की चीज़ है। ख़बरदार ! आपस में एक दूसरे के खिलाफ़ किसी तरह का व्यापार या लेन देन न करना। तुम सब अल्लाह के बन्दे और एक दूसरे के भाई होकर रहना।

“ऐ मरदों ! तुम्हारे हक़ हैं और ऐ औरतों ! तुम्हारे भी हक़ हैं। लोगो ! अपनी बीवियों से प्रेम करो और उनके साथ मेहरबानी का सलूक करो। सचमुच अल्लाह को बीच में डाल कर तुमने उन्हें अपने साथ लिया है और अल्लाह के हुक्म से ही उनका तन अपने लिये हलाल ठहराया है। ध्यान रखो कि जिस चीज़ को अल्लाह सबसे ज्यादा बुरा समझता है वह तलाक़ है।

“अपने गुलामों के बारे में, ख़बरदार ! उन्हें वैसा ही खाना खिलाना जैसा तुम खुद खाते हो और उन्हें वैसा ही कपड़े पहनना जैसे तुम खुद पहनते हो। कभी उनकी ताक़त से बाहर कोई काम करने का उन्हें हुक्म न देना, और अगर ऐसा हो ही तो तुम्हारा धर्म है कि उस काम के करने में तुम खुद उन्हें मदद दो। तुम में से कोई

अगर बिना क़सूर अपने गुलाम को पीटे या उसके मुंह पर तमाचा लगाए, तो इसका कफ़़ारा (प्रायश्चित्त यानी पाप धोने का ढङ्ग) यह है कि उस गुलाम को उसी दम आज़ाद करदे। ध्यान रखो जो आदमी अपने किसी गुलाम के साथ बुरा सलूक करेगा, उसके लिये स्वर्ग का दरवाज़ा बन्द हो जायगा। अपने गुलामों को दिन में ७० बार माफ़ कर दो क्योंकि वे उसी अल्लाह के बन्दे हैं, जो तुम्हारा भी रब्व है। उनके साथ किसी तरह के जुल्म का बर्ताव नहीं होना चाहिये। अल्लाह तुम्हारी किसी बात से इतना ज़्यादाह खुश नहीं होता जितना गुलामों को आज़ाद करने से।

“इसमें शक नहीं कि तुम अपने रब्व के सामने जाओगे और वह तुमसे तुम्हारे कामों के बारे में पूछेगा। ख़बरदार ! मेरे वाद तुम फिर विश्वास (ईमान) से हटकर अविश्वास (गुमराही) में न फंस जाना यानी विश्वास को छोड़ न बैठना और फिर से एक दूसरे की गरदनें काटने न लग जाना।

“जो लोग यहां मौजूद हैं वे ये सब बातें उन लोगों को जाकर सुना दें जो यहां नहीं हैं, हो सकता है कि जिससे कहा जावे वह जिसने यहां सुना है उससे ज़्यादाह अच्छी तरह याद रखे।”

इसके बाद ऊपर आकाश की तरफ़ देखकर मुहम्मद साहब ने चिल्लाकर कहा—“ऐ रब्व ! मैंने तेरा पैग़ाम (सन्देश) पहुंचा दिया और अपना क़र्ज़ पूरा कर दिया। ऐ रब्व ! मेरी प्रार्थना है तू ही मेरा गवाह रहियो।”

इसके बाद उन्होंने अपने साथियों को लेकर मदीने लौटने की तय्यारी शुरू कर दी ।

इसलामी हुकूमत



उत्तर से दक्खिन तक शाम की सरहद से हिन्द महासागर तक अब मुहम्मद साहब के राज और उनकी ताकत में कोई हिस्सेदार न था। रोम और ईरान दोनों के सम्राट अपने अपने यहां के घरेलू झगड़ों में फंसे हुए थे। उनमें से किसी में भी अरबों की नई बढ़ती हुई ताकत को रोकने की हिम्मत न रह गई थी। ख़ुसरू परवीज़ ने मुहम्मद साहब के जिस खत को कुछ न समझ कर फाड़ कर फेंक दिया था, उसका ले जाने वाला अभी मदीने लौटकर पहुँचा भी न था कि परवीज़ के बेटे ने परवीज़ को मार डाला। यमन के अरब हाकिम को अपना और अपनी प्रजा का, दीन दुनिया दोनों का भला विदेशी ईरान से नाता तोड़ कर मदीने की क़ौमी सरकार के साथ नाता जोड़ने में ही दिखाई दिया। यमन का हाकिम और वहां के क़रीब क़रीब सब लोग इसलाम अपना चुके थे। मुहम्मद साहब ने अब अपने फैले हुए राज का ठीक ठीक वन्दोस्त करने का काम अपने हाथ में लिया। अलग अलग सूबों में इस तरह के नए हाकिम

चुन कर भेजे गए जो वहां के मुसलमानों को धर्म के मामले में राह दिखावें और इन्साफ के साथ देश की हुकूमत करें।

इनमें जवल के बेटे मुआज्ज को यमन भेजा गया। चलते वक्त मुहम्मद साहब ने मुआज्ज से पूछा—

“अपने सूबे की हुकूमत में किस बात को सनद (प्रमाण) मान कर फैसले करोगे?”

मुआज्ज ने जवाब दिया—“कुरान के हुकुम को।”

“लेकिन अगर कुरान में तुम्हें वहां ठीक बैठने वाला हुकुम न मिले?”

“तब मैं पैगम्बर की मिसाल को सामने रखकर चलूंगा।”

“अगर तुम्हें पैगम्बर की मिसाल में भी ठीक बैठने वाली चीज न मिले?”

“तब मैं अपनी अकल से काम लूंगा।”

मुहम्मद साहब ने खुश होकर दूसरों से भी इसी तरह काम करने को कहा।

अली को पूरव की सरहद पर यमामा सूबे के वन्दोवस्त के लिये भेजा और चलते वक्त हिदायत की “जब कभी कोई दो आदमी तुम्हारे पास इन्साफ के लिये आवें, तो बिना दोनों को अच्छी तरह सुने कभी फैसला न करना।”

बहुत मिसालें इस बात की मिलती हैं कि राजा या हाकिम की हैसियत से मुहम्मद साहब मुसलमानों और गैर मुसलमानों

में कभी किसी तरह का फ़रक़ न करते थे। यहां तक कि एक बार कुछ लोग इनकी इस बात से नाख़ुश होकर इसलाम छोड़कर फिर से पुराने धर्म में चले गए। क़ुरान में साफ़ आयत है कि इस तरह के लोगों के चले जाने की कोई परवा नहीं करना चाहिये।*

*.क़ुरान ४, १०५, १५

पैगम्बर की शादियां

अब हमारे लिए मुहम्मद साहब की घरेलू जिन्दगी यानी उनकी शादियों पर एक निगाह डालना जरूरी है।

ऊपर आ चुका है कि मुहम्मद साहब की पहली शादी २५ साल की उम्र में हुई। इन २५ साल तक अरब और खास कर मक्के की विगड़ी हुई हवा में भी मुहम्मद साहब का जीवन वेदाग्न रहा। जब कि उनकी उम्र के लड़के ऐश और आवारगी में अपना वक्त खोते थे, मुहम्मद साहब या तो पहाड़ियों पर अकेले वक़रियां चराया करते थे और या एकान्त में बैठे सोचा करते थे।

मुहम्मद साहब की उस ज़माने की नेकचलनी पर आज तक कोई उंगली नहीं उठा सका।

२५ से ५० साल की उम्र तक उन्होंने ने अपनी सभी साथी ख़दीजा के साथ, जो उनसे १५ साल बड़ी थी, अपना धर्म सचाई से निवाहा। एक आदमी की बहुत सी वीवियों का रिवाज सारे यूरोप, अरब और उस ज़माने के क़रीब क़रीब सब देशों में इतना

आम था कि मुहम्मद साहब के अलावा उन दिनों मक्के के बड़े लोगों में शायद कम ही ऐसे रहे होंगे जिनकी सिर्फ एक बीबी हो।

इन दूसरे २५ साल के बारे में एक मवरिख़ (इतिहासकार) लिखता है—

“२५ साल तक मुहम्मद साहब अपनी बड़ी उम्र की बीबी के साथ वफ़ादारी से रहे। जब वह ६५ बरस की थी तब भी वह उससे वैसा ही एकसू प्रेम करते थे जैसा उस वक्त जबकि उनकी शादी हुई थी। उन तमाम २५ बरस के अन्दर मुहम्मद साहब की नेकचलनी के खिलाफ कहीं किसी तरह का सांस तक नहीं मुनाई दिया। उस वक्त तक की उनकी ज़िन्दगी को ख़ूब ग़ौर के साथ शीशे (खुर्दवीन) से देखने पर भी कहीं कोई धब्बा दिखाई नहीं देता।”*

ख़दीजा के मरने के बाद ज़िन्दगी के आख़री १३ साल में उनकी नौ और शादियां हुईं। इन नौ शादियों के बारे में वहाँ इतिहासकार लिखता है—

“इनमें से कुछ शादियां तो इस ख़याल से की गई थीं कि कुछ औरतों के ख़ाविन्द इस्लाम की लड़ाइयों में मारे गए थे। उनका कोई सहारा न रह गया था। मुहम्मद साहब ने उनके ख़ाविन्दों को जोश दिला कर लड़ाई में भेजा था। उन बेवाओं को दृढ़ था कि मुहम्मद साहब का आसरा चाहें। और मुहम्मद साहब काफ़ी

दयावान थे। वाक़ी शादियों का मतलब सिर्फ़ राजकाजी था, यानी एक दूसरे के ख़िलाफ़ दलों के सरदारों को एक प्रेम डोर में बाधना।”*

यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिये कि उन दिनों अरब में कोई भी इज़्ज़तवाली औरत बिना शादी किये किसी भी दूसरी सूरत में किसी के घर में रहना पसन्द न कर सकती थी। एक दूसरा इतिहासकार लिखता है—

“वाल चलन के ख़याल से मुहम्मद साहब बड़े ऊंचे दरजे के आदमी थे। जीवन की गहराई में वह इतने गहरे गए हुए थे कि यह हो ही नहीं सकता था कि वह अपनी ताक़त को भोग विलास में खो डालते।.....वह समझते थे कि अपने असर और ताक़त को पक्का करने के लिये शादी एक बड़ा ज़वरदस्त ज़रिया है। हज़ारपा (कनखज़ूरे) की हज़ार टांगों की तरह शादी जगह जगह अपनी बाहें फैला देती है और ऐसे ऐसे नाते और रिश्ते जोड़ लेती है, जिन्हें वह वैसे ही चिपट जाती है जैसे घोंघा चट्टान को चिपटता है या वेताल-मछली अपने शिकार को। क़रीब क़रीब हमारे ज़माने तक यही उसूल यूरोप के राज काज का एक बड़ा हिस्सा रहा है।.....

“यही गरज़ थी जिसने मुहम्मद साहब को कई शादियों के लिये तय्यार किया। मुहम्मद साहब के बड़े मिशन का यह एक ज़रूरी हिस्सा था।”†

* Stanley Lane Pool in his Introduction to Lane's Selections from the Quran.

† Islam, Her Moral and Spiritual Nature, by Major A G Leonard, PP 79-80

मुहम्मद साहब की इन नौ शादियों का थोड़े में हाल यह है—

खदीजा के बाद मुहम्मद साहब की दूसरी शादी उनके जीवन भर के साथी अबु वक्र की लड़की आयशा के साथ हुई। आयशा कुमारी थी, उसकी उम्र १८ साल की थी। अबु वक्र ने अपने तन, मन, धन से मुसीबत के वक्त इसलाम की बड़ी सेवा की थी, जिसका कुछ जिक्र ऊपर आ चुका है। खदीजा के मरने के बाद अबु वक्र के यह बात जी में जम गई कि मेरी बेटी पैगम्बर को व्याही जाय, उन्होंने बड़ी ज़िद के साथ पैगम्बर से प्रार्थना की। अरब में किसी की इस तरह की प्रार्थना को ठुकरा देना उसकी बहुत बड़ी हेटी समझी जाती थी। मुहम्मद साहब ने इस प्रार्थना को मान कर अबु वक्र को अपना हमेशा के लिए अहसानमन्द बना लिया और साथ ही दोनों खानदानों को भी हमेशा के लिये एक कर दिया। इसके बाद ज़िन्दगी भर उन्होंने और किसी भी कुमारी के साथ शादी नहीं की।

तीसरी शादी एक गरीब बुढ़िया सौदाह के साथ हुई। सौदाह मुहम्मद साहब के एक शुरू के साथी सकरान की वीवी थी। कुरैश के जुल्मों से बचने के लिये वह अपने पति के साथ इथियोपिया चली गई थी। वहां सकरान मर गया। सौदाह मक्के वापिस आई। मक्के में न कोई उसका मदद करने वाला था न कोई पूछने वाला। रिश्तेदारों तक ने उसको पालने से

इनकार कर दिया। बूढ़ी और लाचार सौदाह की प्रार्थना पर मुहम्मद साहब ने उसके साथ निकाह पढ़ाकर उसके अपने घर में रहने की राह निकाल दी।

चौथी शादी हज़रत उमर की बेवा लड़की हफ़सह के साथ हुई। हफ़सह का खाविन्द वद्र की लड़ाई में मारा गया। उमर ने अपनी बेवा लड़की की फिर से शादी किसी अच्छे मुसलमान से करना चाहा। उसने उसमान से कहा उसमान ने इनकार कर दिया। उमर ने अबु वक्र से प्रार्थना की। अबु वक्र ने भी इनकार कर दिया। वजह यह थी कि हफ़सह उम्र, रंग और रूप से किसी के दिल को न भा सकती थी। अबु वक्र, उमर और उसमान का रुतबा मुसलमानों में बहुत ऊँचा था। उमर तेज़ मिज़ाज थे। उन्हो ने इन इनकारों को अपनी बेइज़्ज़ती समझा। लिखा है सारे मुसलमानों में झगड़ा फैल जाने का डर था। मुहम्मद साहब को पता चला। उमर को ठण्डा करने और झगड़े को ख़त्म करने लिए उन्होंने हफ़सह के साथ ख़ुद ब्याह कर लिया।

पाँचवीं शादी ओहद की लड़ाई के एक साल बाद उमैयह की लड़की हिन्द के साथ हुई। उमैयह बड़ा असर वाला आदमी था। ओहद की लड़ाई में हिन्द का खाविन्द घायल हो गया और आठ महीने बाद मर गया। बेवा हिन्द के कई वच्चे थे। वच्चों को पालने के लिये उसने दूसरा ब्याह करना चाहा। वह तेज़ मिज़ाज और लड़ाका मशहूर थी। उसके साथ

भी अबु वक्र और उमर दोनों ने व्याह करने से इनकार कर दिया। उसके सबसे बड़े बेटे का नाम सलमह था, जिससे वह 'उम्म सलमह' यानी 'सलमह की माँ' कहलाती थी। दुखी होकर उसने खुद मुहम्मद साहब से निकाह की प्रार्थना की। उन्होंने मान लिया और उसके और उसके बच्चों के पालने का जिम्मा ले लिया।

छठी शादी इस तरह हुई—

जैनव उनकी फूफी की लड़की थी। जैनव का बाप जहश कुरैश की बनी दूदान शाख से था। ये बनी दूदान इसलाम के मशहूर दुशमन अबु सुफियान के नजदीकी रिश्तेदार थे, लेकिन मुहम्मद साहब और इसलाम से इतना ज्यादा प्रेम रखते थे कि मक्के से हिजरत के वक्त वह सब के सब मर्द औरत और बच्चे मक्के में अपने घरों को ताला लगाकर मुहम्मद साहब के साथ मदीने चले आए थे। अबु सुफियान को रोकने के लिये इस खानदान की मदद मुहम्मद साहब के लिये बड़ी कीमती थी। मदीने पहुँचने के बाद जैनव के माँ बाप ने उसकी शादी मुहम्मद साहब से कर देना चाहा। मुहम्मद साहब ने इनकार कर दिया। कुरैश में खानदान का घमण्ड बेहद था। मुहम्मद साहब इस घमण्ड को तोड़ना चाहते थे और आदमी आदमी में बराबरी कायम करना चाहते थे। उन्होंने बनी दूदान को सलाह दी कि जैनव की शादी जैद के साथ करदी जावे। जैद वह गुलाम था, जिसे मुहम्मद साहब ही ने आजाद किया था।

घमंडी बनी दूदान को यह बात पसन्द न आई। फिर भी मुहम्मद साहब के कहने सुनने पर उन्हें जैनव की शादी जैद के साथ कर देनी पड़ी।

जैनव के अपने दिल से अपनी नसल का घमण्ड न मिट सका। एक गोरे अरब सरदार की लड़की और एक गुलाम से व्याही जाय, यह उससे सहा न जाता था। दोनों का जीवन सुखी न था। थक कर जैद ने जैनव को तलाक देना चाहा। उसने मुहम्मद साहब से इजाजत मांगी। मुहम्मद साहब ने उससे पूछा—“क्यों क्या तूने जैनव में कोई बुराई देखी है?” जैद ने जवाब दिया—“नहीं, लेकिन मैं अब उसके साथ नहीं रह सकता।” मुहम्मद साहब ने गुस्से से कहा—“जा, अपनी बीवी को अपने साथ रख और अल्लाह से डर।”

लेकिन इस डांट से बहुत दिनों काम न चल सका। आखिर जैद ने जैनव को तलाक दे दिया।

जैनव अपने बाप के घर वापिस आ गई। बाप ने एक दूसरे के बाद कई लोगों से जैनव की दूसरी शादी करना चाहा। लेकिन किसी ने भी एक ऐसी औरत से शादी करना न चाहा जो एक गुलाम की बीवी रह चुकी थी।

बनी दूदान को इसमें अपनी बहुत बड़ी हंटी दिखाई दी। उन्हें बड़ा दुःख हुआ। उनकी इस सारी बेइज्जती की जिम्मेवारी

मुहम्मद साहब पर थी। उन्होंने फिर मुहम्मद साहब से ज़ैनव को अपने निकाह में लेने की प्रार्थना की। मुहम्मद साहब ने ज़ैद और ज़ैनव को बुलाकर फिर से उनमें सुलह करा देने की कोशिश की। लेकिन कोई फल न हुआ। मुहम्मद साहब के लिये कोई चारा न था। उन्होंने ज़ैनव के साथ निकाह कर लिया। ज़ैनव की उम्र इस निकाह के वक्त पैंतीस साल से ऊपर थी।

सातवीं शादी एक बेचा जुवैरियह के साथ हुई। जुवैरियह का बाप हारिस वनी मुस्तलिक्क क़बीले का सरदार था। मदीने से दो सौ मील दूर समन्दर के किनारे हारिस मारा गया और उस क़बीले के कोई दो सौ आदमी मुसलमानों ने पकड़ लिये। वनी मुस्तलिक्क ने सुलह चाही। दो क़बीलों या दलों में टिकाऊ सुलह की एक ज़रूरी शर्त उन दिनों हारे हुए क़बीले की तरफ़ से यह होती थी कि जीते हुए क़बीले का कोई खास आदमी हारे हुए क़बीले की किसी औरत के साथ शादी कर ले। इसी रिवाज पर जोर देकर हारे हुए यूनानी सरदार सैल्युकस ने जीते हुए मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त से सुलह के वक्त इस बात पर ज़िद की थी कि चन्द्रगुप्त सैल्युकस की एक लड़की से शादी करे, और चन्द्रगुप्त को मानना पड़ा था। मुहम्मद साहब ने वनी मुस्तलिक्क की प्रार्थना पर उनके उस सरदार हारिस की बेचा लड़की जुवैरियह के साथ, जो लड़ाई में मर चुका था, शादी करके उस सारे क़बीले को मुसलमानों के साथ प्रेम डोर में बांध लिया।

इस शादी से दो सौ मुस्तलिक क़ैदी बिना किसी शर्त के एक दम छोड़ दिये गए। वरसों बाद जुवैरियह की इस शादी की बात करते हुए मुहम्मद साहब की दूसरी बीबी आयशा ने कहा था —“कोई औरत कभी अपने क़बीले वालों के लिये इससे बड़ी वरकत साबित नहीं हुई जितनी जुवैरियह अपने लोगों के लिये।”

ठीक इसी तरह खैबर की लड़ाई के बाद मुहम्मद साहब ने आठवीं शादी बनी क़ुरैज़ह के सरदार अख़तब की बेवा लड़की सफीयह के साथ की। सफीयह की दो बार पहले शादी हो चुकी थी। उसका दूसरा खाविन्द खैबर की लड़ाई में मारा गया था। सफीयह यहूदी थी और मुहम्मद साहब से शादी करने के बाद भी आख़ीर तक अपने यहूदी धर्म पर ही चलती रही।

नवीं शादी मक्के के पुराने हाकिम और इसलाम के दुश्मन क़ुरैश सरदार, अबु सुफियान की बेवा लड़की उम्म-हवीवह के साथ हुई। उम्म-हवीवह का पहला मर्द उथियोपिया में अपने देश से दूर मरा था। मुहम्मद साहब के साथ शादी होने से पहले उम्म-हवीवह के कई बच्चे थे, जिनमें एक लड़की का नाम हवीवह था। ब्याह की गरज़ बिलकुल साफ़ थी।

दसवीं और आख़री शादी उन दिनों मक्के में हुई जब हुदै बियाह की सुलह के बाद मुहम्मद साहब तीन दिन की यात्रा के लिये मक्के गए हुए थे। यह शादी एक क़ुरैश सरदार हारिस

की वेवा लड़की मैमूनह के साथ थी। मुहम्मद साहब ने अपने एक चचा के जोर देने पर यह शादी की थी और चचा की गरज पूरी हुई, यानी इस शादी से वलीद के बेटे खालिद और आस के बेटे अमरू जैसे दो ज़बरदस्त दुश्मन मुहम्मद साहब की तरफ हो गये।

अपनी इन सब वीवियों के साथ मुहम्मद साहब का वर्त्ताव हमेशा एक सा रहा। हम कह चुके हैं कि उस वक्त तक दुनिया के शायद किसी देश में भी एक आदमी की एक से ज्यादा वीवियां होना किसी तरह बुरा न समझा जाता था, और मुहम्मद साहब की इन शादियों की गरज साफ़ थी।

मुहम्मद साहब के दो लड़के और चार लड़कियां हुईं। दोनों लड़के बचपन ही में मर गए। तीन लड़कियों की शादियां उन्होंने ने अरब के पुराने धर्म के लोगों में कीं और एक लड़की फातमा की शादी हज़रत अली के साथ।*

* Mirza Abul Fazal's Life of Mohammed, PP 232-33.

आखरी दिन



मुहम्मद साहब की उम्र ६३ साल की हो चली थी। उनका ज्यादातर जीवन कड़ा और सादा था। उन्हें अपने ऊपर पूरा क़ाबू था। मौत के बुख़ार से पहले सिर्फ़ एक बार सन् ६ हिजरी में उनकी तबियत के कुछ ख़राब होने का ज़िक्र आता है। हो सकता था उनकी उम्र और ज्यादा बढ़ती होती। लेकिन ख़ैबर की लड़ाई में जो ज़हर उन्हें दिया गया था उससे वह उस वक्त तो बच गए, पर उन्हें काफी नुक़सान पहुँचा। एक बार उस ज़हर के असर को कम करने के लिये उन्होंने सींगी भी लगवाई फिर भी उनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ती चली गयी। मुहम्मद साहब की अपनी राय यही थी कि आख़री बुख़ार उन्हें उसी ज़हर के असर से हुआ। इसके अलावा “मक्के में तकलीफ़ें, बेइज़्ज़ती, मुसीबतें, क़ैद और शहर से निकाल दिया जाना, मदीने में एक ऐसे काम के लिये बेचैनी जिसका पूरा होना कई साल तक शक की बात रही, और दिन दिन बढ़ते हुए राज के सोच फ़िकर इन सब का भी उन पर बहुत बड़ा बोझ था।” इस

सबके अलावा क़ुरान के अलग अलग हिस्से जिस तरह सामने आए उसका भी मुहम्मद साहब की तन्दुरुस्ती पर गहरा असर पड़ा। जब कभी किसी खास रुहानी मुशकिल या कठिनाई के वक्त उन्हें रास्ता न सूझता था, वह खाना पीना छोड़, चादर लपेट पड़ जाते थे, दुआएं मांगते थे और रोते थे। कभी कभी उन्हें कई कई दिन इसी तरह बीत जाते थे। उनका वदन बार बार कांपने लगता था और चादर आंसुओं और पसीने से मिलकर तर हो जाती थी। आखीर में वह उठते थे और जो फ़ैसला या जो शब्द उस वक्त उनके मुंह से निकलते थे, उसे वह अपने 'मालिक का सन्देश', अपने 'अल्लाह की वही' बताते थे। मुहम्मद साहब की इस तरह की वहियां मिलकर ही 'क़ुरान' कहलाती हैं। उनकी दूसरी मामूली कहावतें या हिदायतें 'हदीस' कहलाती हैं और उन्हें ईश्वर के हुक्म नहीं माना जाता। इसमें शक नहीं कि इन बार बार के अनोखे दरदों और बेचैनियों का असर मुहम्मद साहब के तन पर और उनकी नसों और दिमाग पर बहुत ही गहरा पड़ा। एक बार अबु बक्र मुहम्मद साहब की डाढ़ी में कुछ सफ़ेद बाल देखकर रोने लगे। मुहम्मद साहब ने कहा—“हां ! यह सब उन दरदों और तकलीफों का नतीजा है, जो वही की पैदायश के वक्त मुझ होते थे ! सूरें हूँ, सूरें अल-वाक़यह, सूरें अल कारयह* और उनके साथियों ने मेरे बालों को सफ़ेद कर दिया।”

*क़ुरान के हिस्सों के नाम।

मुहम्मद साहब को आखिरी बुखार आया ।

एक दिन आधी रात को जब मदीने के सब लोग पड़े सो रहे थे, वह सिर्फ एक आदमी को साथ लेकर शहर के बाहर क़बरिस्तान में गए और क़बरों के बीच में बैठ कर बहुत देर तक ध्यान में डूबे रहे । आखिर उन्होंने ने भरे दिल से कहना शुरू किया—

“ऐ क़बरों के रहने वालो ! तुमपर सलाम (शान्ति) हो ! अल्लाह तुम्हे और हमें सब को माफ़ कर दे ! शान्त वह सवेरा हो जिस दिन तुम सब फिर से जागो, और सुखमरी उस दिन तुम्हारी हालत हो ! तुम हम लोगों से पहले चले गए और हम तुम्हारे पीछे आ रहे हैं !”

अगले दिन सवेरे अपने दोनों चचेरे भाइयो, अली और फ़ज्रल के सहारे वह मसजिद में गए । नमाज़ के बाद उन्हो ने लोगों से कहा—

“मुसलमानो ! अगर मैंने तुम में से किसी को कोई नुक़सान पहुँचाया है, तो इस वक्त मैं जवाब देने के लिये मौजूद हूँ । अगर तुममें से किसी का मुझे कुछ देना है तो जो कुछ आज दिन मेरे पास है सब तुम्हारा है ।”

एक आदमी ने याद दिलाया कि मैंने आपके कहने से एक ग़रीब आदमी को तीन दिरहम दिये थे । मुहम्मद साहब ने उसी दम उसे तीन दिरहम दे दिये और कहा—“इस दुनिया में

भेंपना अच्छा है, जिससे हमें उस दुनिया में तकलीफ उठाना न पड़े।”

फिर उन्होंने ने बड़े भरे हुए दिल से उन मुसलमानों के लिये अल्लाह से प्रार्थना की जो अपने धर्म के लिये जान दे चुके थे या जिन्होंने धर्म के नाम पर तकलीफें सही थीं। मक्के के मोहाजरीन की तरफ मुंह करके, ‘अन्सार’ की तरफ इशारा करते हुए उन्होंने ने कहा—

“मुसलमानों की तादाद तो बढ़ेगी। लेकिन मदीने के ‘अन्सार’ की तादाद अब नहीं बढ़ सकती। ये लोग ही मेरे कुटुम्बी थे जिन्होंने मुझे रहने को घर दिया। जब दुनिया मुझे तकलीफें दे रही थी उस वक्त इन लोगों ने मुझ पर विश्वास किया और मुझे अपनाया।”

रोग और कमजोरी बढ़ती गई। जुमे को मसजिद में नमाज़ पढ़ाने के लिये उन्होंने ने अबु वक्र को भेजा। उस दिन तक वह बराबर खुद नमाज़ पढ़ाते थे। अबु वक्र को नमाज़ पढ़ाते देख कर लोगों में सनसनी फैल गई। कुछ ने समझा कि पैगम्बर चल दिये। खबर पाते ही मुहम्मद साहब फिर अली और फजल के कंधों पर हाथ रखे मसजिद में आए। उन्हें देखते ही लोगों का रंग बदल गया। मुर्झाए हुए चेहरे खिल गए। अबुवक्र नमाज़ पढ़ाते पढ़ाते रुक गए। मुहम्मद साहब ने हुक्म दिया ‘जारी रखो’। नमाज़ खत्म होने पर मुहम्मद साहब ने लोगो से कहा—

“मैंने सुना है अपने पैग़म्बर की मौत की यों ही बात सुनकर तुम लोग धवरा गए थे । लेकिन क्या मुझसे पहले का कोई पैग़म्बर हमेशा रहा है जो तुम समझते हो कि मैं कभी तुमसे अलग न हूँगा । हर चीज़ का वक्त तय है, जिसमें न जल्दी हो सकती है न उसे टाला जा सकता है । मैं उसी के पास जा रहा हूँ जिसने मुझे भेजा था । और मेरी आख़री प्रार्थना तुम लोगों से यह है कि तुम आपस में इत्तफ़ाक़ से रहना, एक दूसरे से प्रेम करना, एक दूसरे की इज़्ज़त करना और हर नेक काम में एक दूसरे की मदद करना । एक दूसरे को धर्म से डिगाने न देने में, अपने विश्वास को मज़बूत करने में, और नेक काम करने में, हिम्मत दिलाते रहना, यही लोगों की भलाई का रास्ता है । और सब रास्ते बरवादी के हैं । ”

आख़री में उन्होंने क़ुरान की यह आयत लोगों को पढ़कर सुनाई—

“अल्लाह उस दुनिया में उन लोगों को ही सुख देगा, जो इस दुनिया में बड़े बनने की कोशिश नहीं करते, जो किसी के साथ बेइन्साफ़ी नहीं करते, उस दुनिया का आनन्द सिर्फ़ उन लोगों के लिए है जो इस दुनिया में परहेज़गारी से रहते हैं । ”*

लोगों को मुहम्मद साहब का यह आख़री उपदेश था । मसजिद के पास ही आयशा की भोपड़ी थी । अली और फज़ल के कन्धों पर हाथ रखकर मुहम्मद साहब फिर आयशा के घर चले गए । उस दिन उन्हें बुख़ार का चौथा दिन था ।

* क़ुरान २८, २३ ।

सनीचर की रात को बुखार बहुत तेज़ हो गया। उनकी बेचैनी देखकर उनकी एक बीबी उम्म सलमा चिल्लाकर रोने लगी। मुहम्मद साहब ने डांट कर कहा—“खामोश ! जिसे अल्लाह पर भरोसा है वह कभी इस तरह नहीं चिल्ला सकता।” एक सवाल के जवाब में उन्होंने कहा—

“हां ! उस अल्लाह की क़सम जिसके हाथों में मेरी जान है जब कभी इस दुनिया में ईश्वर में विश्वास रखने वाले किसी भी आदमी पर कोई मुसीबत या रोग आता है, तो अल्लाह उस मुसीबत के ज़रिये उसी तरह उसके गुनाहों को उससे अलग कर देता है जिस तरह पतझड़ की मौसम में दरख़्त से पत्ते झड़ते हैं।”

“हमारे दुःख हमारे पापों को धोने के लिये हैं। सचमुच अगर ईश्वर में विश्वास करने वाले किसी आदमी के एक कांटा चुभता है, तो अल्लाह उसके ज़रिये उसका रूतवा बढ़ा देता है और उसका एक पाप धुल जाता है।”

“जिसका विश्वास जितना पक्का होता है उतनी ही उसकी परख की जाती है। जिसका विश्वास अटल है उसी को दुःख भी ज़्यादा दिये जाते हैं। विश्वास कमज़ोर है तो दुःख भी वैसे ही होते हैं। लेकिन किसी सूरत में भी दुःखों में तब तक कोई माफ़ी न होगी, जब तक आदमी का एक एक पाप धुल कर वह ज़मीन पर बेदाग़ होकर न फिरने लगे।”

रात भर मुहम्मद साहब क़ुरान के वे सूरे दोहराते रहे जिनमें ईश्वर की तारीफ़ की गई है।

इतवार को कमज़ोरी बेहद थी। जिस दिन से बीमार पड़े थे मुहम्मद साहब लगातार उपवास कर रहे थे। उस दिन आधी बेहोशी की हालत में किसी ने उनके मुँह में कुछ दवा लाकर डाल दी। इस पर उन्होंने बड़ा दुःख माना और नाराज़ हुए।

एक बार उन्होंने कपड़ा मुँह से हटा कर कहा—“अल्लाह का कोप (ग़ज़व) उन लोगों पर जो अपने पैग़म्बरों की क़ब्रों को पूजने लगते हैं। ऐ अल्लाह ! मेरी क़ब्र की कभी कोई पूजा न करे !”

इतवार ही को उन्होंने आयशा से कहा “अपने पास विल-कुल पैसा न रखो, जो कहीं कुछ बचाकर रख छोड़ा हो तो उसे ग़रीबों में बाँट दो।” आयशा ने कुछ सोचा। उसने कहीं से किसी वक्त् के लिए छै सोने के दीनार अपने पास चुपके से बचाकर रख छोड़े थे। थोड़ी देर बाद मुहम्मद साहब ने फिर कहा कि जो कुछ हो मुझे दे दो। आयशा ने वह छै सोने के दीनार (मोहरें) मुहम्मद साहब के हाथ पर लाकर गिन दिये। मुहम्मद साहब ने उसी दम हुक्म दिया कि उन्हें कुछ ग़रीब कुटुम्बों में बाँट दिया जाय। ऐसा ही किया गया। इस पर मुहम्मद साहब ने कहा—“अब मुझे शान्ति मिली ! सचमुच अच्छा नहीं था कि मैं अपने अल्लाह से मिलने जाऊँ और यह सोना मेरी मिलकीयत रहे।”

मुहम्मद साहब उसके बाद सचमुच बेपैसा थे। इतवार की रात दिया जलाने के लिए आयशा को एक पड़ोसी के यहाँ से तेल माँगना पड़ा, और ठीक मरने के वक्त् मुहम्मद साहब

की अपनी कवच (ज़िरह) क़रीब डेढ़ मन जौ के बदले गिरवी रखी हुई थी।

इतवार की रात बीमारी में कटी। सोमवार को सुबह बुखार कम हुआ, हालत कुछ अच्छी मालूम होने लगी। बाहर मसजिद के सहन में हज़ारों मर्द, औरत और बच्चे पैग़म्बर का हाल पूछने को जमा हुए। नमाज़ का वक्त आया। अबु बक्र नमाज़ पढ़ाने लगे। अभी पहली रकअत ही ख़त्म हुई थी कि आयशा की भोपड़ी का परदा उठा। दो आदमियों के सहारे मुहम्मद साहब बाहर आते दिखाई दिये। उनके चेहरे पर खुशी थी। उन्हें देखते ही लोगों के मुर्माएँ चेहरे खिल गए। मुहम्मद साहब ने मुसकरा कर अपने साथी फ़जल से कहा—“सचमुच इस नमाज़ को दिखाकर अल्लाह ने मेरी आंखों को ठण्डा कर दिया !”

उसी तरह सहारे से मुहम्मद साहब नमाज़ के लिए खड़े लोगों की तरफ़ बढ़े। लोगों ने बीच से हट कर रास्ता बनाया। अबु बक्र नमाज़ पढ़ा रहे थे। उन्होंने उल्टे पांव पीछे हटकर पैग़म्बर के लिये इमाम की जगह छोड़ना चाहा। पैग़म्बर ने हाथ के इशारे से उन्हें फिर आगे बढ़कर नमाज़ पढ़ाते रहने की हिदायत दी और खुद उनका हाथ पकड़ कर सहारे से उनके पास ज़मीन पर बैठ गए। अबु बक्र ने नमाज़ पूरी कराई।

नमाज़ के बाद मुहम्मद साहब फिर आयशा की भोपड़ी में चले गए। वह बेहद थक गए थे। एक हरी दतून मांगकर उन्होंने

दांत साफ किये । कुल्ला करके लेट गए । आयशा का हाथ मुहम्मद साहब के दाहिने हाथ पर था । उन्हो ने आयशा से अपना हाथ हटा लेने का इशारा किया । थोड़ी देर में धीरे धीरे ये शब्द उनके मुंह से निकले—“ऐ अल्लाह ! मुझे माफ कर और मुझे उस दुनिया के साथियों से मिला” फिर “हमेशा के लिये स्वर्ग !” “भाफी !” “हां ! उस दुनिया के मुवारिक साथी !” इन शब्दों के साथ साथ मसजिद से लौटने के चन्द घंटे के अन्दर ही सोमवार १२ रबीउलअव्वल, सन् ११ हिजरी, ८ जून सन् ६३२ ईसवी को दोपहर के जरा बाद मुहम्मद साहब की आत्मा इस दुनिया से चल बसी ।

बाहर मसजिद में लोगो की भीड़ थी । बहुतसों को विश्वास न होता था कि इस्लाम के पैगम्बर उठ गए । अबु बक्र ने अन्दर जाकर चेहरे से चादर उठाई और मुंह चूमकर कहा, “तू जिन्दगी में प्यारा था और मौत में भी प्यारा है !” फिर यह कह कर—“तू मेरे बाप और मां दोनों से ज्यादा प्यारा था ! तूने मौत के कड़वे दुखों को चख लिया । अल्लाह की निगाह में तू इतना कीमती है कि वह तुझे यह प्याला दोबारा पीने को नहीं दे सकता ।” अबु बक्र ने मुहम्मद साहब के चेहरे को दोबारा चूमा और फिर चेहरे को चादर से ढक कर अबु बक्र बाहर चले आये ।

बाहर आकर अबु बक्र ने लोगो को कुरान की दो आयतों की याद दिलाई । एक वह जिसमें अल्लाह ने मुहम्मद से कहा है,

—“सचमुच, तू भी मरेगा और ये सब लोग भी मरेंगे।” और दूसरी यह—“मुहम्मद एक रसूल है, इससे ज्यादा कुछ नहीं, सचमुच उससे पहले सब रसूल मरते आए हैं। फिर अगर वह मरजावे या मारा जावे तो क्या तुम अपने धर्म से फिर जाओगे ?” इसके बाद अबु वक्र ने साफ साफ शब्दों में कहा —“जो कोई मुहम्मद की पूजा करता है उसे जानना चाहिये कि मुहम्मद सचमुच मर गए। लेकिन जो कोई अल्लाह की पूजा करता है, उसे जानना चाहिये कि अल्लाह ज़िन्दा है और कभी नहीं मरता !”

अली, ओसाम, फ़ज़ल कुछ और लोगों ने मिलकर मुहम्मद साहब को नहलाया। जिन कपड़ों में वह मरे थे, उनके ऊपर दो सफ़ेद चादरें और लपेट दी गईं। सब से ऊपर यमन की एक धारीदार चादर डाल दी गईं। २४ घंटे तक लाश इसी तरह पड़ी रही। अगले दिन मंगल को नगर और बाहर के सब लोगों ने यहां तक कि औरतों और बच्चों ने आकर पैग़म्बर के चेहरे को आख़री बार देखा। अबु वक्र और उमर ने जनाज़े की नमाज़ पढ़ाई। उसी दिन शाम को आयशा की कोठरी में, ठीक उसी जगह जहां मुहम्मद साहब की आंख बन्द हुई थी उनके जिस्म को मिट्टी के सुपुर्द कर दिया गया।

हज़रत अबु वक्र का वयान है कि मुहम्मद साहब कहा करते थे कि—“नवियों का कोई वारिस (यानी उनके बाद

उनके माल का मालिक) नहीं होता । वे जो कुछ छोड़ जावें, गरीबों का है ।” (बुख़ारी, मुसलिम, अबु दाऊद, नसाई ।)

इसी असूल पर, मरने से पहले मुहम्मद साहब के अपने पास जो कुछ बच रहा था—एक सफ़ेद ख़च्चर, कुछ हथियार और थोड़ी सी ज़मीन—वह उन्होंने मुहताजों और अनाथों के लिए दान दे दी । (बुख़ारी, नसाई ।)

आयशा का वयान है कि मरते वक्त पैग़म्बर ने न कोई दीनार छोड़ा, न दिरहम, न अंड, न वक़्ती, न दास, न दासी और न कुछ और । (बुख़ारी, मुसलिम, अबु दाऊद, नसाई ।)

मुहम्मद साहब के मरने के कुछ दिनों बाद अनस नामी एक आदमी के पास लकड़ी का एक प्याला था जिससे मुहम्मद साहब पानी पिया करते थे । वह बीच से कुछ फटा हुआ था । मुहम्मद साहब ने उसे लोहे की पत्ती से जोड़ रखा था । उनके मरने के बाद किसी तरह वह अनस को मिल गया । अनस ने लोहे की पत्ती को निकाल कर उसे चांदी के तार से जोड़ लिया था । (बुख़ारी) ।

अब हमारे लिये मुहम्मद साहब के रहन सहन, और इस्लाम के खास खास असूलों को वयान करना बाकी है ।

पैगम्बर का रहन सहन



मुहम्मद साहब के मक्के के जीवन और उनकी वहां की तकलीफों का जिक्र ऊपर आ चुका है ।

मदीने में मुहम्मद साहब की जिन्दगी घरेलू जीवन और फक्कीरी दोनों का एक अजीब मेल थी । आखीर तक उनका रहन सहन हद दर्जे का सादा और मेहनती था । सरकारी टैक्स से, या जकात या सदक्के (दान) से एक कौड़ी भी अपने या अपने घरवालों के लिये लेना वह हराम समझते थे । किसी से मांगना भी वह ठीक न समझते थे । खास खास दोस्तों से हदीया या भेंट ले लेते थे, लेकिन ज़रूरत से ज्यादा कभी नहीं । उनकी अपनी मिलकीयत में कुछ खजूर के पेड़ और कुछ ऊंट और वकरियां थीं, जिनसे खजूर और दूध मिल जाता था । रात को जो कुछ सामान घर में बचता था वह ग़रीबों में बंटवा देने थे, अगले दिन के लिये बचा कर रखने को वह अल्लाह में विश्वास की कमी बताते थे । नतीजा यह था कि जब कभी खजूर की फसल न होती या जानवर दूध न देते होते

तो कभी कभी तीन तीन दिन उन्हें और उनके घरवालों को लगातार फाँका करते हो जाते थे । सिर्फ खजूर और पानी पर उन्हें महीनो बीत जाते थे । उनकी मौत के बाद आयशा ने एक बार कहा था—“कभी कभी महीनो बीत जाते थे और मुहम्मद के घर में चूल्हा न जलता था ।” किसी ने पूछा—“तो फिर आप लोग ज़िन्दा कैसे रहती थी ?” जवाब दिया—“ उन दो काली चीजों के सहारे (खजूर और पानी) और जो कुछ मदीने वाले हमें भेज देते थे, अल्लाह उनका भला करे ! जिनके पास दूध देने वाले जानवर थे वे कभी कभी हमें दूध भेज देते थे ।” आयशा का कहना है कि—“पैगम्बर ने कभी एक दिन में दो तरह की खाने की चीजों का स्वाद नहीं लिया.....हमारे घर में कोई चलनी नहीं थी । हम नाज कूट कर उसका छिलका फूक मारकर उड़ा देते थे ।” रात को कई बार दिया जलाने के लिये तेल घर में न होता था । हदीसों में लिखा है कि भूख के सबब मुहम्मद साहब के पेट पर कभी कभी कपड़ों के नीचे पत्थर बंधा होता था । लेकिन घर में इस बात की कड़ी मनाही थी कि किसी बाहरवाले को घर की हालत की खबर न होने पावे । एक बार भूख की तकलीफ से उनकी किसी बीबी ने बैचैनी जाहिर की । पैगम्बर ने शान्ति से जवाब दिया “जो इन्हीं दुखों को न सह सके उसे हक है कि मुझसे तलाक लेकर जहाँ चाहे जाकर रहे ।” लेकिन आखीर तक न उन्हो ने किसी बीबी

को तलाक़ दिया और न किसी ने उन्हें छोड़कर जाना पसन्द किया ।

अपने घर में मुहम्मद साहब अक्सर अपने हाथ से भाड़ू देते थे, अपनी वकरियों को आप दुहते थे, अपने हाथ से अपने कपड़ों में पेवन्द लगाते थे, अपने हाथ से अपनी चप्पल गांठते थे, खुद अपने ऊंट का खरहरा करते थे । खजूर की चटाई या नंगी ज़मीन पर सोते थे । आख़री बीमारी के दिनों में एक बार पीठ पर बोरिये का निशान देखकर किसी ने इजाज़त चाही कि एक ग़दा बिछा दिया जावे । मुहम्मद साहब ने यह कहकर इनकार कर दिया कि “मैं आराम करने के लिये नहीं पैदा हुआ ।”

हम ऊपर लिख चुके हैं कि मरते वक्त उनका कवच (ज़िरह) डेढ़ मन जौ के बदले गिरवी रखा हुआ था । इस पर हालत यह थी कि अगर कोई मेहमान उनके यहां आ जाता तो खुद भूखे रहकर और कभी कभी अपने घरवालों को भूखा रखकर मेहमान को प्रेम के साथ खाना खिलाते । जबकि ईरान, रोम और इथियोपिया के राजदूत (एलची) मुहम्मद साहब के दरबार में आते जाते थे, उन दिनों भी अरबों का यह अनोखा वादशाह कभी किसी तरह के सिंहासन, तख़्त या किसी ऊंची चौकी पर नहीं बैठा । वह आम लोगों में मिलकर इस तरह ज़मीन पर आकर बैठ जाते थे, जिससे किसी को कोई फ़रक़ दिखाई न दे, और अगर कोई उनके आने पर इज़ज़त के लिये खड़ा हो जाता तो वह दुखी और नाराज़ होते ।

मुहम्मद साहब कभी रेशमी कपड़ा नहीं पहनते थे। वे कहा करते थे कि “धर्म वाले आदमी को कभी रेशमी कपड़े नहीं पहनने चाहिये।” * रंगीन कपड़ा वे कभी कभी पहन लेते थे। लेकिन सफेद रंग का मोटा सूती कपड़ा ज्यादा पसन्द करते थे, और अक्सर ऐसा ही पहनते थे। वह बेसिला कपड़ा ज्यादा पहनते थे। आमतौर पर एक सफेद चादर नीचे से ऊपर तक लपेटे रहते, जिसके दोनों सिरे गर्दन के पीछे कन्धे के ऊपर बांध लेते। वह नंगे सर, नंगे पांव बहुत रहते थे। कभी कभी वह आधी आस्तीन का ढीला कुरता, लुंगी और सर पर साफा भी बांध लेते थे। पाजामा उन्होंने कभी नहीं पहना। उन्होंने कभी एक लोटे से ज्यादा वस्तुन अपने पास नहीं रखे, जो मिट्टी का या लकड़ी का होता था।

उनके रहने का मकान कच्ची ईंटों का बना था। अलग अलग वीवियों के लिये अलग अलग कोपड़ियां थीं, जिनके बीच बीच में खजूर की टहनियों की गारा लिपटी दीवारें थीं। छाजन भी इन्हीं टहनियों का होता था। उनके घर में कोई किवाड़ न थे। इनकी जगह चमड़े या काले नमदे के परदे लटके रहते थे।

मुहम्मद साहब उंद या वकरी का मांस खा लेते थे। लेकिन आमतौर पर उनका खाना खजूर और पानी या जौ की रोटी और पानी होता था। दूध और शहद उन्हें पसन्द थे, लेकिन

इन्हें खाने कम थे। एक बार किसी ने वादाम का आटा लाकर उन्हें भेंट किया। उन्होंने यह कहकर लेने से इन्कार कर दिया — “यह फ़ज़ूलख़र्च लोगों का खाना है।” प्याज़ और लहसन से उन्हें इतनी सख़्त नफ़रत थी कि कभी कोई चीज़ न खाते, जिसमें प्याज़ या लहसन पड़ा हो, और न किसी ऐसे आदमी के पास बैठना पसन्द करते, जिसके मुंह से प्याज़ या लहसन की बू आ रही हो। हुक्म था कि मसजिद में कोई आदमी प्याज़ या लहसन खाकर न आवे।

छोटे बड़े सबके साथ उनका वर्ताव सदा एकसा होता था। बच्चों से उन्हें ख़ास मुहब्बत थी। रास्ता चलते चलते रुक कर बच्चों के साथ गली में खेलने लगना उनके लिए रोज़मर्रा की बात थी। बीमारों को देखने जाना, मुसलमान या ग़ैरमुसलिम किसी का भी जनाज़ा (अरथी) जा रहा हो उठकर कुछ दूर उसके साथ जाना, और कोई छोटे से छोटा या गुलाम भी अगर दावत दे तो उसकी दावत खुशी से मानना उनके स्वभाव की ख़ास चीज़ें थीं।

“मुहम्मद साहब की एक ख़ास आदत थी छोटे से छोटे आदमियों के साथ बड़ी मुहब्बत और इज़ज़त का वर्ताव करना, झुक कर चलना, सब पर दया करना, किसी के कहे या किये का बुरा न मानना, अपने ऊपर काबू रखना, और दिल बड़ा और हाथ खुला रखना ये मुहम्मद साहब के स्वभाव की वह बातें थीं जो हर बच्चे

चमकती रहती थीं और जिनकी वजह से आस पास के सब लोग उनसे प्रेम करने लगते थे ।”*

गुलामी का रिवाज उन दिनों अरब और दुनिया के ज्यादा देशों में मौजूद था । मुहम्मद साहब की वास्तव लिखा है कि उन्हें ज़िन्दगी में जितने गुलाम मिले, उन्होंने ने उन सब को आज़ाद कर दिया । क़ुरान में बार बार गुलामों के आज़ाद करने या कराने दोनों को एक बहुत बड़ा सवाब (पुण्य) बताया गया है, और मुहम्मद साहब इसमें लोगों को खूब मदद देते रहते थे और हिम्मत दिलाते रहते थे ।

वह अकसर सोच में डूबे और उदास दिखाई देते । कभी कभी एक प्रेमभरी मुस्कराहट उनके चेहरे पर नज़र आती । जब वह पैदल चलते तो अकसर इतना तेज़ चलते कि दूसरों को भागकर उनका साथ देना पड़ता ।

अपने उपदेशों में वह—“मैं तुम्हारी ही तरह एक आदमी हूँ ।” इस पर बार बार जोर दिया करते थे, और बार बार ही अपने गुनाहों की माफी के लिये रो रो कर ईश्वर से प्रार्थनाएं करते थे । क़ुरान में इन दोनों बातों का कई बार ज़िक्र आता है ।

क़ुरान में एक जगह आया है—“कहो कि अगर मैं (मुहम्मद) ग़लती करूं तो मेरे लिए और अगर मैं ठीक रास्ते

* Life of Mohammed, by Sir W. Muir

पर चलूं तो उस हिदायत की वजह से जो ईश्वर ने मुझे दी है।
सचमुच वह सब कुछ सुननेवाला और नज़दीक है।” (३४-५०)

इसलाम धर्म का निचोड़

मुहम्मद साहब के धर्म के असूलों में दो सब से बड़ी चीजें ये हैं—

(१) 'तौहीद' यानी ईश्वर के एक होने में विश्वास करना और

(२) नेक कामों पर जोर देना ।

'तौहीद' यानी ईश्वर का एक होना इसलाम का सब से बड़ा असूल और कुरान के सारे उपदेशों का सार है । कुरान का ११२ वां सूरा (अध्याय) जो मक्के के शुरु के सूरों में गिना जाता है यह है—

“उस अल्लाह के नाम से जो रहमान (माँ की सी मुहब्बत से भरा हुआ) और रहीम (दयावान) है, कह दो कि अल्लाह एक है, और सब कुछ उसी अल्लाह के सहारे है, न वह खुद कभी जन्म लेता है और न किसी को जनता है, कोई उस जैसा नहीं है, वह आप ही अपनी मिसाल है ।”

कुरान के इस सूरे का नाम ही “अल इख़लास” (एक होना) है ।

उपनिषदों के “एकमेवाद्वितीयम्” या “एको देवः सर्व भूतेषुगूढः” की तरह कुरान में बार बार आता है—“लाइल्लाह इल्लाहू” (सिवाय उस एक के दूसरा अल्लाह नहीं है) । उसी को कुरान के सबसेशुरू में “रव्विल् आलमीन” (सब दुनियाओं या क़ौमों का रव्व यानी पालने वाला) और सब से आखीर में “रव्विन्नास” (सब आदमियों का रव्व), “मलेकिन्नास” (सब का वादशाह) “इलाहिन्नास” (सब का पूज्य) कहा गया है ।

ईश्वर के एक होने से ही कुरान ने सब आदमियों के एक होने का नतीजा निकाला है ।

“कानन्ना सो उम्मतेव्वहिदतन्” (सब आदमी एक उम्मत यानी एक क़ौम हैं) (२-२१३)

“वमा कानन्ना सो इल्ला उम्मतेव्वहिदतन्” (और सब आदमी सिवाय एक क़ौम के और कुछ नहीं) (१०-१९)

“सचमुच तुम सब आदमी एक ही क़ौम हो, मैं तुम सब का रव्व हूँ, तुम सब मेरी ही इवादत (पूजा) करो । लोगों ने आपस में अपने ठुकड़े ठुकड़े कर लिए हैं ! लेकिन सब को अल्लाह ही के पास लौट कर जाना है । इस लिए जो कोई नेक काम करेगा और ईश्वर में विश्वास करेगा, उसे अपने किये का अच्छा फल मिलेगा ” (२१-९२, ९३, ९४)

आखरी आयतों में कुरान के दोनों सब से बड़े असूल आगए।
नेक कामों पर कुरान में इधर से उधर तक बार बार जोर
दिया गया है।

“सब आदमी एक ही कौम” के असूल से ही इसलाम ने
छोटे बड़े, अमीर गरीब, ऊंच नीच, जाति पाँति, खानदान,
नसल, रंग, गुलाम और मालिक वगैरह के सब फरकों को
मिटकर सब आदमियों के बराबर होने पर बेहद जोर दिया,
और बताया कि “तुममें बड़ा वह है जो सब से ज्यादा नेक
और परहेजगार हो।” कुरान और मुहम्मद साहब के दूसरे
उपदेशों में यह बात बार बार दोहराई गई है।

इन दो मूल सिद्धान्तों (बुनियादी असूलों) के बाद जो
दुनिया के सब मजहबों में एक से पाए जाते हैं, मुहम्मद साहब
ने अगर किसी बात पर सबसे ज्यादा जोर दिया है तो वह
यह है कि दुनिया के सब धर्म एक हैं और सब सच्चे
हैं। कुरान में बार बार ही इस बात पर जोर दिया गया है
कि न मुहम्मद दुनिया में पहला या अनोखा रसूल है और
न इसलाम दुनिया में कोई नया मजहब है। कुरान कहता
है कि दुनिया के शुरू से लेकर हर कौम और हर जमाने
में बराबर रसूल होते रहे हैं, और उन सब ने एक ही सच्चे
सनातन (हमेशा से चले आने वाले) धर्म का उपदेश
दिया है।

“दुनिया की कोई क्रौम ऐसी नहीं है जिसमें बुरे कामों के नतीजों से डर दिखाने वाला ईश्वर का कोई न कोई पैगम्बर न पैदा हुआ हो ।” (.कुरान ३५-२५)

“हर क्रौम में रसूल हुए हैं ।” (१०-४८)

“ऐ मुहम्मद ! सचमुच तुम इसके सिवाय और कुछ नहीं, तुम सिर्फ़ बुरे कामों के नतीजों से लोगों को डर दिखाने वाले हो, और दुनिया की हर क्रौम में इसी तरह के हिदायत करने वाले हुए हैं ।” (१३-७)

“हर ज़माने में कोई न कोई ईश्वर की दी हुई किताब हिदायत के लिए रही है ।” (१३-३८)

“सचमुच हमने दुनिया की हर क्रौम में रसूल भेजा जिसका उपदेश यही था कि ईश्वर की पूजा करो और बुराई से बचो ।” (१६-३६)

कुरान बताता है कि हर मुसलमान क्या, हर आदमी का धर्म है कि वह तमाम मुल्कों, क्रौमों और ज़मानों के पैगम्बरों की एक सी इज़्ज़त करे, उनमें किसी तरह का भी फ़रक़ करना पाप है, और कुरान उन सब के उपदेशों और धर्म की किताबों की सिर्फ़ तसदीक़ करता है यानी उन्हें सच्चा ठहराता है ।

“परमेश्वर ने यह किताब (.कुरान) जिसमें सच्चाई की सीख है तुम पर भेजी है । यह उन सब धर्म की किताबों की तसदीक़ करती है यानी उन्हें सच ठहराती है जो इससे पहले आ चुकी हैं ।” (३-२)

“कह दो हम परमात्मा पर विश्वास करते हैं और जो कुछ परमात्मा से हमें सीख मिली है उस पर विश्वास करते हैं और जो कुछ इबराहीम.....मूसा, ईसा और दुनिया के और तमाम पैगम्बरों को परमात्मा से सीख मिलती रही है उस सब पर विश्वास करते हैं। हम इनमें एक से दूसरे में किसी तरह का भी फ़रक़ नहीं करते। हम ईश्वर के हुक्म को मानते हैं। (उसकी सच्चाई जहां कहीं और जिस किसी की भी ज़वानी आई हो उस पर हमारा विश्वास है)
(३-७८)

“हम अल्लाह के रसूलों में किसी तरह का फ़रक़ नहीं करते।”
(२-२८५)

“जो लोग अल्लाह और उसके पैगम्बरों में फ़रक़ करना चाहते हैं और कहते हैं कि इनमें से हम किसी को मानते हैं और किसी को नहीं मानते...उनके कुफ़्र (काफ़िर होना यानी ईश्वर का अहसान न मानना) में सचमुच कोई शक़ नहीं। (४-१४९)

“वे लोग जो उस सच्चाई पर विश्वास करते हैं जो इसलाम के पैगम्बर पर आई है और उन सब सच्चाइयों पर भी विश्वास करते हैं जो इसलाम से पहले दुनिया में आ चुकी हैं, और जो उस दुनिया (परलोक यानी कर्म फल) पर विश्वास रखते हैं, वे अपने परमात्मा के बताए हुए ठीक रास्ते पर हैं और वे ही भलाई के रास्ते पर हैं।”
(२-४,५)

सब मज़हबों को सच्चा और सब के चलाने वालों को ईश्वर के भेजे हुए मानते हुए मुहम्मद साहब का कहना है कि हर

मज़हब के दो पहलू होते हैं, एक उसकी पूजा का तरीका और दूसरा बुनियादी असूल। पहला देश काल के लिए ठीक अलग अलग मज़हबों में अलग अलग होता है और दूसरा सब धर्मों में एक है। पहले को क़ुरान में “शरअ” और “नुसुक” या “मिनहाज” (विधि विधान) का नाम दिया गया है और दूसरे को ‘अल-दीन’ (धर्म) या ‘अल-इस्लाम’ का। इस ‘अदीन’ या ‘अल इस्लाम’ की तरफ लोगों का फिर से ध्यान दिलाना ही क़ुरान अपना काम बताता है। और यह अदीन या अल-इस्लाम एक ईश्वर को मानना और नेक काम करना है। क़ुरान अपने से पहले के सब मज़हबों को “इस्लाम” कह कर पुकारता है।

“ऐ पैग़म्बर ! हमने हर ग़िरोह के लिये पूजा का एक खास तरीका (नुसुक) बना दिया है जिस पर वह अमल करता है। इस लिये लोगों को चाहिये कि इस बात में भगड़ा न करें।” (२२-६६)

“हमने तुममें से हर मज़हब के मानने वालों के लिये एक खास विधि विधान (शरअ और मिनहाज) बना दिया है। अगर परमात्मा चाहता तो तुम सबको एक ही सम्प्रदाय (एक रिवाज मानने वाले) बना देता। लेकिन यह फ़रक़ इसलिये है कि (वक्तू और हालत के लिये ठीक) तुम्हें जो हुकुम दिये गए हैं उन्हीं में तुम्हें परखे, इसलिये इन फ़रक़ों के पीछे न पड़ कर नेक कामों के करने में एक दूसरे से बढ़ने की कोशिश करो, (क्योंकि असली काम यही है)।” (५-४८)

“तुम्हारा रब्ब यह नहीं कर सकता कि जिन लोगों के विश्वास गुलत हैं लेकिन जो नेक काम करते हैं उन्हें बरवाद करदे, वह चाहता तो सबके विचार एक ही से कर देता। लेकिन इन बातों में लोगों में मतभेद रहेगा। [११-११७, ११८]

“और (देखो) नेकी की राह यह नहीं है कि तुमने (पूजा के वक्त) अपना मुंह पूरब की तरफ़ कर लिया या पच्छिम की तरफ़ (या इसी तरह की कोई दूसरी बात ऊपरी रस्म रिवाज की करली)। नेकी की राह तो उसकी राह है, जो परमात्मा पर, आज़रत अपने ईश्वर के सामने जाने) के दिन पर, क्रिश्तों पर, ईश्वर की दी हुई सब किताबों और सब पैगम्बरों पर विश्वास करता है, अपना प्यारा धन रिश्तेदारों, अनाथों (यतीमों), गरीबों, मुसाफ़िरो और मांगनेवालों की राह में, और गुलामों को आज़ाद कराने में खर्च करता है, नमाज़ पढ़ता है, अपनी कमाई में से दान (ज़कात) देता है, जब किसी को वचन देता है तो उसे पूरा करता है, दुखों, मुसीबतों और घबराहट के वक्त धीरज बनाए रखता है, याद रखो, ऐसे ही लोग सच्चे दीनदार हैं और वे ही धर्मात्मा (मुत्तकी) हैं।” (२-१७७)

“सचमुच निजात (मुक्ति) का रास्ता खुला हुआ है, वह किसी ग़ास ग़िरोह के लिये नहीं है। जिस किसी ने परमात्मा के आगे सर झुकाया और जो सदाचारी (नेक काम करने वाला) हुआ वह चाहे यहूदी हो, या ईसाई या कोई और, वह अपने रब्ब से फल पावेगा। उसके लिये न किसी तरह का डर है न कोई ग़म।” (२- ११२)

“जो लोग (मुहम्मद पर) ईमान लाए हैं चाहे वे हों, या वे लोग हों जो यहूदी या ईसाई या सावी (पुराने ज़माने का एक मज़हब) हैं, कोई भी क्यों न हो, और किसी गिरोह का क्यों न हो, अल्लाह का क़ानून मुक्ति के लिये यह है कि, जो कोई भी अल्लाह पर और आख़िर में एक दिन सबको अपने कामों का फल मिलने पर, विश्वास करता है और नेक काम करता है, वह अपने विश्वास और अपने अच्छे कामों का फल अपने ईश्वर से ज़रूर पाएगा। उसके लिये न किसी तरह का डर है और न कोई ग़म। [२-५९]

क़ुरान का दावा है कि सब धर्मों के चलाने वालों ने इसी बुनियादी असूल का उपदेश दिया है—‘एक ईश्वर की पूजा और नेक काम।’ इसी को क़ुरान ‘इस्लाम’ कहता है और सब पुराने धर्मों के उन मानने वालों को जो इस मूल सिद्धान्त [बुनियादी असूल] पर अमल करते हैं क़ुरान ‘मुसलिम’ कहकर पुकारता है। और दूसरी बातों को, जैसे पूजा का तरीक़ा, क़ुरान काम चलाने के तरीक़े बताता है और इसी एक मूल सिद्धान्त पर दुनिया के सब आदमियों को एक भाईचारे में बंध जाने का उपदेश देता है।

क़ुरान में उन्हीं कामों को अच्छा बताया गया है जिन्हें सब अच्छा मानते हैं और उन्हें बुरा बताया गया है जिन्हें सब बुरा समझते हैं, और अच्छे कामों के लिये ‘मारुफ़’ और बुरे कामों के लिये ‘मुनकर’ शब्द जो क़ुरान में आये हैं उनके यही माइने हैं।

“कुरान ने न सिर्फ़ उन सब धर्म चलाने वालों को ठीक माना, जिनके नामलेवा उसके सामने थे बल्कि साफ़ शब्दों में कह दिया कि मुझसे पहले जितने भी रसूल और धर्म चलानेवाले आ चुके हैं मैं सबको ठीक मानता हूँ और उनमें से किसी एक के न मानने को मैं ईश्वर की सचाई से इनकार करना समझता हूँ ! उसने किसी धर्मवाले से यह नहीं चाहा कि वह अपने धर्म को छोड़ दे, बल्कि जब कभी चाहा तो यही चाहा कि सब अपने अपने धर्मों की असली तालीम पर अमल करें, क्योंकि सब धर्मों की असली तालीम एक ही है । न तो उसने कोई नया सिद्धान्त सामने रखा और न कोई ग्वास ररम नई निकाली । उसने सदा उन्हीं बातों पर जोर दिया जो दुनिया के सब धर्मों की सबसे ज़्यादा जानी बूझी हुई बातें रही हैं—यानी एक जग-दीश्वर की पूजा और नेक चलनी की ज़िन्दगी । उसने जब कभी लोगों को अपनी तरफ़ बुलाया है तो यही कहा है कि अपने धर्मों की असली तालीम को फिर से ताज़ा करलो, तुम्हारा ऐसा करना ही मुझे मान लेना है ।”*

इस तरह मुहम्मद साहब के उपदेशों का सार या कुरान के खास असूल यह हैं—

- १—सिर्फ़ एक ईश्वर को मानना और उसी की पूजा करना,
- २—नेक काम करना और बुरे कामों से बचना, और
- ३—सब धर्मों को जड़ में एक मानना और सब धर्मों के चलाने वालों और महापुरुषों का एक सा आदर [इज्जत] करना ।

*तरजुमानुल कुरान, लेखक-मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ।

उपदेश और प्रार्थनाएं (दुआएं)

अब हम मुहम्मद साहब के कुछ फुटकर उपदेश नमूने के तौर पर नीचे देते हैं—

अमरु लिखता है—मैंने पैगम्बर से पूछा “इसलाम क्या है ?” उन्होंने ने जवाब दिया “जवान को पाक रखना और मेहमान की खातिर करना ।” मैंने पूछा “ईमान क्या है ?” उन्होंने ने कहा—“सब्र करना और दूसरों की भलाई करना ।”

—अहमद

अबु उमामह लिखता है किसी ने पूछा “ऐ पैगम्बर ! ईमान क्या है ?” उन्होंने जवाब दिया—“जब तुझे नेक काम करने से खुशी हो और बुरा काम करने से दुख हो तब तू ईमानवाला है ।” उसने पूछा “और गुनाह क्या है ?” जवाब मिला—“जब कभी किसी काम के करने से तेरी आत्मा को चोट पहुँचे, उस मतकर ।”

—अहमद

मुहम्मद साहब ने कहा—“ईमान आदमी को हर तरह के जुल्म से रोकने के लिये है, कोई मोमिन (ईमान वाला) किसी पर जुल्म नहीं कर सकता ।” —अबु हुदैराह, अबु दाऊद

एक आदमी ने पूछा—“ऐ पैग़म्बर ! इस्लाम की सबसे बड़ी पहचान क्या है ?” जवाब मिला—“भूखों को भोजन देना और जिन्हे जानते हैं और जिन्हे नहीं जानते उन सबको सलाम करना ।” (अरबी में ‘सलाम’ के माइने दूसरे की ‘सलामती’ यानी उसका भला चाहना है) —मुसलिम

मुहम्मद साहब ने कहा—“वह आदमी मोमिन (ईमान-वाला) नहीं है, जो खुद पेट भरकर खा लेता है जबकि उसका पड़ोसी पास ही भूखा पड़ा है ।” —बैहक्की

“मोमिन वह है जिसके हाथों में सब आदमी अपनी जान और माल को सौंप कर बेखटके रहें ।” —बुखारी, मुसलिम

“अगर मोमिन होना चाहता है तो अपने पड़ोसी का भला कर, और अगर मुसलिम होना चाहता है तो जो कुछ अपने लिये अच्छा समझता है वही सब के लिये अच्छा समझ । और बहुत मत हंस, क्योंकि सचमुच ज्यादा हंसने से दिल सरुत होजाता है ।” —तिरनिजी

“ताक़तवर वह नहीं है जो दूसरों को नीचे गिरादे, हममें ताक़तवर वह है जो अपने गुस्से को काबू में रखता है।”

—बुख़ारी, मुसलिम

अब्दुल्लाह कहता है हम एक बार पैग़म्बर के साथ सफ़र कर रहे थे। हमने एक चिड़िया देखी जिसके साथ दो बच्चे थे। हमने बच्चों को पकड़ लिया। उनकी मां फड़फड़ाने लगी। पैग़म्बर ने हमसे आकर कहा—“इसके बच्चे छीनकर इसे किसने सताया ? इसके बच्चे इसे लौटा दो।”

एक जगह हमने चींटियों (दोमकों) का घर जला दिया था। पैग़म्बर ने देखकर पूछा, “यह किसने जलाया ?” हमने बताया कि हमने। पैग़म्बर ने कहा—“सिवाय उस अब्दुल्लाह के जो आग का मालिक है और किसी को हज़र नहीं है कि दूसरे को आग से सज़ा दे।”

—अबु दाऊद

एक आदमी मुहम्मद साहब के पास आया। उसके पास एक दरि में कुछ लिपटा हुआ था। उसने कहा—“ऐ पैग़म्बर ! मैं जंगल से आ रहा था। मैंने चिड़ियों के बच्चों की आवाज़ सुनी। कुछ बच्चों को पकड़ कर दरि में लपेट लिया। उनकी मां फड़फड़ाने लगी। मैंने दरि खोल दी। मां आकर अपने बच्चों में गिर गई। मैंने उसी में मां को भी लपेट लिया। ये सब इस दरि में हैं।” पैग़म्बर ने उसे हुकुम दिया—“अभी इसी दम

जाकर मां और उसके बच्चों दोनों को जहां से लाए हों ठीक वहाँ छोड़ आओ।” उसने ऐसा ही किया। —अबु दाऊद

एक बार एक आदमी किसी चिड़िया के घोंसले में से कुछ अंडे चुरा लाया। पैगम्बर ने उन्हें फौरन फिर उसी घोंसले में रखवा दिया। —बुखारी

एक जनाज़ा (मुर्दे की अरथी) पास से निकला। मुहम्मद साहब उसकी इज्जत के लिए खड़े हो गए। एक आदमी ने कहा—“यह तो एक यहूदी का जनाज़ा है।” उन्होंने जवाब दिया—“क्या यहूदी के जान नहीं होती ?”

—बुखारी, मुसन्निम

किसी ने पैगम्बर से कहा—“ मुशरिकों (एक अल्लाह के साथ दूसरे देवताओं के पूजने वालों) के खिलाफ अल्लाह से दुआ कीजिये और उन पर लानत भेजिये।” पैगम्बर ने जवाब दिया —“मुझे सिर्फ दया के लिये भेजा गया है, शाप देने (बददुआ देने) के लिये नहीं भेजा गया।” —मुसन्निम

“किसी भी नशे की चीज़ को काम में लाना नव गुनाहों का गुनाह है। —रज़ीन

मुहम्मद साहब की तलवार की मूठ पर ये शब्द खुदे हुए थे—“जो मेरे साथ बेइन्साफी करे उसे तू माफ़ कर दे, जो तुझे

अपने से अलग करदे उससे मेल कर, जो तेरे साथ बुराई करे उसके साथ तू भलाई कर, और हमेशा सच्ची बात कह चाहे वह तेरे ही खिलाफ क्यों न जाती हो ।”

—रज़ीन

सब जानदार परमात्मा का कुनवा हैं, और उन सबमें परमात्मा को सबसे प्यारा वह है, जो परमात्मा के इस कुनवे का भला करता है ।

—बैहक्की

मुहम्मद साहब ने एक बार कहा—मरने के बाद अल्लाह पूछेगा ऐ आदमी के बेटे ! मैं बीमार था और तू मुझे देखने नहीं आया !” आदमी कहेगा, “ऐ मेरे रब्ब ! मैं तुम्हें देखने के लिये कैसे आ सकता था, तू तो सारी दुनिया का मालिक है ?” अल्लाह फिर पूछेगा—“ऐ आदमी के बेटे ! मैंने तुम्हें खाना मांगा था और तूने मुझे खाना नहीं दिया !” आदमी कहेगा “ऐ मेरे रब्ब ! तू तो सारी दुनिया का मालिक है मैं तुम्हें कैसे खाना दे सकता था ?”

अल्लाह पूछेगा—“ऐ आदमी के बेटे ! मैंने तुम्हें पानी मांगा और तूने मुझे पानी नहीं दिया ।” आदमी कहेगा “ऐ मेरे रब्ब ! मैं तुम्हें कैसे पानी दे सकता था, तू तो सारी दुनिया का मालिक है ?” अल्लाह जवाब देगा—“क्या तुम्हें मालूम नहीं था कि मेरा एक बन्दा बीमार था ? और तू उस देखने नहीं गया । क्या तुम्हें यह मालूम नहीं था कि अगर तू उस देखने जाता तो सच-

मुच मुझे उसके पास पाता ? क्या तुम्हें मालूम नहीं था कि मेरे एक बन्दे ने तुम्हें से खाना मांगा था और तूने उसे खाना नहीं दिया ? क्या तू नहीं जानता था कि अगर तू उसे खाना देता तो मुझे उसके साथ देखता ? मेरे एक बन्दे ने तुम्हें से पानी मांगा और तूने उसे पानी नहीं दिया । अगर तू उसे पानी दे देता तो सचमुच मुझे उसके साथ पाता ।”

—मुसलिम

—

“अल्लाह के बन्दों में कुछ लोग ऐसे हैं जो न पैगम्बर हैं और न शहीद, लेकिन जिन्हे अल्लाह के सामने इज्जत प्राप्त देख कर पैगम्बर और शहीद भी डाह (हसद) करेंगे । ये वह लोग हैं जो सिर्फ अपने रिश्तेदारों से ही नहीं बल्कि सब आदमियों से प्रेम करते हैं । इन लोगों के चेहरे अल्लाह के नूर से चमकेंगे । दूसरे सब लोगों के लिये चाहे दूसरी दुनिया में कुछ भी डर या रंज हो या न हो इनके लिये न कोई डर होगा और न कोई रंज ।”

—अबु दाऊद

—

एक बार मुहम्मद साहब सऊर से लौटकर मदीने आए । वह सीधे अपनी बेटी फातमा से मिलने के लिए उसके घर गए । मकान में दो चीजें नई थी । एक रेशमी कपड़े का टुकड़ा परदे की तरह एक दरवाजे पर लटका हुआ था और फातमा के हाथों में चांदी के कड़े थे । देखते ही मुहम्मद साहब उलटे पांव लौट आए और मसजिद में बैठ कर रोने लगे । फातमा ने अपने बेटे

हसन को यह पूछने के लिए भेजा कि नाना इतनी जल्दी क्यों लौट गए। हसन ने जाकर नाना से वजह पूछी। जवाब मिला—“मैं यह देख कर शरमा गया कि मसजिद में लोग भूखे बैठे हों और मेरी लड़की चांदी के कड़े पहने और रेशम काम में लावे।” हसन ने मां से जाकर कह दिया। फ़ातमा ने तुरत कड़ों को तोड़कर उसी रेशम के टुकड़े में बांध कर बाप के पास भेज दिया। मुहम्मद साहब ने खुश होकर उन्हें बेचकर रोटियां मंगाई और गरीबों में बांट दीं और फिर फ़ातमा के पास जाकर कहा “अब तू सचमुच मेरी लड़की है।” —बुख़ारी

“अल्लाह रहीम (दयालु) है। वह रहम दिलों पर रहम करता है। जो लोग ज़मीन पर हैं उन पर तुम रहम करो और वह जो आसमान पर है तुम पर रहम करेगा।”

—अबु दाऊद, तिरमिज़ी

लड़ाई के दिनों में किसी ने आकर कहा कि “ऐ पैग़म्बर ! मैं (अल्लाह के लिये) लड़ाई में जाना चाहता हूँ।” मुहम्मद साहब ने उससे पूछा, “क्या तेरी मां जिन्दा है ?” उसने कहा “हां !” उन्होंने ने फिर पूछा—“क्या कोई और उसका पालने वाला है ?” उसने जवाब दिया—“नहीं !” मुहम्मद साहब ने कहा, “तो जा अपनी मां की सेवाकर क्यों कि सचमुच उसी के क़दमों के नीचे स्वर्ग है।” —नसाई

“अल्लाह ने मुझे हुकुम दिया है झुककर चलो और छोटे बनकर रहो, जिससे कोई दूसरे से ऊपर न उठे न दूसरे से बड़ा होने का घमण्ड करे। जिस किसी के दिल में रस्ती भर भी घमण्ड है, वह हरगिज़ बहिश्त में नहीं जा सकता। सब आदमी आदम की औलाद हैं और आदम खाक से पैदा हुआ था।”—

—अबु दाऊद, मुसलिम, तिरमिज़ी

अनस लिखता है कि मेरे सामने जब कभी किसी ने पैगम्बर से आकर यह शिकायत की कि उस आदमी ने मुझे जान या माल का नुकसान पहुंचाया है और मुझे बदला लेने की इजाजत दीजे, पैगम्बर ने हमेशा सब को यही जवाब दिया “भाफ कर दो !”

—अबु दाऊद, नसाई

“सब से बड़े गुनाह ये हैं—शिरक (यानी एक अल्लाह के साथ किसी दूसरे को उसके बराबर मानना), माता पिता का हुकुम न मानना, किसी जानदार को ईजा यानी दुःख पहुँचाना, झूठी कसम खाना और झूठी गवाही देना।”

—बुखारी, मुसलिम

“वे लोग हत्या से सब से ज्यादा बचते हैं, जो ईमान रखते हैं।”

—अबु दाऊद

“जो आदमी एक तरफ़ तो नमाज़ें पढ़ेगा, रोज़े रखेगा और ख़ैरात (दान) करेगा और दूसरी तरफ़ किसी को बुरा कहेगा या किसी पर झूठा इलज़ाम लगाएगा या बेईमानी करके किसी का माल खा जायगा या किसी का खून वहायेगा या किसी को दुख पहुँचायेगा, ऐसे आदमी की नमाज़ें उसके रोज़े और ख़ैरात कोई उसके काम न आवेंगे। उसने और जो कुछ भी अच्छे काम किये होंगे वह सब उसके हिसाब में से काट काट कर उन लोगों के हिसाब में जोड़ दिये जायेंगे, जिनके साथ उसने जुल्म किया है। और जब इससे भी काम न चलेगा तो उन पीड़ितों (मज़लूमों) ने पहले जितने पाप किये होंगे वे सब उनके हिसाबों में से काट काट कर उस आदमी के हिसाब में जोड़ दिये जावेंगे। यहां तक कि आख़ीर में वह नमाज़ें पढ़ता हुआ, रोज़े रखता हुआ और ख़ैरात करता हुआ भी नरक की धधकती हुई आग में जला दिया जायगा।”

—मुसलिम

“सचमुच अब्बाह ने तुम्हारे लिये अपनी मां का हुकुम न मानना, और अपनी लड़कियों को जिन्दा गाड़ देना मना किया है, और लालच को हराम करार दिया है।” —बुख़ारी, मुसलिम)

“मैं कहता हूँ कोई आदमी जो शान्त, नेक चलन और दूसरों के दुख में दुखी और सुख में सुखी रहता है, नरक में नहीं जा सकता।”

—तिरमिज़ी

“तुम मुझे अपनी तरफ से छै बातों का विश्वास दिलाओ और मैं तुम्हें बहिश्त का विश्वास दिलाता हूँ। एक जब बोलो सच, दूसरे जब वादा करो तो उसे पूरा करो, तीसरे किसी की अमानत में ख़यानत (बेईमानी) न करो। चौथे बदचलनी से बचो, पांचवें आखें हमेशा नीची रखो, और छठे किसी के साथ जोर ज़बरदस्ती न करो।”
—बेहकी

“एक दूसरे को सलाह दो कि अपनी बीवियों के साथ अच्छा बरताव करें। तुम्हारी उनके साथ शादी होती है लेकिन उन्हें सज़ा देने का तुम्हें कोई किसी तरह का भी हक़ नहीं है जब तक कि वे साफ़ साफ़ ग़न्दा काम न कर बैठें। वे नेक चलन रहें, तो उनके खिलाफ़ कोई बात न सोचो। और सचमुच जैसे तुम्हारी बीवियों के ऊपर तुम्हें हक़ है, वैसे ही तुम्हारी बीवियों को भी तुम्हारे ऊपर हक़ है।” —तिरमिज़ी

“जब कभी कोई आदमी किसी ग़ैर औरत के साथ अकेले में बैठता है, तो उन दोनों के बीच में, शैतान आ बैठता है।”
—तिरमिज़ी

“मुझे अपने लोगों के लिये जिन बातों का सब से ज्यादा डर है वह ऐशपरस्ती (भोग विलास) और बड़े बनने की चाह है। ऐशपरस्ती आदमी को सच्चाई से हटा देती है और बड़े बनने

की चाह में पड़कर आदमी दूसरी दुनिया को भूल जाता है। यह दुनिया रहने वाली नहीं है, और दूसरी दुनिया बहुत पास है, दोनों की अपनी अपनी औलाद है। अगर तुमसे हो सके तो तुम इस दुनिया की औलाद बन कर न रहो। सचमुच आज तुम कर्मभूमि (कमाई की दुनिया) में हो और कल इस कर्म भूमि से निकल कर परमात्मा के सामने अपने सब कामों का हिसाब देना होगा ।”

—बेहक्की, बुख़ारी

“इस दुनिया से मोह रखना (उसे अपनाना) ही तमाम पापों की जड़ है ।”

—अबु दाऊद

यही मुहम्मद साहब का बताया हुआ ‘इसलाम’ है, यही दुनिया के सब धर्मों का निचोड़ है ।

मुहम्मद साहब के उपदेशों और क़ुरान में दो बातें और हैं जिनके बारे में कुछ कहने की ज़रूरत है। एक ज़ेहाद और दूसरा चार शादियों की इजाज़त ।

दुनिया में शायद ही कभी किसी शब्द के बारे में इतनी भारी नासमझी रही हो जितनी ज़ेहाद शब्द के बारे में ।

‘ज़ेहाद’ शब्द तरह तरह से क़ुरान में सैंकड़ों बार आया है । लेकिन सारी किताब में एक जगह भी ‘ज़ेहाद’ लफ्ज़ लड़ाई के भाइनों में नहीं आया । अरबी में ‘ज़ेहाद’ शब्द के भाइने सिर्फ़ ‘ज़ेहद’ यानी कोशिश या चेष्टा करना है । धर्म में अल्लाह के

नाम पर किसी तरह की भी कोशिश, चेष्टा या 'अभिक्रम' करना अपने जान और माल से, गरीबों की सेवा और यतीमों का पालन करके, नमाज़ पढ़कर, रोज़े रखकर या दूसरों को खैरात देकर, अपने मन को क़ाबू में करके, अपने गुस्से को मारकर, सच्चे दीनदार बनने की कोशिश करना, दूसरों को उपदेश देकर उन्हें सच्चे दीन पर लाना, इन माइनो में और सिर्फ़ इन माइनो में ही क़ुरान के अन्दर 'जेहाद' शब्द आया है, और इसी जेहाद का हर आदमी को उपदेश दिया गया है। मक्के की बहुत सी आयतों में, यानी तब की जबकि अभी हथियारबन्द लड़ाई की इजाज़त भी नहीं दी गई थी, जगह जगह (इन्हीं माइनों में) जेहाद करने का उपदेश है और कई जगह हुक्म है "जेहाद करो और सन्न करो।" जिन मुसलमानों ने अपने धर्म को बचाने के लिये अपना घरबार छोड़ कर इथियोपिया के ईसाई बादशाह के यहां पनाह ली थी उनके इस काम को 'जेहाद' कहा गया है। खुद इस्लाम के पैगम्बर ने कहा है कि 'जेहादे अकबर' यानी 'सबसे बड़ा जेहाद' अपने नफ्स पर क़ाबू हासिल करना और अपने गुस्से को जीतना है।

क़ुरान में हथियारबन्द लड़ाई का भी कई जगह ज़िक्र है। लेकिन जहां कहीं भी लड़ाई का ज़िक्र आया है वहां 'जेहाद' नहीं, 'केताल' शब्द काम में आया है, जिसके माइन अरबी में "हथियारबन्द लड़ाई" के होते हैं, क़ुरान खास खान सूरतों में और दूसरे के हमले के जवाब में हथियार उठाने की भी

इजाजत देता है, लेकिन जिन सूरतों में और जिन कड़ी शर्तों के साथ इजाजत दी गई है उनका जिक्र ऊपर किया जा चुका है।

एक आदमी के एक साथ कई वीवियों का रिवाज उन दिनों यूरोप और एशिया के सब देशों में था। यूरोप के सब देशों में १५ वीं सदी तक एक आदमी के जितनी चाहे वीवियां होना क़ानून से ठीक माना जाता था। इस बीसवीं सदी में यूरोप और अमरीका में “मौरमन” नाम का ईसाई गिरोह है जो एक सदी से कुछ ऊपर हुआ अमरीका में कायम हुआ था और जिसे, “हज़रत ईसामसीह और पिछले सन्तों का गिरोह” * कहा जाता है। इस गिरोह की धर्म की किताब ‘बुक आफ़ मौरमन’ में जो इलहामी (ईश्वरीय) मानी जाती है इस असूल का यानी एक से ज़्यादा वीवियों का खुला जिक्र आता है। अमरीका की यूटाह स्टेट और ग्रेट साल्ट लेक में अभी तक इस गिरोह के लोगों की बढ़ती हुई और खुशहाल आवा-दियां हैं। इस गिरोह के दूसरे गुरु विडेम यंग के सन् १८७७ में मरते वक्त १७ वीवियां थीं। यूरोप में भी कई जगह इस गिरोह के लोग अभी तक बढ़ रहे हैं और कई कई शादियां करते हैं। सन् १९३३ में सिर्फ़ इंगलिस्तान में उनके ८२ गिरजे थे। कई देशों में, सन् १८६० के बाद से, उनके इस रिवाज के खिलाफ़

क़ानून पास हुए हैं। लेकिन अमरीका तक में अभी तक उनका यह रिवाज मिट नहीं सका।

हिन्दुस्तान में जिन हिन्दू धर्मशास्त्रों से कचहरियों के अन्दर हिन्दू रिवाज का फैसला किया जाता है उनमें एक आदमी के एक साथ जितनी चाहे बीवियां आज तक ठीक मानी जाती हैं। मुहम्मद साहब ने इस पुराने रिवाज को एक हद के अन्दर बांध दिया और एक आदमी के चार से ज्यादा बीवियों को हमेशा के लिये मना कर दिया।

इसके अलावा वह ज़माना अब में आए दिन की लड़ाइयों का ज़माना था। मर्दों की तादाद घटती जा रही थी। बेवाओं और यतीमों की तादाद बढ़ती जा रही थी। और उनके गुज़र बसर का कोई न कोई ऐसा इन्तज़ाम करना ज़रूरी था जो उस ज़माने की हालत में ठीक हो। क़ुरान की जिन आयतों में चार शादियों तक की इजाज़त है वह यह हैं—

“और अगर तुम्हें इस बात का डर है कि तुम बिना इसके यतीमों के साथ इन्साफ़ न कर सकोगे तो जो औरतें तुम्हें ठीक मालूम हों उनमें से दो के, तीन के, या हद चार के साथ शादी कर लो। लेकिन अगर तुम्हें यह डर हो कि तुम उन सबके साथ एकसा इन्साफ़ का बर्ताव न कर सकोगे तो फिर सिर्फ़ एक के साथ शादी करो, या जिनके साथ कर चुके हो सो कर चुके, यह तुम्हारे लिए इबादात अल्ला है जिससे तुम नेकी के सीधे रास्ते से न हिलोगे।” [४-३]

“और अगर तुम चाहो तब भी तुम्हारी ताक़त में यह नहीं है कि तुम सब वीवियों के साथ एकसा बर्ताव कर सको।” [४-१२९]

पहली आयत ओहद की लड़ाई के ठीक बाद की है। इन आयतों से यह भी ज़ाहिर है कि क़ुरान आमतौर पर एक आदमी के लिये एक ही वीवी के रिवाज को ठीक समझता है।

मुहम्मद साहब इस बात की काफी कोशिश करते रहते थे कि लोग उनकी हर बात को ही अटल न मान बैठें।

एक बार मदीने में चले जा रहे थे। रास्ते में लोग खजूर के दरख़्तों की क़लमें लगा रहे थे। मुहम्मद साहब क़लम लगाना न जानते थे। उन्होंने देखकर कहा “शायद अच्छा हो अगर तुम इन दरख़्तों को ऐसा ही बढ़ने दो।” लोगों ने उनकी राय मानली। जब वक्त़ आया तो उन दरख़्तों पर फल बहुत ही कम आए। मुहम्मद साहब से कहा गया। उन्होंने जवाब दिया—“मैं तुम्हारी तरह सिर्फ़ एक आदमी हूँ, जब मैं तुमसे धर्म के मामले की बात कहूँ तो उसे मान लो, और जब मैं धर्म के अलावा किसी और मामले की बात कहूँ, तो तुम अपनी राय से काम लो, हर बात में मेरी ही राय सही मत मानो। मैं भी तो सिर्फ़ एक आदमी ही हूँ।” —मुसलिम

मक्के में, मदीने के सबसे पहले मुसलमानों से ‘अक़बह का वादा’ के नाम से जो वादा कराया गया था उसमें यह साफ़

शब्द थे—“हम किसी ऐसी बात में जो ‘मालूम (ठीक जंचने वाली] होगी पैगम्बर के हुक्म को न तोड़ेंगे।”

पहले मुहम्मद साहब ने कुरान और अपने वाक्की सब उपदेशों को एक दूसरे से अलग कर दिया। सिर्फ कुरान ‘ईश्वर’ का है। और सब सिर्फ ‘एक आदमी की राय’ है। “इस किताब की कुछ आयतें ‘मोहकमात’ अटल हुक्म हैं, वही इस किताब की असल यानी बुनियाद हैं। और वाक्की आयतें ‘मुतशाबहात’ [मिनाल या उपमा के तौर पर] हैं। जिन लोगो के दिलों में देढ़ापन है वे उसी हिस्से पर चलते हैं जो मिसाल या उपमा के तौर पर है, उसके माइने निकालते फिरते हैं और लोगों में ‘फितना’ या झगड़े खड़े कर देते हैं।” [३-६] कुरान कहता है “हर ज़माने के लिये किताबें हैं, खुदा जिसको चाहता है मनमूछ [रह] कर देता है और जिसको चाहता है कायम रखता है और इन सब धर्म की किताबों की माँ यानी असल किताब उसी अल्लाह के पास है।” [१३-३८, ३९]

एक ऐसी हदीस में जिसे सब सच्चा मानते हैं [कुदसी] लिखा है कि मुहम्मद साहब ने खुद अपने ज़माने के ईरानी और यूनानी मुसलमानों को अपनी अपनी बोली में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त दी थी। वह सिर्फ ऊपरी रस्मों को चिपटे रहने की तरफ से लोगों को बार बार आगाह करते रहने थे। एक बार मुहम्मद साहब ने कहा था—

“सचमुच अब तुम लोग एक ऐसे ज़माने में रह रहे हो कि जो हिदायतें तुम्हें दी जा रही हैं उनमें से जो आदमी इस वक्त दसवें हिस्से को भी तोड़ेगा वह बरबाद हो जायगा, लेकिन इसके बाद ऐसा ज़माना आयगा कि उस वक्त के लोगों में से जो इस वक्त की हिदायतों में से दसवें हिस्से पर भी अमल करेगा वह निजात [मुक्ति] पाएगा।” —तिरमिज़ी

मुहम्मद साहब अपने ईश्वर से जिस तरह की प्रार्थनाएं किया करते थे उनसे उनके विचारों और विश्वासों की खासी तस्वीर हमारे सामने आ जाती है। नमाज़ में खड़े होने के वक्त वह कहते थे—

“एक सच के खोजी (हनीफ़) की हैसियत से मैं उसकी तरफ़ मुंह करता हूं जिसने आसमान और ज़मीन को बनाया। मैं एक अल्लाह के साथ किसी दूसरे को नहीं जोड़ता। सचमुच मेरी दुआ (प्रार्थना), मेरी वन्दगी (भक्ति), मेरी ज़िन्दगी और मेरी मौत सब अल्लाह के लिये हैं। वही सारी दुनिया का मालिक है। उसका कोई साम्नी नहीं। मैं उसी का वन्दा हूं। मैं मुसलिम (जिसने अपना सब कुछ ईश्वर पर छोड़ दिया हो) हूं। ऐ अल्लाह ! तू ही हमारा बादशाह है। तेरे सिवाय हमें किसी की पूजा नहीं करनी चाहिये। तू मेरा मालिक है और मैं तेरा वन्दा हूं। तू मेरे सब गुनाहों को माफ़ करदे। सचमुच तेरे सिवाय कोई दूसरा गुनाहों को माफ़ नहीं कर सकता। मुझे ऐसी हिदायत कर कि मेरा चाल चलन सबसे अच्छा हो। तेरे सिवाय कोई

ऐसी हिदायत नहीं कर सकता । तेरे सिवाय कोई मेरे चलन की बुराइयों को दूर नहीं कर सकता । मैं तेरे सामने हूं, तेरी सेवा में हाज़िर हूं । सब भलाई तेरे ही हाथों में है, और बुराई से तुझसे कोई वास्ता नहीं । मैं तेरे पास से आया हूं और तेरे पास ही लौटकर मुझे जाना है । तेरी ही सब शान है और तेरी ही सब बड़ाई । मैं तुझसे माफ़ी मागता हूं और तेरे सामने तोबा करता हूं !”

सामने झुकने (रुकु) के वक्त वह कहते थे—

“ऐ अल्लाह ! मैं तुझे नमस्कार करता हूं, तुझ पर ही मेरा विश्वास है । मैं अपने को तेरे ही सपुर्द करता हूं । मेरे कान और मेरी आख, मेरा मेजा, मेरी हड्डियां, मेरे पट्टे सब तेरी तुच्छ भेंट हैं !”

फिर जब सिर उठाते तो कहते—

“ऐ अल्लाह ! हमारे मालिक ! आसमान और ज़मीन और उनके बीच की सब चीज़ें और जो कुछ तू इसके बाद पैदा करे सब तेरी तारीफ़ से भर जाय !”

फिर सिजदे के वक्त कहते—

“ऐ अल्लाह ! मैं तेरी पूजा करता हूं, तुझ पर ही मेरा भरोसा है, मैं अपने को तेरे ही सपुर्द करता हूं । मेरा मुंह उसका तारीफ़ करता है जिसने मुझे बनाया, मुझे रूप दिया, मेरे आख, कान बनाए, अल्लाह की शान है, वही सबसे अच्छा बनाने वाला है !”

आखीर में कहते—

“ऐ अल्लाह ! मेरे सब गुनाहों को माफ़ कर जो मैंने अब तक किये हैं उन्हें भी, और जो मुझसे आगे हो जाय उन्हें भी, जो गुनाह

मैंने छिपाकर किये हों वह भी, और जिस बात में भी मैंने हद को तोड़ा है, और और जो जो बातें मुझसे ज्यादा तुझे मुझमें दिखाई देती हों। तू ही सबका शुरू, तू ही सबका आख़ीर है। तेरे सिवाय कोई पूजा के लायक नहीं !”

—मुसलिम

एक दूसरी बार की मुहम्मद साहब की प्रार्थना है—

“ऐ अल्लाह ! मेरे दिल को पाक कर, उसमें कपट न रहे ! मेरे कामों को पाक कर, उनमें दिखावा न हो ! मेरी ज़बान को पाक कर, वह कभी झूठ न बोले ! मेरी आंखों को पाक कर, उनमें छल न हो ! सचमुच आंखों के अन्दर के छल को और जो कुछ लोगों के सीनों (दिलों) में छिपा रहता है उस सबको तू जानता है !”

यूरोप वालों की कुछ रायें

मशहूर अंगरेज़ फ़िलॉसफ़र कारलाइल मुहम्मद साहब के बारे में लिखता है—

“वह प्रकृति (.कुदरत) की बड़ी गोद से निकला हुआ ज़िन्दगी का एक ज़बरदस्त दहकता हुआ अंगारा था जो दुनियाँ के बनाने वाले के हुकुम से दुनिया को रोशन करने और जगाने के लिये आया था !”

• और आगे चलकर कारलाइल लिखता है—

“वह शुरू से ख़ामोश, लेकिन महान था। वह उन लोगों में से था जो धुन के पक्के और लगन के सच्चे हुए बिना रह नहीं सकते। इस तरह के आदमियों को खुद प्रकृति (.कुदरत) शुरू में सजा बनाती है। दूसरे लोग रस्मों, रिवाजों और तुनी मुनाई बातों पर चलते रहते हैं। इन्हीं से उनकी तसल्ली हो जाती है। लेकिन इस तरह के आदमी की आत्मा रस्म रिवाजों के परदे के पीछे न छिप सकती थी। उसने अपनी पूरी आत्मा के साथ चीज़ों की असलीयत के जानने की कोशिश की। उसने इस ज़िन्दगी के ज़बरदस्त रहस्य (राज) में,

उसके डरावने पहलुओं और उसकी चमक दमक, दोनों को पूरी तरह जानने की कोशिश की। कोई सुनी सुनाई बात उसकी आत्मा, उसके अस्तित्व यानी उसकी 'हस्ती' को दवा न सकती थी। इसमें कोई शक नहीं कि इस तरह की सच्ची लगनवाले आदमी में ईश्वर का कुछ खास अंश (अनसर) होता है। इस तरह के आदमी के मुंह से निकले हुए शब्द सीधे कुदरत (प्रकृति) के दिल से निकले हुए और कुदरत ही की आवाज़ होते हैं। लोग उसे इस तरह सुनते हैं और सुनेंगे जिस तरह किसी दूसरे की बात नहीं सुन सकते। उसके शब्दों के सामने और सब सिर्फ हवा है। शुरू से ही हज़ारों तरह के विचार, यात्राओं में और सफ़र में, इस आदमी के दिल में पैदा होते रहे। मैं क्या हूँ? यह अथाह चीज़, जिसे लोग दुनिया कहते हैं, जिसमें मैं रहता हूँ, क्या है? ज़िन्दगी क्या चीज़ है? मौत क्या चीज़ है? मैं क्या मानूँ? मैं क्या करूँ? हिरा पहाड़ और सिनाई पर्वत की सूनी चट्टानों ने, या सुनसान रेगिस्तानों ने कोई जवाब न दिया। उस बड़े आसमान ने जो सिर के ऊपर खामोश फैला हुआ था और जिसके नीलेपन पर सितारे जगमगा रहे थे कोई जवाब न दिया। कहीं से कोई जवाब न मिला। आख़ीर में उसकी अपनी आत्मा को, और परमेश्वर की जो आवाज़ या इलहाम उस आत्मा के अन्दर काम कर रहा था उसे जवाब देना पड़ा।^{११*}

* Heroes, Heroworship and the Heroic in History, Sec II

मुहम्मद साहब की कोशिशों और कामयाबियों को बयान करते हुए एक दूसरा विद्वान लिखता है—

“जो बुराइयां मुहम्मद साहब के ज़माने में अरब में सवने ज़्यादा ली हुई थीं, जिन्हें कुरान में ज़ोरों के साथ बुरा कहा गया है और उनसे कतई रोका गया है, वे ये थीं—शराब पीना, बदचलनी करना, क साथ जितनी चाहे वीबियां रखना, लड़कियों को मार डालना, तहाशा जुआ खेलना, सद खाना और उसके बहाने दूसरों को लूटना, और दू टोने जैसी चीज़ों में अन्धा विश्वास । मुहम्मद साहब की कोशिशों से इन बुरे रिवाजों में से कुछ बिलकुल मिट गए और बाक़ी कम हो गए । जिससे अरबों के चाल चलन में बहुत बड़ा सुधार हुआ और बहुत बड़ी तरक्की हुई । यह मुहम्मद साहब के जोश और उनके असर दोनों का एक अजीब और ज़बरदस्त सबूत है । लड़कियों का दंगरा और शराबखोरी का बिल्कुल बन्द हो जाना मुहम्मद साहब के काम की सबसे ज़बरदस्त जाँत है ।”

“अपनी क़ौम का मुहम्मद साहब ने बहुत ही बड़ा फ़ायदा और उस पर बड़ा अहसान किया । वह एक ऐने मुल्क में पैदा हुए थे जहाँ न कोई ढङ्ग की हुकूमत थी, न कोई ऐसा मज़हब जिसे अक़ल मान ले और न किसी तरह का सदाचार या नेकचलनी । इन तीनों का वहा पता भी न था । मुहम्मद साहब ने इन तीनों को फ़ायदा दिया । अपनी गैरमानूली दूक के केवल एक ही बार में उन्होंने अरब देश वालों की हुकूमत, उनके धर्म और उनके चलन तीनों से एक नया सुधार दिया । बहुत से अलग अलग बिखरे हुए क़बीलों का जगह

उन्होंने एक मिली हुई क्रौम छोड़ी। बहुत से देवी देवताओं और खुदाओं में अन्धे विश्वास की जगह उन्होंने सबके मालिक, सब कुछ कर सकने वाले एक ऐसे दयालु परमात्मा में विश्वास पैदा कर दिया जिसे अक़ल समझ सकती थी। उन्होंने लोगों को यह बताया कि परमात्मा हमें हरदम देखता रहता है और हमारे अच्छे और बुरे सब कामों का ठीक ठीक फल देता है। इस विश्वास के सहारे ही उन्होंने लोगों को ठीक ठीक ज़िन्दगी बसर करना सिखा दिया।” *

मुहम्मद साहब के उपदेश ईश्वर का इलहाम या ईश्वर का सन्देश था, इस बारे में एक और विद्वान लिखता है—

“सारी भलाई का सोता सचमुच एक परमेश्वर है! अगर उस परमेश्वर की तरफ़ के इलहाम नाम की कोई चीज़ होती है तो जिस धर्म का मुहम्मद साहब ने उपदेश दिया वह सिर्फ़ दूसरों की नज़ल से या दूसरों की अच्छी अच्छी बातें चुनकर ही नहीं बना लिया गया था, वह सचमुच इलहामी (inspired या ईश्वरीय) था। मैं अपने छोटेपन को ख़ूब समझते हुए यह कहने की हिम्मत करता हूँ कि अगर अपने को मिटा देना, नेकनीयती और लगन, खुद अपने मिशन में अटल विश्वास, अपने ज़माने की ज़ुराइयों और भूलों को ठीक ठीक समझ लेने की ग़ैर मामूली ताक़त, और उन्हें दूर करने के अच्छे से अच्छे तरीक़ों को समझ लेना और उन्हें काम में ला सकना, अगर

* W R W. Stephen's, Christianity and Islam, The Bible and the Quran, PP. 112 and 129.

ये सब बातें इलहाम की ऐसी बाहरी अलामतें हैं जिन्हें सब देख सकें तो इसमें कोई शक नहीं मुहम्मद साहब का मिशन इलहामी था ।”*

एक दूसरा विद्वान लिखता है—

“आज तक किसी भी ज़माने में, गहरे से गहरे माइनों में जो सच्ची से सच्ची और ज़्यादाह से ज़्यादाह लगन वाली आत्माएं पैदा हुई हैं मुहम्मद उनमें से एक था । वह सिर्फ़ एक महापुरुष ही न था बल्कि इनसानी क्रौम ने जो महान से महान—यानी सच्चे से सच्चे आदमी कभी भी पैदा किये हैं, उनमें से एक था । महान, पैगम्बर की हैसियत से भी और देशभक्त और राजनीति (सियासत) जानने वाले की हैसियत ने भी । वह दुनिया और दीन दोनों का सुधारने और बढ़ाने वाला था, जिसने एक बड़ी क्रौम बनाई, एक उमने बढ़ाई सल्तनत (साम्राज्य) बनाई, और इन सबसे बढ़कर एक और भी ज़्यादाह बढ़ा धर्म कायम किया ।..... वह वह आदमी था जि-
आइन्दा जब कभी किसी ज़माने में दुनिया के लोग, जो आजकल मज़हब के नाम पर तरह तरह के अलग अलग गिरोह बनाए बैठे हैं, इन गिरोहबन्दियों से बाहर निकल कर एक ज़्यादाह व्यापक (आलमगीर) और ज़्यादाह समझ में आने वाले मानव धर्म (मज़हबे इन्सानियत) को मानना शुरू कर देंगे, उस वक्त वह (मुहम्मद) भी आज ने कहीं ज़्यादाह इज़्ज़त के साथ याद किया

* Dr Leitner, quoted by M A Fazl in the 'Life of Mohammed', P. 219-220

जावेगा । सचमुच मुहम्मद बड़े से बड़े आदमियों में भी बहुत बड़ा था ।”*

आखीर में एक और विद्वान लिखता है—

“मुहम्मद साहब को एक साथ तीन चीज़ों के क़ायम करने की खुशक्रिस्मती मिली, एक क़ौम (नेशन), एक राज (स्टेट) और एक धर्म । इतिहास में कहीं इस तरह की कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती ।”†

मुहम्मद साहब के मरने के सौ बरस के बाद अरबों का साम्राज्य जितना बड़ा और जितनी दूर तक फैला हुआ था रोम का मशहूर साम्राज्य अपने अच्छे से अच्छे दिनों में कभी न उतना बड़ा हुआ न उतनी दूर तक फैला । %

२० वीं सदी ईसवी के शुरू में दुनिया में ३० करोड़ से ऊपर इन्सान इसलाम धर्म के मानने वाले थे ।

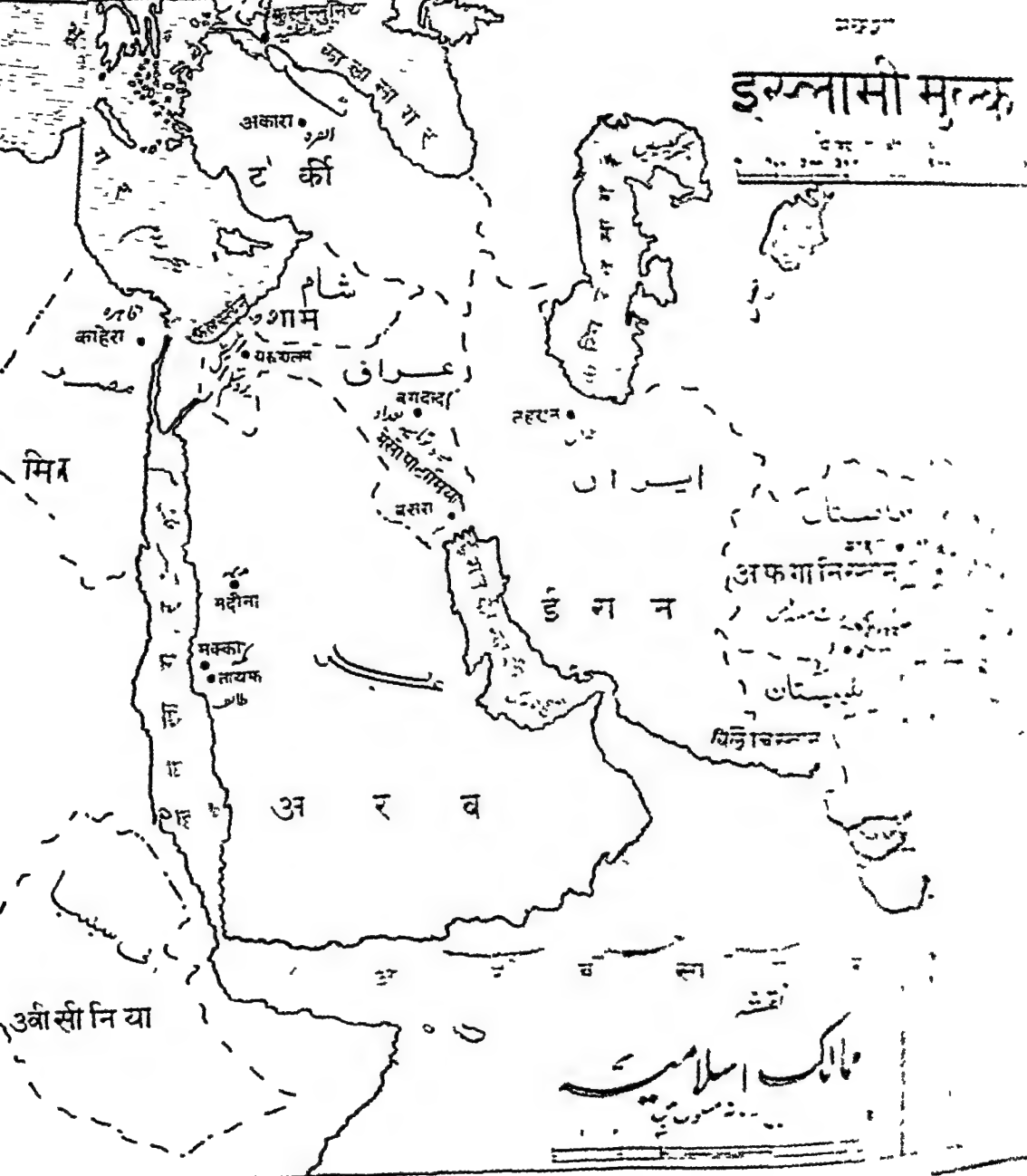
* Islam, Her Moral and Spiritual Value, by Major A G Leonard, PP. 21 and 109

† Mohammad and Mohammadanism, by Bosworth Smith, P 340.

% The Preaching of Islam, T. W. Arnold, P 2.

इस्लामी मुल्क

दूर - २०
१०० १०० १००



महाक इस्लाम

कुछ किताबें जिनसे मदद ली गई है

- १—The Holy Quran, Arabic Text with English, Translation and commentary by Maulvi Muhammad Ali M A LL B
- २—The Quran, with a Preliminary Discourse, by George Sale
- ३—The Quran in English, with Arabic Text, by Muza Abul Fazl
- ४—तर्जुमानुल कुरान-मौलाना अबुल कलाम आजाद (उर्दू)
- ५—Selections from the Quran, by E W Lane
- ६—The Wisdom of the Quran, by General Mahmud Muhtar Pasha
- ७—The Quran, by J M Redwell
- ८—The Quran by E H Palmer
- ९—Islam: Her Moral and Spiritual Value, by Major Arthur Glyn Leonard
- १०—The Spirit of Islam, by Syed Amir Ali M A C I E

- ११—The Preaching of Islam, by T. W Arnold
- १२—Mohammed and Mohammadanism, by R Bosworth Smith, M. A.
- १३—The Life of Muhammad, by Mirza Abul Fazl
- १४—Sayings of the Prophet Muhammad, by Mirza Abul Fazal.
- १५—Higgins, an apology for Muhmmad, Edited by Mirza Abul Fazl with an Introduction.
- १६—Essayes on the Life of Muhammad etc by Sir Syed Ahmad.
- १७—Heroes, Hero-worship, and the Heroic in History, by Thomas Carlyle
- १८—A Critical Exposition of the Popular 'Jihad', by Maulvi Chiragh Ali
- १९—The Doctrine of Sin, by Rev. Gardner.
- २०—The Quranic Doctrine of Sin, by Rev Gardner.
- २१—The Quranic Doctrine of Salvation, by Rev. W. R W. Gardner M A
- २२—The Speeches and Table Talk on the Prophet Muhammad, by Stanley Lane Pool.
- २३—The Ideal Prophet, by Khwaja Kamaluddin

- २४—A History of the Intellectual Development of Europe, by J W Draper.
- २५—सीरतुन्नबी—शिवली (उर्दू)
- २६—Life of Mohammet, by Sir William Muir.
- २७—A Description of the East and Other Countries, by Richard Pococke, Bishop of Meath.
- २८—तफसीरुल कुरान-सैयद अहमद खां (उर्दू)
- २९—Christianity and Islam: The Bible and the Quran, by W R W. Stephens
- ३०—Life of Muhammad, by Washington Irving.
- ३१—मजाकुल आरतीन—(उर्दू तरजुमा अहियाय उलमुदीन-इमाम शिवाली)
- ३२—मसनवी—तेजाना रुम [फारसी]
- ३३—गुलशने राज [फारसी]

